* श्री जिनाय नमः *

जिन ज्ञान प्रकाश

प्रकाशकः—

जशकरण सुजानमल चिरडालिया।

१७।१८, आरमेनियन स्ट्रीट, कलकत्ता।

मिलने का पता :—

मुकन्दचन्द जशकरण चिरडालिया।

मु० सरदारशहर (राजपुताना)

नं० १६, सीनागोग ष्ट्रीट, (हमामगली) कलकत्ता के

"ओसवाल प्रेस" मे

बाबू महालचन्द बयेद द्वारा मुद्रित।

वीर निर्वाणाब्द २४५७

द्वितीयावृत्ति ३०००] [अमूल्य

मिलने का पता :—

(१) मुकन्दचन्द जशकरण चिण्डालिया।

मु० सरदारशहर (राजपुताना)

(२) जशकरण सुजानमल चिण्डालिया।

३७।३८ आरमेनियन स्ट्रीट, कलकत्ता।



विषय-सूची

संख्या	विषय	पृष्ठांक

ढाल देशी गजल कव्वाली ।

जिनेश्वर धर्म के वक्ता, सुणो यह प्रार्थना मेरी ॥ ए आंकड़ी ॥ आप हो मुक्ति के दाता, सदा सन्मार्ग के ज्ञाता । सर्व जीवों के हो त्राता, कटाते कर्म की बेड़ी ॥ जि० ॥ १ ॥ शरण जो आप के आता, वोही आनन्द को पाता । मेट संसार का खाता, चढ़ाते मोक्ष की पेड़ी ॥ २ ॥ जो धरता आप को दिल में, समरता नाम पल पल में । रुले ना वोह यह भव जल में, मिटे उसकी सकल फेरी ॥ ३ ॥ करें कर जोड़ के अरजी, करो स्वीकार गणिवरजी । करावो पूर्ण कर मरजी, प्रभु एक मास चदेरी ॥४॥ सूर्य्य शुभकरण तुम आकर, चरण मे हर्ष चित लाकर । विनय संयुक्त गुण गाकर, बजावें हाजरी तेरी ॥ जिनेश्वर धर्म के वक्ता सुणो यह प्रार्थना मेरी ॥ ५ ॥

श्री आदिनाथ स्तुति ।

समरो नित आदिनाथ अवतार । आनन्द करण हरण अघ रिपु कुं, तरण भवोदधि पार ॥ स० ॥ ए आंकड़ी ॥

आदि करण जिन मुनिवर तुम हो, जुगलिया धर्म निवार ॥ स० ॥ जन्मत वार सार वय जग को, लहत आगम अधिकार ॥ स० ॥ १ ॥ तुम गुन गान जान जिम बालक, चन्द बिम्ब कर धार ॥ स० ॥ धरत ध्यान अघ हरत पुराने, ज्यूं उदय रवि अन्धकार ॥ स० ॥२॥ समवशरण रचना मन मोहत, सोहत्र जगत् मझार ॥ स० ॥ रूप अनुपम नयणे निरखै, धन धन ते अवतार ॥ स० ॥ ३ ॥ नाम रूपी माला उर पहिरण, जेह पुन्य श्रेयकार ॥ स० ॥ तुम नामे मन वांछित पामे, युग वसु थी छुटकार ॥ स० ॥ ४ ॥ तुम सम नहीं कोई बीजो तारक, मारक विषय विकार ॥ स० ॥ खद्योत जोत रविवत् जाणे, क्षुद्र मति अविचार ॥ स० ॥ ५ ॥ अतिशय धारक तूं जश नामी, अशरण शरण दातार ॥ स० ॥ तुम गुण सिन्धू मुझ मति विन्दू, कहत लहत किम पार ॥ स० ॥ ६ ॥ कर वसु निधि मही भाद्रव मासे, कलिकत्ता केन्द्र व्यापार ॥ स० ॥ नगराज धुर जिन गुन स्तुति, करी धर हर्ष अपार ॥ स० ॥ ७ ॥

॥ अथ अंजना सती को रास ॥

॥ दोहा ॥

अंजना मोटी सती, पाल्यो शील रसाल।
अशुभ कर्म उदय हुआ, आयो अणहुंतो आल ॥
शील पाल्यो तिण किण विधे, किण विध आयो आल।
हिवे धुरसूं उत्पति कहूं, सुणज्यो सुरत संभाल ॥१॥

॥ ढाल १ ली ॥

(देशी—फड़खानी)

महिंद्रपुरी जग जाणिये, राजा हो महिंद्र वसे तिण ठामक। तसु पटराणी छे रूवड़ी, मानवेगा राणी तेहनो नामक ॥ सौ पुत्र राणी तिण जनमिया, ते रूप मे रूवड़ा छे अभिरामक। त्यांरे केड़े जाई एक बालिका, अञ्जना कुंवरी छे तेहनो नामक ॥ सती रे शिरोमणी अञ्जना ॥ १ ॥ मात पिता ने बहालो घणी, बंधव सगलां ने गमती अत्यन्तक। रूप छे रलियामणी, नैण दीठां घणो हरष धरंतक ॥ सज्जन सगा ने सुहामणी, सखी सहेलियां मे रही नित खेलक। विद्या

भणी सुख अति घणी, दिन दिन बधे जिम चंपक वेलक ॥ स० ॥ २ ॥ अञ्जना कुमरी मोटी हुई, चिंतवी ने राय चित्त मझारक। मके वेग प्रधान तेड़ावियो, कहे अञ्जना वर तणो करो रे विचारक ॥ जब एक कहे रावण ने दीजिये, एक कहे दीजे मेघ कुमारक। ते पुत्र छे राजा रावण तणो, तिणरो जीवन रूप घणो श्रीकारक ॥ स० ॥ ३ ॥ जब एक कहे तुम सांभलो, वरष अठारमे मेघकुमारक। चारित्र लेसी वैराग सूं, वरष छावीस में जासी मोक्ष मझारक ॥ तो कन्या ने सुख किहां थकी, सबलाई कर देखो मनमे विचारक। मेघ कुमार ने द्यो मती, और विचारो कोई राज कुमारक ॥ स० ॥ ४ ॥ रतनपुरी तणो राजवी, राय प्रह्लाद विद्याधर नामक। तेहनो पुत्र दीपतो, पवनकुमार छे तेहनो नामक ॥ अञ्जन ने वर योग छे, ए राजा कियो वचन प्रमाणक। पिछे दूत मेल्यो तिण नगरी में, सगपण कीधो छे मोटे मडाणक ॥ स० ॥ ५ ॥ रूप ने गुण अञ्जना तणो, परगट हुवो छे लोक मे नामक। ते पवन कुमार पिण सांभल्यो, जब प्रहस्त मन्त्री ने कहे छे आमक ॥ कहे आपा जावां रूप फेर ने, जोवा ने अञ्जना तणो रूप शिणगारक ॥ पीछे मतो करी दोनूं निसऱ्या, ते आय ऊभा महेल तले तिण वारक ॥ स०

॥ ६ ॥ हिवे पवनजी निरखे छे अञ्जना, प्रहस्त नीचो घाली रह्यो दिष्टक । रूप मे जाणै देवांगणां, वाणी बोले जाणै कोयल वाणक । चपक वरण चतुर घणी, आंख्यां जाणै मृगनैन समानक ॥ स० ॥ ७ ॥ अञ्जना बेठी सिंघासणे, दोनूं पासे अनेक सखियां तणा वृन्दक । वस्त्र आभूषण अंगे धर्या । शोभ रही जाणे पूनम चन्दक ॥ हिवे वसत माला इम उच्चरै, बाई ने जोग जोड़ो मिलो श्रीकारक । जेहवो पवनजी जाणिये, तेहवी पामी छे अञ्जना नारक ॥ स० ॥८॥ हिवे बोजी सखी इम उच्चरै, पहला तो वर मन चिन्तव्यो जेहक । तेहवा पवनजी वर नही, वरस अठारह मे चारित्र लेहक । पांच इन्द्री ने जीपतो, वरस छावीस मे पामसी मोक्षक ॥ तिण कारण वर वर्जियो, कन्या ने वर तणो जाणियो दोषक ॥ स० ॥ ९ ॥ हिवे अञ्जना सुण इम उच्चरै, बाई धन २ ते नर जीं अवतारक । कर्म करणी करी काटसे, वेगा हो जासी सुगति सभारक ॥ गुण गाई जे तिण पुरुष ना, पवनजी सुणी ने धर्यो अति द्वेषक । आतो रे नार कुलखणी, मनमांही उपनो क्रोध विशेषक ॥ स० ॥१०॥ हिवे पवनजी मन मांहि चिन्तवे, आ रूप मे रुवड़ी अत्यन्त वखाणक । मन मांहि मेली रे पापणी, चित्त चोखो नहीं एक ठिकाणक ॥ पुरुष

पराया सूं मन करै, तो हिवे करणो कौन उपायक। जो छोडूं तो एहने वर घणा, परणी ने परछक ज्यूं दुःख थायक ॥ स० ॥ ११ ॥

॥ दोहा ॥

इम चिन्तव तिहां पवनजी, पाछा चाल्या ताम।
आया नगरी आपरी, भोगवै सुख अभिराम ॥१२॥

॥ ढाल ॥

हिवे मात पिता अञ्जना तणा, लगन लिखाविया मोटे मंडाणक। विवाह करवा अञ्जना तणो, रतनपुरी वेग मेलियो जाणक ॥ महोच्छव मांडियो अति घणो, बाज रह्या तिहां ढोल निशाणक। मंगल गावै छै गोरड़ी, उच्छव कर रह्या कोड़ कल्याणक ॥ स० ॥ १३ ॥ हिवे राय प्रह्लाद तेड़ाविया, जान मे जावो बड़ा बड़ा राजानक ॥ हय गय रथ सझिया घणा, नेहतस्या स्वजन ने दियो घणो सनमानक ॥ धन साथे दियो खरचवा, मोटै मण्डाण लेई चाल्या जानक। सामन्त दिया साथे घणां, जोधा सुभट सैन्या सावधानक ॥स० ॥ १४ ॥ हिवे वीन्द बणाव कियो घणो, गेहणा आभूषण पहरिया ताहिक। सखियां गावे रे सोहला, देवे आशीष केतुमती मातक ॥ लूण उतारै रे बैनड़ी, रूप

देख मन हरषित थायक। जाचक बोले बिरुदावली बहुविध, पवनजी परणवा जायक॥ स० ॥ १५॥ सैन्या सिणगारी चतुरङ्गिणी, गाजेजी अम्बर बाजेजी तूरक। स्वजन सगा मिलिया घणा, जान चाले जाणे गङ्गा नो पूरक॥ वर विद्याधर दीपतो, शोभ रह्यो तिणरो वदन सनूरक। चिहुं दिश साथे सेवक घणा, हाथ जोड़ी रह्या ऊभा हजूरक॥ स० ॥ १६॥ महिंद्रपुरी नेड़ा आविया, आई वधाई राजी हुवो रायक। दीधी वधामणी तेहने, हरखित हुई अञ्जना तणी मायक॥ आरती नो महोच्छव करै, महिन्द्र राजा मन हरष न मायक। स्वजन सगा मिलिया घणां। सैन्या लेई राजा साहमोजी जायक॥स०॥१७॥ महिन्द्र राजा साहमो आवियो ढोल दमामा ने घूरै निशाणक। राजा हो राणी सहु मिल्या, व्यापियो तिमर ने आंथम्यो भाणक॥ सुसरो सामेले आवियो, पवनजी देखने आनन्द थायक। धवल मङ्गल गावे गोरड़ी, लोक अञ्जना नो वर जोयवा जायक॥ स० ॥ १८॥ महिन्द्र राजा मोटा राजा भणी, अति घणो दियो आदर सनमानक। उच्छरंग मनमांहि अति घणो, भाव भगति सूं मिलियो राजानक॥ जान उतारी रे आगा ने, आपिया भोजन विविध पकवानक। कपूर सिखरण सांचवे, खादिम स्वादिम दिया घणां

मिष्टानक ॥ १९ ॥ हिवे पवनजी तोरण आविया, तो ही अञ्जना ऊपर घणो रे अभावक । नाम सुण्यां ही राजी नहीं, मूल नही मन तेहनी चावक ॥ धवल मङ्गल गावे गोरड़ी. पूरण सासु करै बहु भांतक । पिण मन मे न भावे पवन ने, ये तो परणे रे अञ्जना बालवा दाहक ॥ स० ॥ २० ॥ रूपा तणो रे मण्डप रच्यो, सोवन तणो मांडी तिहां वेहक । सोवन पाट मोत्यां जड़्यो, अञ्जना ने पवनजी बेठा छै तेहक ॥ हथ लेवे हाथ मेल्यो तिहां, नयण निहाले छै अञ्जना नारक । पिण पवन ने मूल गमे नहीं, द्वेष जागी पहिली बात विचारक ॥ स० ॥ २१ ॥ हिवे पवनजी परण ने उतस्या, कीधी पहरावणो अञ्जना नो तातक । गयवर आपिया अति घणा, ताजा तुरङ्ग दीधा विख्यातक । कनक रत्न बहु आपिया, आपी छै रूपा तणी बहु कोड़क । वसुत माला दासी आदि दे, पांच से दासियां सरीखी जोड़क ॥ स० ॥ २२ ॥ हिवे परणी ने रतनपुरी सचस्या, साहमो आयो तिहां प्रह्लाद रायक । अञ्जना मन हरषित थई, सासु सुसरा ना पूजिया पायक ॥ पांच सौ गांव राजा दिया, आप्या छै आभरण रतन बहु मोलक । आया छै बोद ने बोन्दणी, आया के तिहां बाजते ढोलक ॥ स० ॥ २३ ॥

॥ दोहा ॥

हिवे कितोक काल गया पिछे, आयो भेटणो राय ।
तिहां पवन रो द्वेष परगट हुवे, ते सुणज्यो चित्त लाय ॥

॥ ढाल ॥

पीहर थी आवी रे सुंखड़ी, वस्त्र आभरण आपिया तामक । वसन्तमाला ने देई करी, अजना मेलिया पवन रे पासक ॥ सुंखड़ी पवन खाधी नहीं, वस्त्र गहणा न पहरिया अङ्गक । अंजना सूं द्वेष आणने, वस्त्र गहणा दियां मातङ्गक ॥ स० ॥ २४ ॥ वसन्त माला विलखी थई, आय कही अंजना कने वातक । स्वामी रो आपां ऊपरे. हित न दीसे कोई तिलमातक ॥ अंजना आंख्यां आंसू झरे, मैं सूं चूकी छे भगति अनेकक । ये नर दीसे के निरमला, आपणे दीसे छे कर्म विशेषक ॥ स० ॥ २५ ॥ हिवे अंजना बैठी रे मालिये, पवनजी तुरी खिलावण जायक । आवतां जावतां निरखती, तिम तिम मन से हरषित थायक । पवनजी कोपि रे परजले, निजर दीठां सूल न सुहायक । नारी निहाले छे मो भणी, गोखे आडी दीनी भीत चिणायक ॥ स० ॥ २६ ॥ पांच सौ गांव पोते किया, माता पिता कहि सांभली पूतक । अंजना सती रे सुलखणी

बहू ने सूंपिये निज घर सूतक ॥ मोटा रे कुल तणी उपनी, राजा हो महिन्द तणी वहे लाजक। अंजना सूं आदर कीजिये, इम कहे केतुमती ने राय प्रह्लादक ॥ स० ॥ २७ ॥ बापरो आणो पाछो मेलियो, आवे आयो वले बड़ो वीरक। अंजना कहे नवी आवियें, मेल्या आभरण अद्भुत चीरक ॥ स्वामी रे मन मान्या नहीं, पीहर आय ने सूं करू बातक। इम कही बंधव मोकल्यो दुःख धरे घणो मायने तातक ॥ स० ॥२८॥ इम बारे बरस बीच मे गया, ए कथा ऊपरे एतोई संबन्धक। हिवे रावण ने वरुण कटकीथई, मांहोमांहि उपनो अति द्वेषक ॥ हय गय रथ सजिया घणां पाला बखतर शोभे शरीरक। शूरां ने सुभट शिणगारिया, चालियो कटक बाजी रण भेरक ॥ स० ॥ २९ ॥ एक तेड़ो रतनपुरी आवियो, प्रह्लाद राय करे जावा ने साजक। पवनजी हाथ जोड़ी कहे, एतो छै पिताजी हम तणो काजक ॥ तुम घर बैठा लीला करो, पुत्र जाया नो एह प्रमाणक। इम कहिने आयुधशाला संचरया, हाथ मे धनुष ने लीनो छै बाणक ॥ स० ॥ ३० ॥ पवनजी चाले रे कटक मे, मन मांहि चिन्तवे अंजना नारक। दूर थकी पाय लागसां, भाव कुभाव देखां एक वारक ॥ वसन्तमाला माहरी बैनड़ी, इहीं

नो कचोलो तूं भरीने आणक । सुकन रुड़ा मनावस्यां, मारग मांहें ऊभी रहो आणक ॥ स० ॥ ३१ ॥ सुकन मिसे पिउ देखस्यां, नमण करी ने हूं लागसूं पायक । लोक सहु इम जाणसी, दही नो कचोलो देखसी तायक ॥ कटक जातां पिउ वांदस्यां, जाण से अंजना आदरी पवन कुमारक । जिहां लगे स्वामी आवे नहीं, तिहां लगे मन मे करूं रे सन्तोषक ॥ स० ॥ ३२ ॥ हिवे गयद वैसो दल सचर्या, मात पिता ने नमावियो शोशक । सज्जन सहु रे सन्तोषिया, अञ्जना ऊपर अति घणो रीसक । दूर थकी दृष्टि पड़ी, चतुर चितारा नो जोवो चितरामक । पूतलो लिखो रभा सारखो, एह चितारा ने देवो दूनामक ॥ स० ॥ ३ ॥ मन्त्री कहे नहो पूतलो, भीत थोटे ऊभी अजना नारक । सांभल पवन कोप्यो घणो, कांई मिलो मोने मारग मझारक । दूर ठेलो आघो करो, आशा अलुधी मेलो आयो [illegible]-तक । वसन्तमाला मोड़े काड़का, मुख न देखावज्यो तुम तणो नायक ॥ स० ॥ ३४ ॥ अंजना कहे दासी भणो, पोते छे म्हारे अति घणा पापक । गेहलो ए गाल न बोलिये, कटक जातां कांई दीधो सरापक । आशा मोटी मन मांहरे, कांई कुसांवण काढियो एहक । देई उरांभा दासी भणो, वांह झालो ले गई घर मांहिक ॥

३५ ॥ हिवे अंजना कहे सुण सुन्दरी, मोने दुःख मांहे दुःख उपनो आजक । पाणी मांहे करी पातली, सासरे पीहरे गई मांहरी लाजक ॥ चारित्र लेवो मोने सिरे, करणी करी सारुं आतम काजक । नाम जपूं जगदीश नो, तेहसूं पामिये अविचल राजक ॥ स० ॥ ३६ ॥ हिवे नगर थकी दल संचस्यो, मारग मे दूर कियो रे मलाणक । चकवो चकवी तिहां टलवले, व्यापियो तिमिर ने आंथस्यो भाणक ॥ पवनजी मन्त्री ने इम कहे, अंजना नो मूल न लीजिये नामक । पुरुष पराया सूं मन करे, चकवा चकवी नी परे सूकी छे नारक ॥ स० ॥ ३७ ॥ मन्त्री कहे सुणो कुंवरजी, तुमे ए वड़ो कांई आणो मन में भरमक । मोटकी सती छे अंजना, अहो निशि सेवती जिन तणो धर्मक । पुरुष परायो वञ्छे नहीं, वचन लाजे तुमे कांय करो द्वेषक ॥ आ शील सरोवर झूलती, गुण किया शिव गामी जाण विशेषक ॥ स० ॥ ३८ ॥

॥ दोहा ॥

वचन सुणी मन्त्री तणा, कोमल थयुं निज चित्त ।
पवनजी मन्त्री ने कहे, सुणो हमारा मित्त ॥ १ ॥
खोटो ए कारज मैं कस्यो, संतापी निज नार ।
वचन वरां से दुहवी, करवो कवण विचार ॥ २ ॥

मो मन मे प्यारी वसि, जाणूं मलिये जाय।
लोकि लाज रहै नहीं, मन मन मे मुर्भाय ॥ ३ ॥

॥ ढाल तेहिज ॥

हिवे पवनजी कहै सुणो मन्त्रवी, हूं कटक जाऊं कूं नारी ने सतापक। पाछो जाऊं तो प्रजा हसे, महेला मांहे लाजे मांहरो वापक॥ मन्त्री कहै छाना जावस्यां, केडो सेनापति कहै तूं रुखवालक। श्रमे यात्रा करी ने पाछा श्रावस्यां, तिहां लग कटक नो कीजे रुखवालक॥ स० ॥३९॥ हिवे प्रछन्न पणे दोनूं श्राविया, श्रावी ने अञ्जना नो उघाड्यो किंवाड़क। वसन्तमाला तव उठने, उतावली बोले छै गाली दो चारक॥ कहै शूरो पुरुष गयो कटक मे, कोण रे लपट श्रायो इण ठामक। प्रभाते हूं राजा ने विनवी, छोड़ाय देसूं हूं तेहनो गामक॥ स० ॥ ४० ॥ प्रहस्त मन्त्री इम उचरे, इहां श्रायो छै प्रह्लाद नो नन्दक। श्रञ्जना तणो छै सिर धणी, वंश विद्याधर दीपक चन्दक॥ वसन्तमाला श्रावी श्रोलख्यो, नयण निहालो ने पामी श्रानन्दक। किंवाड़ खोली ने मांहि लिया, वसन्तमाला वधावियो नरिन्दक॥ स० ॥ ४१ ॥

॥ दोहा ॥

अञ्जना सती तिण अवसरे, बैठी सामायिक मांय ।
कर्म धर्म सभालती, रही धर्म लव ल्याय ॥
बसंतमाला तिण अवसरे, हाथ जोड़ी कहै आम ।
सती रे सामायिक तिहां लगे, राजा करो विश्राम ॥१॥

॥ ढाल तेहिज देशी ॥

हिवे अञ्जना सामायिक पूरो करो, हाथ जोड़ी लागे पिउ ने पायकं । पवनजी कहै तूं मोटी सती, लीन रही श्रीजिन धर्म मांहिक ॥ कुवचन वरां से मैं दूहवी, मैं तने कीधो अभाव अगाधक । हाथ जोड़ी करू विनती, खमज्यो सती म्हारो अपराधक ॥ स० ॥ ४२ ॥ अञ्जना माय नमी कहै, एहवा बोल बोलो कांई स्वामक । जेहवी पग तणो मोचड़ी, तेहवी पुरुष ने स्त्री जाणक ॥ हाथ जोड़ी ने आगा उभी रही, मधुर सुहा-मणा बोलती वेणक । कहै प्राप्ति विण किम पामिये, जाणै पत्थर गाली ने कीधो छै मैणक ॥ स०॥ ४३ ॥ तीन दिवस रह्या तिहां पवनजी, तिहां भाव भगति तिण कीधी विशेषक । वाय ढोले नीभने करी, षटरस भोजन आपिया अनेकक ॥ हाव भाव करै छै अञ्जना, प्रीतम सूं घणी सांचवी रीतक । पवनजी आनन्द पाम्या

घणा, अञ्जना सूं धरी अति घणी प्रीतक ॥ स० ॥४४॥ हिवे पवनजी पाछा निकले, अञ्जना बोली छै जोड़ीनी हाथक। आशा रहै कदाच मांहरे, लोक माने किम मांहरी वातक ॥ तिण सूं मात पिता ने जणावज्यो वाहना आभरण आप्या अहनाणक। शङ्का पड़े तो देखावज्यो, मात पितादिक सहु लेसी जाणक ॥ स० ॥ ४५ ॥ हिवे वसन्तमाला ने तेड़ी तिहां, पवनजी देई घणो सनमानक। मांहरे अञ्जना राणी सारां सिरे, प्रत्यक्ष चिन्तामण ने समानक ॥ तूं करजे जतन घणा तेहना, जिम दांत ने जीभ भेला रहै जेहक। जिम तूं अञ्जना ने भेली रहै, किम दीजे घणी भोलावणी तेहक ॥ स० ॥ ४६ ॥ वसन्तमाला ने माणक मोती दिया, बीजाई धन दियो रे विशेषक। घणी सन्तोषी छै वचन सूं, वसन्तमाला हुई हरष विशेषक ॥ प्रहस्त मन्त्री ने इम कहै, जतन कीज्यो कुंवरजी ना तेहक। कुशले खेमे वेगा पधारज्यो, म्हे वाट जोवां जाणे उमग्यो मेहक ॥ स० ॥४७॥ सीख देवे अञ्जना चालतां, रण मांहे आवे घणा पुरुष दुष्टक। सौ पुत्र आवे छै वरुण ना, तेहने आगल रखे फेरवो पूठक। दुरजन कटक छै वरुण नो, लोहना बाण जाणे मुकै अङ्गारक। तिहां चली तणी रीत राखज्यो, मरण भलो पिण नही भलो हारक ॥

स० ॥ ४८ ॥ हिवे मोल थकी रे पाछी वली, नेणा में छूटी छे जल तणी धारक। मैं कटुक वचन कह्यो कंथ ने, मुंह ढाकी ने रोवे तिण वारक ॥ बसन्तमाला आय धीरज देवे, हिवे आयो छै सामायिक कालक। देव गुरु धर्म हिये धरो, व्रत पच्चक्खाण थे लेवो सभालक ॥ स० ॥ ४९ ॥ हिवे अञ्जना सती तिण अवसरे, रूड़ी रीत पाले व्रत रसालक। कर्म धर्म सभालती, सुखे गमावे छै इण विध कालक ॥ ध्यान धरै देवगुरु तणो, संसार नी जांणे छै काचीनी मायक। बोल सज्झाय गुणे थोकड़ा, इण परे अञ्जना वा दिन जायक ॥ स० ॥ ५० ॥ हिवे उदर आधान जाणी करि, अञ्जना मन मांहि हरष अपारक। धन खरचे करै धुपटा, लौकिक दान देवै शुभकारक ॥ भावना भावे उलट मने, पात्र सुपात्र देवै मुक्ति ने हेतक। उछरङ्ग मन मांहे अति घणो, दान देती न गिणे खेत कुखेतक ॥ स० ॥ ५१ ॥ हिवे राणी राजा भणी विनवे, सांभलो विनती मांहरी आपक। अञ्जना करै धन उडावणां, इण सूं धुर लगे पवन न कीधी मिलापक ॥ तोही मन मांहे मान राखे घणो, कटक जातां पाड़ी एहनी मा- सक। आप कहो तो हूं एहने, बरजवा काजे जाऊं तिण ठामक ॥ स० ॥ ५२ ॥ राजा पिण दीधी छे

आगल्या, हिवे केतुमती चाली मोटे मगड़ाणक। साथे सहेलियां लीधी घणी, मन मांहे मान वहु आणक॥ आगे वधावड़ा मेलिया, अञ्जना सुणने हरषित थायक। भाव भगति करी घणी, मांहमी आय भेव्या सासु ना पायक॥ स०॥५३॥ आदर सनमान दे अञ्जना, सासु ने लि गई निज घर मांयक। आसन दीधो छै बैठवा, हाथ जोड़ उभी छै सनमुख आयक॥ कहे मनुष्य नो करी मोने लेखवी, म्हारा मनोरथ पूरिया आयक। माईतां विना इम कुण करै, सांहरी सासरे पीहर वाधी छै लाजक॥ स०॥ ५४॥ हिवे वहु ना चिन्ह देखी करी, केतुमती राणी धस्यो मन द्वेषक। वहु थांरा अङ्ग नो एहवो, चिन्ह क्यूं दीसे विशेषक। तूं मोटा रे कुल तणी उपनी. वंश विद्याधर दोनूं पच सारक। तूं साचौ मुझ आगल कहे, उदर आधान के उदर विकारक॥ स०॥ ५५॥ अञ्जना सती तिण अवसरे, आभरण अहनाण आण मुक्या पायक। कटक थी कुमर पाछा वली, विहरणी जाणी ने आविया तायक। तीन दिवस रह्या घर मांहरै, छांने आयने छांने गया तासक। आभरण अहनाण इहां मेलने, हिवे हुवो छै मुझ सातमो मासक॥ स०॥ ५६॥ वहु ना वचन काने सुण्या, केतुमती राणी वोलै छै तेहक। पूरव लग तोने

परहरी, मुझ पुत्र ने तुझ किसो सनेहक। आज लगी अलखावणी. तूं आभरण चोरी ने निरमल थायक॥ विणठ्यो रे दूध कांजी थकी, हिवे सासरा सूं मरि पीहर जायक॥ स०॥ ५७॥ सासुरा बचन काने सुण्या, अञ्जना रे मन उपनो दाहक। पुत्र तुमारो पाछो वले, तिहां लगे मुझ ने राखो घर मांहिक॥ सासरा में सासुजी तुम तणी, कहो तो ऐंठ खाई ने काढूं दिन रातक। चरण कमल सूं गिर रही, हूं कलङ्क लेई किम पीहर जायक॥ स०॥ ५८॥ केतुमती राणी क्रोधे चढ़ी, पग करी क्रोध सूं ठेलियो शीशक। अङ्ग मोड़ी ने ऊभी थई, धड हड धूजी ने अति घणी रीसक। अलगी रहे मुझ आंख थी, जिहां लगे म्हारा नगर नी सीमक॥ तिहां लगे अञ्जना इहां रहे, जिहां लगे मुझ ने अन्न पाणी तणो नेमक॥ स०॥ ५९॥ बसन्तमाला ने तेड़ी करी, बंधण बांधने टेरी छे तेहक। ते चोर्या आभरण म्हारा पुत्र ना। चोर देखाल के छेदसूं देहक। तेरे घड़ी रे टेरी रही, बाजे छे तारणां रोवती तेहक॥ बसन्तमाला इम मुख भणे, चोर तो पवनजी सहि तेहक॥ स०॥ ६०॥ हिवे कालो रे रथ अणावियो, कालाई तुरंग जोतस्या छे दोयक। काला ही वस्त्र पहरावियो. कालो हो भूरसी दीधी छे तेहक॥ कालो

हो मस्तक राखड़ी, अञ्जना ने वसन्तमाला वैसाणी ताहक । अञ्जना चाली पीहर भणी, दुःख घणो धरती मन मांयक ॥ स० ॥ ६१ ॥ हिवे चालियो रथ उतावलो, आयो छै बाप तणी भूम तेहक । दूर थी मेहल देखिया, सारथी रथ पाछो वाल्यो तेहक ॥ जुहार करी अजना भणी, सारथी चित्त मांहि चिन्तवे आमक । दुष्ट अकारज मैं कियो, मैं वन मांहि अंजना मेली इण ठामक ॥ स० ॥ ६२ ॥ हिवे सांझ पड़ी दिन आंथम्यो, रयण विहाणी घोर अन्धकारक । हाथोहाथ सूझै नहीं, इण वेलां मुझ ने कुण आधारक ॥ नाम जपूं जगदीश नो, इणविध काढे दुःख भारी रातक । शुद्ध सामायिक उच्चरे, एटले सूरज उग्यो होयो परभातक ॥ स० ॥६३॥ हिवे अजना कहे सुण सुन्दरी, मांहरा मन में अति घणो दुःखक । मोने कूड़ो रे कलङ्क चढावियो, हिवे तात ने किम देखालसूं मुखक ॥ माता मोय सूं मन किम मेलसी, किम करू भाई भोजायां सूं वातक । जिहां लगे स्वामी आवे नहीं, तिहां लगे किम काढूं दिन रातक ॥ स० ॥ ६४ ॥ वसन्तमाला वलती इम कहे, जिहां लगे निरमल उजला आपक । तिहां लगे सहु ने सुहामणा, हरषे वोलावसे तुम तणो वापक ॥ माता मनोरथ पूरसी, भाई भोजाई सहु मिलसी

आयक। जिहां लगे स्वामी आवे नहीं, तिहां लगे पीहर बैठा रहो आयक ॥ स० ॥ ६५ ॥ इवे नगर नी सेरिये सचरी, गुंघट काढ़ी ने नीचोजो जोयक। हन्स तणी गत चालती, नगर ना लोक जोवे सहु कोयक॥ स्वजन विछोही ए कामिनी, नाथ बिहुणी दीसे छे नारक। पिछाड़ी से प्रजा मिली घणी, इण पर पोंहती छे बाप दुवारक ॥ स० ॥ ६६ ॥ पोले उभी राखी पोलिये, मालूम कीधी राय ने जायक। दोनूं हाथ जोड़ी नीचो नमी, अञ्जना बाहिर उभी छे आयक ॥ राय सांभल हरषित हुवो, नगर शिणगार ने करो विख्यातक। सनमुख मोकलो पालखी, आघो तेड़ावो राय प्रह्लाद नो सायक ॥ स० ॥ ६७ ॥ कान में छाने सेवक कहै, अञ्जना सासरे जे हुवो तेहक। तिण बात कही सवं मांडने, राय संभाल दुःख व्यापियो देहक॥ मुरछागत आय धरणी ढल्यो. सचेत थयो कीधो क्रोध विशेषकं। म्हारा कुलने कलङ्क लगावियो, आयवा मत द्यो मांहरी पोल मझारक ॥ स० ॥ ६८ ॥ पोलियो पाछो आवी कहै, तुम ऊपर रूठो छे महिन्द्रायक। मांहे आयवा मत द्यो एहने, वचन सुणी ने विलखी थायक ॥ माल रा भवन में सचरी, आघा पाछा पग पड़े तिण वारक। मन मांहे दुःख धरती थकी, विलखी थई आवी माता

झारक ॥ स० ॥ ६९ ॥ मानवेगा तिण अवसरे, आंगने अञ्जना दीठी विरङ्गक । शरीर नो रङ्ग तो फिर गयो, काला वस्त्र पहरण अङ्गक ॥ अहनाण दीसे छै वारका, नयण भरे जाणे मोत्यां ना वृन्दक । मुख कमलाणो दीसे बुरो, जाणे राहु ने अन्तरे दब गयो चन्दक ॥ स० ॥ ७० ॥ इम देखो माता धरणी ढली, सचेत थई रोवे बांगां जो माड़क । हूं क्यों नहीं रही रे बांझणी, इण कलङ्क भाख्यो म्हारा कुल मझारक ॥ हूं सगा सम्बन्धी मे किम फिरूं, लेई कटारी ने वेदसूं म्हांहरी कुखक । जिण-कुखे अञ्जना उपनी, दीधो छै दुःख मे दुःख विशेषक ॥ स० ॥ ७१ ॥ राणी ने रोवती देखने, दास्यां मिल आई अञ्जना ने पासक । आदर विहुणी ऊभी जिमे, साय छोड़ी वाई तुम तणी आशक ॥ सासु ने सुसरा लजाविया, लजावियो पीहर मांय मोसालक । तूं वश विगोवण उपनी, हिवे पापणी तूं मूंढो मति देखालक ॥ स० ॥ ७२ ॥ वसन्तमाला वलतो कहै, एहवी अचूंकी थे वोलो छो वायक । पवन कुंवर घरे आवसी, पूछ कीज्यो निरणो मन मांयक ॥ आ सती तो सजम ले सही, गले छै गर्भ तणो ए फासक । ए कलंक आया काया नहीं धरे, पवनजी आयवा री राखे छै आशक ॥ स० ॥७३॥ इस कही दोनूं पाछी निकली,

भई भोजायां तणे घर जायक। बंधव मांहे बैसी रया, अञ्जना आंगणे उभी छै आयक ॥ आय भोजायां मिली तिहां, मन विना तिणां आपी छै वाइक। आंगुली लेई दांतां धरी, आयवा न दीधी तिण ने घर मांयक ॥ स० ॥ ७४ ॥ इम अञ्जना घर घर फिराडी घणी, किणहि न दीधी आयवा घर मांहिक। दीन वचन मुख बोलती नयण झरे मुख रोवती तेहक ॥ भूख तृषा करी आकुली, अन्न पाणी आपे कुण तामक। उभी छै दीन हियामणी, नांखे निसासा उभी तिण ठामक ॥ स० ॥ ७५ ॥ हिवे मिलने भोजायां ते इम कहै, बाई थे आप री आपो संभालक। धुर सूं जो डाह्या क्यूं नी हुवा, एह कर्यो जिसो कर्म चण्डालक ॥ अमे तो अबला स्यूं करां, आंगणे उभा रहो न लिगारक। इम घर आया राय जाणसी, तुम तणा वीर ने काढसी बारक ॥ स० ॥ ७६ ॥ बन्धवा किण ही न पूछियो, स्वजन किण ही न पूछी रे सारक। जिण दीठी छै अञ्जना सती, तिहां प्रोहित प्रधान मुंदिया द्वारक ॥ लोकां री आसंग किम हुवे, अञ्जना ने तेड़ी राखे घर मांहिक। आदर भाव किहांई नही, एहवा कर्म उदय हुआ आयक ॥ स० ॥ ७७ ॥ अञ्जना देखे आवती, लोक आडा जड़ देवे किंवारक। घर में कोई आवण देवे

नहीं, वचन बोलै लोक विविध प्रकारक ॥ अञ्जना दुख वेदै घणो, जाणै वही छै खड़ग नी धारक। दुःख मांहें दुःख सालै घणो, अमरस धरै मन मांहि अपारक ॥ स० ॥ ७८ ॥ हिवे अञ्जना तृषा रे टलवले, जल लेई आयो ब्राह्मण तीरक। राय कुँवरी पाणी पियो, शीतल उत्तम निरमल नीरक ॥ वलती अञ्जना कहै तेहने, नगर मांहें तो नहीं पीऊं पाणीक। पोल बाहिर जल पीव सूं, इहां तो छै मांहरा बाप नो आणक ॥ स० ॥ ७९ ॥ नगर बाहिर जल बावरे, अञ्जना वसन्तमाला ने कहै छै आमक। गहन वन मोटो उजाड़ मे, ऊंचा हो पर्वत विषमो ठामक ॥ जिहां सूर्य किरण न संचरे, रात दिवस नी खबर न कांयक। मानुष को मुख नहीं देखिये, तिण वन मांहें तूं मुझने ले जायक ॥ स० ॥ ८० ॥ हिवे वसन्तमाला तिण अवसरे, अञ्जना नो वचन कियो परमाणक। दोनूं जणी तिहां थी निकली, मांहो मांहि बोलती मोहकारी वाणक॥ उजड़ वन मांहि संचरी, जोयने परवत सबल महन्तक। खान्धे लेई अञ्जना भणी, परबत बैठो जाय एकन्तक ॥ स० ॥ ८१ ॥ अञ्जना वन मांहो सचरी, लोक मांहो मांहें बोलै छै एमक। अजना ने बाहिर काढने, राय कीधो अति भूण्डोजी कामक ॥ आण देवाड़ी रे घर

घरे, आयवा नहीं दीधी किण ही घर मांहक। पेट नी पुत्री ने परहरी, राय नी अकल गई ढकायक ॥ स० ॥ ८२ ॥ हिवे माता कहै छै दासी भणी, अंजना ने जोवो रही किण ठामक। दासी कहै बन मे गई, हा हा देव सूं कीधो ए कामक ॥ म्हारी कूखि ए उपनी, बालपणे हुन्तो अति घणो रागक। हिवे बन मांहें सिंहादिक विणाससी, इम चिन्तवी ने धरै दुःख अपारक ॥ स० ॥ ८३ ॥ नित भोजन जीमती रे बालिका, मन में गमता च्यारूं ही आहारक। मन मांहें फिकर करै घणो, शहर मे नहीं उजाड़ में जायक ॥ अन्न पाणी किम पामसी, मैं मन मे जाण्यो घरे कोई राखसी वीरक। इम चिन्तवी ने घणी चिन्ता करै, रोवती आंख्यां आंसू काढती नीरक ॥ स० ॥ ८४ ॥ हिवे राजा राणी कने आयने, बोलै छै मुख थी एहवी वायक। थे चिन्ता करो किण कारणे, बेटी आपां जोगी नहीं छै ताहक ॥ मोटो अकारज इण कियो, मेंहणो आण्यो मांहरो कुल मझारक। जो पाछी अणाऊं रे अंजना, तो नगर नी नारियां होडे अनाचारक ॥ स० ॥ ८५ ॥ हिवे वसन्तमाला इम उच्चरै, बाई थांरो बाप छै मूढ़ गीवारक। मूरखणि माता के तुम तणी, आयां मे अकल न दीसै लिगारक। आंगण न राखी रे एक

घड़ी. कालङ्क री सुध न पूछी रे कांयक। बाई थारा पीहर ऊपरे, कोई अचिन्त्यो धसको पड़ज्यो जायक॥ स०॥ ८६॥ अंजना कहे सुण सुन्दरी, मांहरो बाप छे चतुर सुजाणक। माते विचक्षण अति घणी, भाई छे मांहरा घणा बुद्धिवानक॥ पिण पाप छे मांहरे अति घणा तूं मन मांहे मूल रोस न आणक। आपां पूरव पुण्य कीधा नहीं, ए सहु आपणे करमां रो दोषक॥ स०॥ ८७॥ हिवे गिरवर गुफा सांमो जोवतां, तिहां दीठो छे मुनिवर ध्यानवर धीरक। निर्दोष आचार पालता, तप जप खम करी शोषव्यो शरीरक॥ अवधि ज्ञानि करी आगला, अञ्जना जाय भेट्या तसु पायक। अति दुःख मांहि आनन्द हुवो, भव भव होज्यो स्वामी तुम तणो शरणक॥ स०॥ ८८॥ हिवे हाथ जोड़ी अंजना कहे, पूर्व किसूं कियो कर्म चण्डालक। किण करमां स्वामी मांहरे, इण भव मे आयो अणहुन्तो आलक॥ सासरा सूं काढी मो भणी. पीहर राखी नहीं घर मांहक। आप कृपा करो मो ऊपरे, सगलोई सम्बन्ध देवो नी सुणायक॥ स०॥ ८९॥ हिवे साधु कहे बाई सांभलो, पाछले भव री कहूं विरतन्तक। थांरे शोक हुन्ती लिखमावती, श्रावक धर्म पालती कर खंतक॥ सिंहरथ पुत्र थो तेहने, ते चोरी पड़ोसण ने

सूंपियो तेहक। तेरे घड़ी थांरी शोज टलपलो दुःख घणो धरतो मन मांयक ॥ स० ॥ ८० ॥ थांरी शोक रे नियम हुन्तो जो साधु हुवे तिण नगर मझारक। तो वांदिया पहलो तेहने, अन्न पाणी रो हुन्तो परिहारक। विलाप कीधो तिण अति घणो, जब ते पुत्र पाछो दियो सूंपक। अन्तराय पड़ी दरशण तणी. तिणसूं बंध गई थांरे कर्मां री रासक ॥ स० ॥ ८१ ॥ काल कितोएक बीतां पछे, साधव्यां आई तिण नगर मझारक। ते वाणी सांभल तेहनी, वैराग सूं लीधो संजम भारक ॥ तपस्या करी अणसण कियो, आलोयां बिना एटलो फेरक। कीधा जो कर्म न छूटिये, तेरे घड़ी रा हुवा बरस तेरक ॥ स० ॥ ८२ ॥ सिंहरथ पुत्र ते तप करी, तुझ कूखि आय लियो अवतारक। साथे पड़ोसण दुःख सहे, ते पिण चोरी ना फल विचारक। पवनजी वरुण सूं युद्ध करी. पाछा आवसी निज नगर मझारक ॥ सं० ॥८३॥ ए साधु कह्यो संतोषवा, और नहीं कोई कारज लिगारक। बीजा साधु ने निमित्त भाषणो नहीं, एतो आगम विहारी हुन्ता अणगारक। त्यां कह्यो उपकार जाणने, कर दियो तिहां थी उग्र विहारक। भारण्ड-पखी तणी परें, आचार पाले छे निरतिचारक ॥ स० ॥ ८४ ॥ हिवे तिण काल ने लिण समें, तलेटी आयने

गुंजियो सिंहक। जंव जीव त्रास पाम्या घणा, धड़ हड़ धूजीने पामिया विहक ॥ तिण ही सिंह तणो शब्द सांभल्यो, अञ्जना भय पामी तिण वारक। तव वसन्तमाला इम उच्चरै, बाई देवगुरु धर्म समरो नवकारक ॥ स० ॥ ९५ ॥ हिवे वसन्तमाला विरख चढ़ी. अजना सागारी कीधो सथारक। नास जपै जगन्नाथ नो, जाणै रे ध्यान चढ्यो अणगारक ॥ चिहुं गत जीव खमावती, च्यारे शरणा चिन्तवै चित्त मझारक। कहै कीणरी छठो काया हरै, पिण मांहरो धर्म न लेवै लिगारक ॥ स० ॥९६॥ हिवे वसन्तमाला इम उच्चरै, कहै अजना महा सती छै निरधारक। मोटे रे शब्द हेला करै, कोई देव देवी आवो इणवारक ॥ कोई सज्जन हुवै अजना तणो. तो पिण वेग सूं आवज्यो धायक। उपसर्ग उपनो अति घणो, वसन्तमाला बोले छै एहवी वायक ॥ स० ॥९७॥ तिण वन मांहि व्यन्तर यक्ष रहै ते चारे जोजन तणो रखवालक। ते यक्ष कहै यक्षणी भणी, आपणे शरणे आवी दोय बालक॥ तिणसूं रक्षा करां आपां एहनी, इम चिन्तव सादूलो रूप कियो तेहक। तिण सादूला सिंहने पराभवी, काढी दियो दूर वन ने छेहक ॥ स० ॥ ९८ ॥ साहाज देई अंजना भणी, देवता बोले छै एहवी वायक। सतियां मांहि तूं निरमली, थारा

गुण पूरा मोसूँ कह्या नहीं जायक ॥ हिवे कलङ्क उतरसी तांहरो, कुशले आवसी पवन कुमारक। वले मामो थारो इहां आवसी, तूं निश्चिन्त रहे इण वन मझारक। ॥ स० ॥ ९९ ॥ एहवो वचन सुणी देवता तणो, बन मांहिं दोनूं रहे अबीहक। बन फल फूल तिहां वावरे, जिन धर्म तणी नहीं लोपे रे लीहक ॥ सूंस व्रत पाले छे निरमला, अहोनिस करे छे जिन तणो जापक। तपस्या करे अति आकरी, अंजना काटे छे संचिया पापक ॥ स० ॥ १०० ॥ चैत मास धूर अष्टमी, पुष्य नक्षत्र आयो ओंकारक। रात रा पाछला पोहरमां, अंजना जनमियो हणुमन्त कुमारक ॥ अशुची टाली तिण अवसरे, दासी ने कहे अंजना आमक। महोच्छव करसी कुण एहना, कटक से गयो छे आपणो खामक ॥ स० ॥ १०१ ॥ चांदणी रात पूनम तणी, अंजना कर घर बैठी छे नन्दक। चञ्चल चपल सुहामणो, दीठां मांमे घणो हरष आणंदक ॥ हरषे बोलावे रे मायडी, कुंवर तणी अजे छे लघु वेसक। तारा ने ताके रे बालुड़ो, जाणे कि चन्द ने लेय झपेटक ॥ स० ॥१०२॥ हिवे मामो अजना तणो, सुरसेन राजा तेहनो नामक। देशान्तर जाय पाछो वल्यो, आकाशे विमान थांभ्यो तिण ठामक ॥ बन मांहिं दीठी दोय बालिका, अचरज

पामी ने मोकली नारक। जब मामो अंजना ने ओलखी, नैना में छूटो छै जल तणी धारक ॥ स० ॥ १०३ ॥ गले लागो बिहु घणी आरडी, एटले मामो आयो तत-कालक। अंजना ओलखने मिल्यो अंजना रोवे छै आंसूड़ा गालक ॥ डील सू अलगो हुवे नहीं, बालक जिन धरो शोभक। जब खोला में बेसाडी धीरपे, काई हिवे पूरमूं तुम तणी आशक ॥ स० ॥ १०४ ॥ हिवे अंजना कहै मामा भणी माथे आयो मांहरे अण-हुतो आलक। तिण सूं काढी सासरा थी मो भणी, पीहर में किणहि न कीधी संभालक ॥ वले आय देवाड़ी राय घणो घरे, तिण कारण हूँ आई वन मझा-रक। माता जो पाप पोते घणा, करुणा न कीधी मांहरो किणहि लिगारक ॥ स० ॥ १०५ ॥ हिवे बेस विमाण में सचरया अंजना रे गोद में हणुमन्त कुमारक। दीठो तिण मोत्यां रो झूमखो, कूदी ने चञ्चल दीधी छै फालक ॥ तोड़ो मोत्यां लड़ भूई पड्यो, अंजना मुरछा पामी तिण वारक। तब मामो लेई पुत्र भणी, आण सौंप्यो अंजना हिवे पासक ॥ स० ॥१०६॥ बांह झाली बेठो करी, मामो बोले तिहां बोल रसालक। कहै देश परदेश में हूं फिर्यो, पिण एहवो कठे ही न देख्यो लालक ॥ एहवा वचन कहे अंजना भणी, आयो छै

हणुपाटण मझारक ॥ करै महोच्छव अति घणो, नाम दियो हनुमन्त कुमारक ॥ स० ॥ १०७ ॥ अंजना हनुमन्त इहां रहै. पवनजी पहुंचा छै लङ्कापुरी जायक । तिहां रावण राजा सूं मुजरो कियो, जब रावण बोलै छै एहवो वायक । पवनजी आद राजा भणी, थे मेघपुरी जाय करो मेलाणक । वरुण राजा ने हटाय ने, वर्ताविज्यो तिहां मांहरी आणक ॥ स० ॥ १०८ ॥ हिवे मेघपुरी दल संचस्यो, साहमा वरसै तिहां बाणना मेहक । पिण पवनजी पग नहीं चातरै, मांहो माहि मनुष्य मुंवा घणा तेहक ॥ वरस दिवस विग्रहो रह्यो, पछै मांहो मांहि मेल कियो ताहक । आण वरतावी रावण तणी, पवनजी हरष पाम्यो मन मांहक ॥ स० ॥ १०९ ॥ हिवे कटक आयो रे लङ्का भणी, राजा रावण ने कियो जुहारक । जब रावण वस्त्र वागा आपिया, वले आप्या छै शोभता घणा शिणगारक ॥ किई एक दिन राखिया, पछै रावण सीख दीधी तिण वारक । पवनजी आद राजा भणी, ते आया छै निज नगर मझारक ॥ स० ॥ ११० ॥ पवनजी कुशले घर आविया, मात पिता तणे लाग्या छै पायक । जेटले माता भोजन करै, तेटले अंजना मे घर जायक ॥ सूनां रे महल मालिया देखिया, कुरले छै तिहां अति घणा

कागक। पूरब बीती ते वात कानां सुणी, जब पवन रे लागी छै अति घणी आगक॥ स०॥ १११॥ हिवे पवनजी तिहां थी निकल्या, माता पिण आई लारै तिण वारक॥ बांह झाली पवन ने इम कहै, हिवे तो जीमो च्यारुं ही आहारक। हूं वहू ने आण मंगवायसूं, पवन जी सांहमो न जोवै रे तामक। बांह छोड़ाय माता कने, गया छै राजा महिन्द ने गामक॥ स०॥ ११२॥ हिवे माता रोवै मुख ढांकने, काम विमासी नहीं कीधो रे एहक। दूत भणी जन नहीं मोकल्या, अंजना ने नहीं राखी रे गेहक॥ काची रे बुद्धि नारी तणी, केतु-मती राणी चिन्तवे एमक। धिग् २ मुझ जीवत भणी, मैं पापणी कीधो अति भुण्डो कामक॥ स०॥ ११३॥ हिवे पवनजी कहै मन्त्री भणी, हूं सासु सुसरा सूं किम करू प्रणामक। सांहणी माता तेहने पराभवी, तिण सूं सासरा मे गई सांहणी सामक। हिवे ऊंचो हुई किम बोलसूं, हिलमिल ने वात करूंला किमक। वले अंजना राणी सो ऊपरै, किण विध धरूंली हरष ने प्रेमक॥ स०॥ ११४॥ मन्त्री कहै सुणो कुमरजी, आपां तो गया था कटक मझारक। लारै सूं काढी अंजना भणी, आपरो दोष नहीं छै लिगारक॥ इम कहै पवन कुमर भणी, चाकर मेलियो नगर मझारक।

कहे पवनजी आप पधारिया, जब अंजना ने पीहर हुई चिन्ता अपारक ॥ स० ॥ ११५ ॥ महिन्द कहे हूं महा पापियो, मैं दुष्ट अकारन कीधो रे जाणक । हाजरिया लोक मांहरे घणा, पिण डाह्यो नहीं कोई चतुर सुजाणक ॥ सीख नी बात कीने नहीं कही, मनमां मांहरे उपनी बहु रीसक । नरक नियाणो मैं बांधियो, हिवे दुष्ट कर्मां थी किम छूटीसक ॥ स० ॥११६॥ हिवे पवनजी आय पधारिया, सांभल सासु पड़ी शिर झालक । पेट कूटे दोनूं हाथ सूं, उदर आधान किहां गई बालक ॥ मन मांहि दुःख वेदे घणो, जाणे कोई जोर सूं लागे छे बाणक ॥ अंजना नो दुःख वेदे घणो, तिम २ बोले छै रोवती वाणक ॥ स० ॥ ११७ ॥ साथे सैन्या लेई चतुरङ्गिणी, सुसरो जंवाई रे साहमो जी जायक । बांह पसारी दोनूं मिल्या, दोनां रे दुःख घणो मन मांयक ॥ जब पवनजी कहे राजा भणी, तुम पुत्री ने काढ़ी हम तणो मायक । ए दोष नहीं मूल मांहरो, जब पाछो राजा सूं बोल्यो नहीं जायक ॥ स० ॥११८॥ हिवे पवनजी निज घर आणने मरदनिया मरदन करने करायो स्नानक । वलि चोवा चन्दन चरचिया, गहणा वस्त्र पहरिया प्रधानक ॥ पछे भोजन मंडप आयने, परूंपिया भोजन विविध पकवानक । पिण पवनजी कवो

भरे नहीं, अंजना ऊपर लाग रह्यो अन्तर ध्यानक ॥ सं० ॥ ११६ ॥ पिण पवनजी मन मांहि चिन्तवे, जो पुत्र जायो हुवे तो बधाई जी थायक । बसन्तमाला पिण दिसे नहीं, एम विचार करे मन मांहक । अंजना री मा तिण अवसरे, चिन्ता मन में करे जी अपारक ॥ कहे हूं तो पापणी मोटकी, मैं अंजना ने न राखी घर मझारक ॥ सं० ॥ १२० ॥ हिवे सालानी सुता रे न्हानड़ी, तिण ने पवनजी लीधी छे खोला मझारक । कहो थांरी भुवाजी स्यूं करे, ते रुदन करी ने बोली तिणवारक ॥ मात पिता ने बंधव सहु, सगलाई कीधो छे कर्म चण्डालक । आंगण न राखो रे अध घड़ी, कलङ्क सुणी ने काढो ततकालक ॥ सं० ॥ १२१ ॥ एहवा वचन सुणी बालिका तणा, पवनजी दूर फेंक दियो छे थालक । महिन्द्राय आय पाये पड्यो, तव मन्त्री कहे तूं मूर्ख गिवारक ॥ कलङ्क री सुध कीधी नहीं, विगर विचारियां काढो रे बालक । सकल भ्रष्ट हुई तांहरी, कटुक वचन कह्या तिण वारक ॥ सं० ॥१२२॥ हिवे प्रहस्त मन्त्री कहे पवन ने, बोले छे मुख थी एहवी वायक । उठो स्वामी किम बैसी रह्या, अंजना नी खबर करां वेगा जायक ॥ मूंई छे के अथवा जीवती, सुख दुःख भोगवे छे किण ठामक । एहवा वचन सुणी

मन्त्री तणां, अञ्जना ने दोनूं जोवा चाल्या छै तामक ॥ स० ॥१२३॥ हिवे महेन्द्र राजा पिण साथे हुवो, वले प्रह्लाद राय आयो लेई साथक । वले माता पिण आई छै रोवती, सांभल पुत्र एक मांहरी बातक ॥ अम्हे खबर करास्यां अञ्जना तणी, थे तो जावो निज नगर मझारक । नारी काजै लाज छोड़ो मति, पवनजी नही मानी वात लिगारक ॥ स० ॥ १२४ ॥ तब अनेक विमाण चलाविया, वले शूरमां पुरुष फेर्या असवारक । ठाम ठाम जोवे अञ्जना भणी, मुख सूं बोलै छै पवन कुमारक ॥ जो सती लाभे तो हूं जीवसूं, नही तो अकाले कर देसूं कालक । देश परदेश फिरतां थकां, अञ्जना सुणी छै निज मोसालक ॥ स० ॥ १२५ ॥ जब पवनजी चाल्या छै आगले, पीछे आवै छै सगलो जी साथक । जब बसन्तमाला पवनजी ने ओलख्या, कहै अञ्जना ने आव्यो छै तुम तणो नाथक ॥ जब अञ्जना आय पाये पड़ी, खोला मे बैसाड्यो हणुमन्त कुमारक ॥ स० ॥ १२६ ॥ बसन्तमाला आय पाये पड़ी, हियासूं भिड़ि पवन कुमारक । कहो बाई दुःख तुम किम सह्या, किम सही मांहरी माय नी मारक ॥ किम करी बनफल बीणिया, किम करी रही बन मझारक । किम करी काल गमावियो, किम करी पाल्यो हणुमन्त कुमा-

रक ॥ स० ॥ १२७ ॥ स्वामीजी आप कटक मे पधारिया, सासरे पीहर म्हांने दियोजी छेहक । तिण सूं कारी म्हें बन मे गई, बनफल भखि ने काढिया दिहक ॥ तिहां मोटा मुनिवर भेटिया, वली देवता कीधी छै हम तणी सारक । रात दिवस धर्म पालतां, मामो लेई आयो इण नगर मझारक ॥ स० ॥ १२८ ॥ हिवे बसन्तमाला अने अञ्जना, पवन ने बोलै छै मधुरी वाणक । आप किस कटक मे सचस्या, किस सह्या राजा वरुण ना बाणक ॥ जब पवनं कुमार इसड़ी कहै, मैं वरुण राजा सूं युद्ध कियो तेथक । जब घाव लागा ते साजा हुवा, जीत फते कर आयो छूं एथक ॥ स० ॥ १२९ ॥ हिवे अञ्जना सती तिण अवसरे, सासु सुसरा ने लागी जी पायक । जब सुसरो आंख्यां आंसूं भरै, मैं कलङ्क देई ने कीधो जी अन्यायक ॥ अञ्जना पाय नमी कहै, बापजी कीम करो छो बिलापक । दोष नहीं छै तुम तणो, पोते छा मांहरै बोहला पापक ॥ स० ॥ १३० ॥ वलि माता पिता सूं जाय मिली, भाई भोजायां सूँ अति घणो नेहक । माता पिता ते रोवै घणा, अञ्जना मात पिता ने कहै छै तेहक ॥ थे चिन्ता करो किण कारणै, पोते छा मांहरै बोहला पापक । तिण कारणै, मैं दुःख भोगव्या, भूल न करज्यो कोई सन्ता-

पक ॥ स० ॥ १३१ ॥ हिवे हणुपाटन थी चालिया, अञ्जना ने मामे आपी घणी आथक । साथे आयो पहुंचायवा, चतुरङ्गिणी सैन्या लेई साथक॥ साथे तो परजा अति घणी, रतनपुरी आया मोटे मराडाणक । उछरंग मन मांहि अति घणो, घर घर वरत्या छै कोड़ कल्याणक ॥ स० ॥ १३२ ॥ हिवे सीख देई मामा भणी, अञ्जना सती पवन कुमारक । सुख भोगवे संसार ना, मांहो मांहि लग रही प्रीत अपारक ॥ काल कितोक गयां पछे, राजा राणी खारो जाण्यो संसारक । राज देई पवनजी भणी, मोटे मराडाण लीधो संयम भारक ॥ स० ॥ १३३ ॥ पवन नरिन्द राज भोगवैं, अञ्जना राणी सूं हेत विशेषक । हणुमन्त कुमार विद्या भणे, बानरी आदि विद्या भण्यो अनेकक ॥ चतुर विचक्षण अति घणो, देश प्रदेश मे हुवो जी विख्यातक । बसन्तमाला रो मान बधारियो, सगलाई पूछ करै तेहने बातक.॥ स० ॥ १३४ ॥ हिवे वरुण राजा तिण अवसरे, आपणा पुत्रां ने जाणी सजोरक । बल पराक्रम देखी आपणो, मन मांहि धरै अति अभिमानक ॥ तिण लङ्का भणी दुत मोकल्यो, जो तांहरे युद्ध करवा तणो भावक । तो बीजा सुभट दल मोकली, तुम्हे एकर सूं जोवा मुझ आयक ॥ स० ॥ १३५ ॥ रावण सैन्या मेली घणी, एक

तेड़ो मेल्यो रतनपुरी मांहक। जब पवनराय जावा ने सज हुवा, जब हनुमन्त कुमार बोले एहवो वायक॥ कहे कटक मांहि हूं जाव सूं, जब पवनजी अञ्जना कहे छै आमक। पुत तूं अजे वालक छै, कटक मांहि नहो तांहरो कामक॥ स०॥ १३६॥ हनुमन्त हठ करी चालियो, महिन्द्रपुरी जाय कियो मेलाणक। तीन पहर दल आफल्यो, बधण बांध्यो नाना ने जायक॥ शूरसेन राजा आय लाजियो, बधण छोड़ी ने कियो प्रमाणक। कहे मांहरी माता ने राखो नहो, तिण कारणे मैं आय कियो संग्रामक॥ स०॥ १३७॥ हिवे हनुमन्त आयो लङ्का भणी साहमो आयो छै रावण रायक। हनुमन्त कुमार ने देखने, रावण पामियो अति हरष आनन्दक॥ वीड़ो भालो ने हनुमन्त निकल्यो बीजा पिण चाल्या अति घणा रायक। सांहमो आयो कटक वरुण नों, युद्ध हुवो घणो, मांहो मांहक॥ स० ॥ १३८॥ रावण की सेना देखो करी, सो पुत वरुण ना चाल्या तिण वारक। युद्ध करवा लागा तिण समै, लोहना वाण जाणे सूकि अङ्गारक॥ वले गोला ने वाण वहे घणां, काम आया वड़ा वड़ा जोधारक। जब रावण की सेन्या न्हासी गई, सेंठो उभो रह्यो हनुमन्त कुमारक॥ स०॥ १३९॥ घणा लोक कहे हनुमन्त ने

तूं मात पिता ने अलखावणो बालक । तिण सूं तोने मेलियो कटक में, वरुण सूं युद्ध कियां कर जायलो कालक ॥ वल तो हनुमन्त इम कहे, वरुण ने पुत्र मिल आवज्यो साथक ॥ बातां किया सूं खबर नहीं, वल तणी खबर पड़े रण में वावस्यां हाथक ॥ स० ॥ १४० ॥ वानरी विद्या साधी करी, वानर रूप कियो तिण वारक । बारै जोजन मे वृक्षादिक हुन्ता, ते लेई न्हाख्या वरुण नी फौज मझारक ॥ घणो कतल कियो वरुण नी फौज नों, वले लम्बो पूंछ विकुर्व्यों तिण बारक । सौ पुत्र राजा वरुण तणा, बांध लिया तिण पूंछ मझारक ॥ स० ॥ १४१ ॥ वरुण राजा कहे हनुमन्त ने, तूं वानरी विद्या ने मेल दे टूरक । पछे जीत पामजे रण विषे, तो हूं जाणूं तोने मोटको शूरक ॥ जब हनुमन्त विद्या मेली बांदरी, सूलगो रूप करी मेले छे बाणक । जब वरुण राजा इम चिन्तवे, ए बालक दिसे छे महा बलवानक ॥ स० ॥ १४२ ॥ हिवे धधकी नं वरुण राजा उठियो, हनुमन्त कुमार सूं मांडी छे राड़क । दोनूं जणा हाथ चालवे, तिहां मुष्टि ना बाज रह्या परिहारक ॥ रावण राजा तिण अवसरे. हनुमन्त ने ऊपर कीधो छे हाथक । जब हनुमन्त वरुण राजा भणी, बांधीने न्हाख दियो रण मांहिक ॥ स० ॥ १४२ ॥

हनुमन्त कहे वन्धन तोड़ूं तांहरा, जो रावण राजा रे लागे तूं पायक। जब वरुण कहे वीतराग विन, अवर रा पाय वन्दूं नहीं जायक ॥ चारित्र लेणो छे मांहरे, तब हनुमन्त वन्धण तोड़िया तामक। वरुण लियो चारित्र वैराग सूं, तिणरा पुत्र ने राज दियो रावण रायक ॥ स० ॥ १४४ ॥ रावण हनुमन्त ने प्रशसियो. तूं शूर घणो थांरी लघुनी वेशक। ते मोटा राजा ने हटा-वियो, रीझ देई आयो लङ्क नरेशक ॥ परणाई भाणेजी आपणी. सीख दीवो सनमान सत्कारक। वले हनुमन्त मोटा राजा तणी, रूपवती कन्या परणियो एक हजा-रक ॥ स० ॥ १४५ ॥ पवन नरिन्द राज भोगवे, मानेती राणी अञ्जना नारक। वसन्तमाला सूं हेत अति घणो, वले माने तो छे हनुमन्त कुमारक ॥ ते संसार ना सुख भोगवे, हनुमन्त कुमार सहंस नार्‌यां सहितक। रतन जड़ित महिलां मभे, मांहो मांहि लग रही अति प्रीतक ॥ स० ॥ १४६ ॥ हिवे काल कितोक गयां पछे, अजना चिन्तवे चित्त मझारक। परभाते राजाने पूछने, लेणो सिरे मोने संयम भारक ॥ इम चिंतवी आई राजा कने. हाथ जोड़ी वोले शीश नमायक ॥ आज्ञा द्यो स्वामी जी मो भणी, चारित्र लई देऊं कर्म खपायक ॥ स० ॥ १४७ ॥ जव राय कहे अंजणा भणी केईक दिन

रहो घर मझारक। हिवे पुत्र बालक अछै, पछै साथे लेस्यां आपे संयम भारक॥ तब अंजना हाथ जोड़ी ने इम कहै, मोने काल रो विश्वास नहीं छै लिगारक। तिण कारण दीक्षा लेसूं सही, जब राजा पिण हुवो छै साथे तैयारक॥ स०॥ १४८॥ हिवे हणुमन्त कुमार तेड़ने, पवनजी बोलै छै एहवो वायक। अमे चारित्र लेस्यां वैराग सूं, हणुमन्त कुमार रोयो तायक। पछै राज बैसाण्यो मोटै मण्डाण सूं, बसन्तमाला अञ्जना पवनजी रायक। आज्ञा लेई हणुमन्त कुमार नी, तीनूं ही लीधो संयम सुख दायक॥ स०॥१४९॥ मास मास खामणे करै पारणो, शरीर सूकाई दुरबल करी कायक। तीनां री नसां जाल दीसै जुई जुई, हाल्यां चाल्यां घणी वेदना थायक॥ तीनूं जणा वैराग सूं, च्यारू आहार पच्चक्खी कीधो संथारक।. केवल ज्ञान उपाय नै, कर्म तोड़ी गया मुक्ति मझारक॥ स० ॥ १५० ॥

॥ इति अञ्जना सती रो रास समाप्तम्॥

श्री मैंणरह्या सती की चौपाई ।

॥ दोहा ॥

जुवो मास दारु थकी, करै वेश्या सूं जोग ।
जीव हिंसा चोरी करै, परनारी नो भोग ॥१॥

॥ ढाल रास की चाल ॥

व्यसन सातमो परनारी नो, प्रत्यक्ष पाप देखायो । रावण पद्‌मोत्तर मणरथ राजा, तीनूंई राज गमायो ॥ राजवियां ने राज पियारो ॥ एदेशी ॥१॥ मणरथ राजा कर मनसुवो, जुगबाहु ने मार्यो । आप मुओ ने राज गमायो, हाथ कछुय न आयो ॥ रा० ॥ २ ॥ रावण राजा पहिलां हुवो, पीछे पद्‌मोत्तर रायो । तीनो कथा मणरथ राजा नी, ते सुणज्यो चित्त लायो ॥ रा० ॥ ३ ॥ जंबुद्वीप रा भरत क्षेत्र में, नगर सुदरशण भारी । धन सूं पूरण देखत सुन्दर, रैयत सुखी राजा री ॥ रा० ॥ ४ ॥ मणरथ राजा रे धारणी राणी, ऋद्धि तणो विस्तारो। हाथी घोड़ा ने रथ पायक सैन्या, वरते चौथो आरो ॥ रा० ॥ ५ ॥ स्वचक्र ने परचक्र केरो, विरोध

नही तिणवारो । मणरथ राजा रे जुगबाहु भाई, मांहो मांहि छै प्यारो ॥ रा० ॥ ६ ॥ पांच इन्द्री ना भोग भोगवता, नाटक पड़े दिन रेणो । विविध प्रकार नी क्रीड़ा करतां, विषय विरोध मंडाणो ॥ रा० ॥ ७ ॥ मणरथ राजा राज भोगवंता, चढ़ियो महल उदारो । तिण अवसरे मैंणरह्या दीठी जुगबाहु नी नारो ॥ रा० ॥ ८ ॥ रूप देखी ने राजा अचरज पाम्यो, अहो अहो रूप तुमारो । इण राणी ने हूं महल मे राखूं, सुख विलसूं संसारो ॥ रा० ॥ ९ ॥ मणरथ राजा कर मनसुबो, जुगबाहु ने बुलायो । करो सजाई आयुद्धशाला नी, ह्रं देश लेवण ने जायो ॥ रा० ॥ १० ॥ हाथ जोड़ी ने जुगबाहु ने बोल्यो, ओ तो छै थोड़ो कामो । राज विराजो राजसभा मे, हूं जासूं भाई तामो ॥ रा० ॥ ११ ॥ मणरथ राजा राजी हुवो, हुकुम कियो छै भाई देश किल्लो कायम करी आवो ले जावो फौज सजाई ॥ रा० ॥ १२ ॥ जुगबाहु तो उठ्यो सताब सूं, हरष हुवो मन मांहि । किल्लो कायम कर पाछो आऊं, जब मुजरो करूला भाई ॥ रा० ॥ १३ ॥ ले फौजां जुगबाहु चाल्यो, मजला मजला जायो । जुगबाहु तो मन में नही जाण्यो, मणरथ कियो उपायो ॥ रा० ॥ १४ ॥ मणरथ राजा मैंणरह्या कारणे भारी वस्तु मगावे ।

गहणा जड़ाव रा पहरण सारूं, दासी रे हाथ पहुंचावे ॥ रा० ॥ १५ ॥ दासी राजा रे हुकुमे छाने, वस्तु लेई देवे राणी ने जायो। मणरथ राजा चोज बनायो, तिणरी खबर न कायो ॥ रा० ॥ १६ ॥ मैंणरह्या मन मांहि जाण्यो धणी चाल्यो छे गामो। मैंणरह्या मन ऊणी जाणी, जेठ पिता री ठामो ॥ रा० ॥ १७ ॥ इम जाणी ने राणी ऊरा लीधा, वस्तु आभूषण सारो। नेह सनेही वस्तु मेली, जाण्यो राजा लागो म्हांरो लारो ॥ रा० ॥ १८ ॥ मैंणरह्या ने रीसज आई, दीनो दासी ने भ्रमकारो। धणी तो म्हारो परदेश सिधायो, राजा पड़ियो म्हारी लारो ॥ रा० ॥ १९ ॥ दासी तो मन मे दिलगिर हुई, राजा पासे आई। मैंणरह्या तो महा-राज कोप करी ने, दीनी वस्तु बगाई ॥ रा० ॥ २० ॥ मणरथ राजा रात समय मे, महल भाई रे आयो। दरवाजो तो जड़ियो दीठो, हेलो मारे छे रायो ॥ रा० ॥ २१ ॥ मैंणरह्या तो मन मांहि जाण्यो, मणरथ राजा आयो। बीजो तो कोई उपाय न दीसै, हूं सासु ने द्युं रे जगायो ॥ रा० ॥ २२ ॥ मैंणरह्या तो छाने जाय ने दीनो सासु ने जगायो। अमलां मसतां माता जाण्यो, बेटो भोले आयो ॥ रा० ॥ २३ ॥ ओ तो महल बेटा जुगबाहु रो, महल पेलो कांनी थारो। बचन

माता नीं सांभल राजा, लाज्यो छै तिणवारो ॥ रा० ॥ २४ ॥ मैंणरह्या मन मांहे जाण्यो पड़ियो राजा म्हारे लारे। तो कासीद मेलूँ धणी ने, वेगा आवज्यो इण वारे ॥ रा० ॥ २५ ॥ बीती बात लिखी कागद मे, जीवती जाणो मोने। तो पाछा घरे वेगा आवज्यो, दगो कियो छै थांने ॥ रा० ॥ २६ ॥ कासीद कागद दियो सताव सूं, जुगबाहु ने जाई। कागद बचांने जुगबाहु जाण्यो, दगो कियो छै भाई ॥ रा० ॥ २७ ॥ इम जाणी ने जुगबाहु बलियो, ढील न कीनी कांई। मुहूर्त्त नहीं महलां आवण रो, नीमित्तिये बात बताई ॥ रा० ॥ २८ ॥ जुगबाहु तो डेरा बारे कीना, नगरी मे नहीं आयो। मणरथ राजा रो डर जाणी ने, राणी धणी कने जायो ॥ रा० ॥ २९ ॥ मैंणरह्या मिल आप धणी री, पर पुरुष प्रीत न जाणी। व्रत आप रो राखण सारूं, जतन करे छै राणी ॥ रा० ॥ ३० ॥ मैंणरह्या तो पहुंती सताव सूं, विध सूं बात सुनाई। जुगबाहु तो मन मे न जाण्यो, मारेलो मने भाई ॥ रा० ॥३१॥ जुगबाहु ने आयो जाणी ने, डर उपनो राजा रे। मण-रथ राजा करे विमासण, उमराव छे इण रे सारे ॥ रा० ॥ ३२ ॥ जुगबाहु ने राणी कहै छे, दगो करेलो थारो भाई। साथ समान छे इणरे सारे, तो हूं पहेली

मारूं जाई ॥ रा० ॥ ३३ ॥ भाई मारण राजा रात रो चाल्यो, चढ़ियो एक सखाई। दोढ़ीदार चाकर पालतां, गयो धकाय ने मांई ॥ रा० ॥ ३४॥ मैंणरह्या तो मनरी दाखवी, जितरे मनरथ आयो। राणी कहै सावधान हुवो, मारैलो थाने भायो ॥ रा० ॥ ३५ ॥ मैंणरह्या तो न्यारी हुई, राजा नेड़ो आयो। जुगबाहु तो न्यारो सूतो, मणरथ घावज वायो ॥ रा० ॥ ३६ ॥ भाई मार राजा पाछो वलियो, हुयो घोड़े असवारो। सरप पूंछड़ी खूर हेठे चौथी, खाधो के तिण वारो ॥ रा० ॥ ३७ ॥ मणरथ राजा हेठे पड्यो, मरने गयो नरक तत्कालो। खबर नही कोई राज सभा में, करमां कीनो छै चालो ॥ रा० ॥ ३८ ॥ मैंणरह्या तो कने आई, दुःख धरती मन मांई। मैं तो थाने कह्यो छो महाराजा, मारै लो थांने भाई ॥ रा० ॥ ३९ ॥ मैंणरह्या तो कहै धणी ने, करो संथारो सोई। च्यारे शरणा थांने होयज्यो, नहीं किणही रो कोई ॥ रा० ॥ ४० ॥ मोरा प्रीतमजी थांने द्युं सीख, बचन हिया मे थे धारो। साहिब तो परदेश सिधावो, हूं भातो बांधूं छूं लारो ॥ रा० ॥ ४१ ॥ मोरा प्रीतमजी थांरे देव अरिहन्त छे, गुरु निग्रन्थ श्री साधो। धर्म केवली भाख्यो दया मे, समकित नियम आराधो ॥ रा० ॥ ४२ ॥ मोरा प्रीतमजी थांने जीव

मारण रो, जाव जीव पच्चक्खाणो। सर्व प्रकारे मृषा-वादे, अदत्तादान मे जाणो ॥ रा० ॥ ४३ ॥ मोरा प्रीतमजी थांने मैथुन सेवण रो, नवविध बाड़ प्रमाणो। मनुष्य देवता तिर्यञ्च संबन्धी, जावजीव पच्चक्खाणो ॥ रा० ॥ ४४ ॥ मोरा प्रीतमजी थांने क्रोध मान रो, माया लोभ ए च्यारो। मन मे तो ममता मती राख-ज्यो, जावजीव परिहारो ॥ रा० ४५ ॥ मोरा प्रीतम-जी थे राग द्वेष दोई, बंध करमां रा जाणो। कलह अभ्याख्यान पैशून्य चाड़ी, पर परिवाद पच्चक्खाणो ॥ रा० ॥ ४६ ॥ मोरा प्रीतमजी रति अरति इम जाणो, मायामोसो नही भलो। पाप अठारे त्रिविध वोसराऊं, मिथ्या दरशणसलो ॥ रा० ॥ ४७ ॥ मोरा प्रीतमजी मरण तणो भय न आणो, धर्म साचो करि जाणो। परभव मे ते साथे चालसी, गांठे बांध्यो नाणो ॥ रा० ॥ ४८ ॥ मोरा प्रीतमजी थे मोह थकी मन वालो, मोह मे जीव मती घालो। करो आलोयणा कारज सरे ज्यूं, मत राखो कोई सालो ॥ रा० ॥ ४९ ॥ मोरा प्रीतम जी दश दृष्टान्ते, मनुष्य जमारो दोहेलो। इण भव मे जो पुन्य करै तो, परभव सुख सुहेलो ॥ रा० ॥ ५० ॥ मोरा प्रीतमजी जागे विचारो, सुपना री माया जाणो। डाभ अणी जल बिन्दु जिम जाणो, मन मे समता

आणो ॥ रा० ॥ ५१ ॥ मोरा प्रीतमजी थे दोष करमां री जाणो, बीजा ने दोष न दीजै । ऋण बेर तो कोई न छोड़ै. बांध्या ते भुगतीजे ॥ रा० ॥ ५२ ॥ मोरा प्रीतमजी किण रा मात पिता, कुण कुटुम्ब कुण भाई। घर री तो साहिब नहीं स्त्री, स्वारथ सरब सगाई ॥ रा० ॥ ५३ ॥ मोरा प्रीतमजी नहीं काया आपणी, साची धर्म सगाई । शत्रु मित्र ने सरीखा जाणो, अवसर जावे ठाई ॥ रा० ॥ ५४ ॥ मोरा प्रीतमजी थांरै सरदहणा शुद्ध छै, चौविहार अणसण दियो । मरणो सहु ने एक दिहाड़ै. सैंठो राखज्यो हियो ॥ रा० ॥५५॥ जुगबाहु तो संथारो सरदह्यो, साहाज दियो छै राणी । काले मासे काल करी ने, जाय उपनो विमाणी ॥ रा० ॥ ५६ ॥ मैंणरह्या छाती काठी करने, कारज धणी नो कियो। पूरा मित्र ते पार उतारै, धन जीवित जिण रो जीयो ॥ रा० ॥ ५७ ॥ मोह वसे होय काम बिगाड़ै, मरण विरियां नरक मे घाले। सगा नहीं ते पूरा वैरी, सूंस लेता ने पालै ॥ रा० ॥ ५८ ॥ मित्र हुवै ते मरण सुधारै, करै पर उपकारो। दे सरदहणा सूंस करावे ते विरला संसारो ॥ रा० ॥ ५९ ॥ धन छै संसार मे मैंणरह्या राणी, मोह धणी नो निवार्यो । आप तणो भरतार जाणी ने, तिण उपदेश देई ने तार्यो ॥ रा०

॥ ६० ॥ मैंणरह्या मन मांहि जाण्यो, पकड़ैलो मोने रायो। वेष बदलने परी निकली, दासी नाम धरायो ॥ रा० ॥ ६१ ॥ डेरा मांह सूं तो बारै निकली, गई उजाड़ रे मांयो। पूरी आपदा कोई नहो साथे, राणी रे कुँवर जायो ॥ रा० ॥ ६२ ॥ जिण जाया देशोटन हुन्ता, बांटता राज बधाई। विषय वियोग मे कुंवर जायो, जोड्यो करम कमाई ॥ रा० ॥ ६३ ॥ चांपो पाछलो राणी डरपे, रखे आवेलो कोई लारो। इम जाणी ने कुंवर ऊंचायो, हुई करमा रे सारो ॥ रा० ॥६४॥ कोमल काया ने कारण पड़ियो, पांव पड़े नहो ठायो। कुमर तो राणी निभतो न जाण्यो, बालक मेले वन मांयो ॥ रा० ॥६५॥ चीर बिछाई ऊपर सुवाण्यो, बाल बिछोहो जाण्यो। होतब थारो जो होसी रे जाया, मैंणरह्या दुःख आण्यो ॥ रा० ॥ ६६ ॥ कुंवर मेल राणी आगी चाली, अन्न बिना सूनी काया। कठै सुवावड़ कुण मङ्गल गावै, करमा चैन दिखाया ॥ रा० ॥ ६७ ॥ घणा दास ने दासी हुन्ता, राजकुंवर नी धायो। दोढ़ी पड़दा मांहे रहती, राणी एकली जायो ॥ रा० ॥ ६८ ॥ जातां जातां आगे नदी आई, पाणी मे वस्त्र पखाल्या। स्नान करी ने तीरज बैठी, उठी दुःख री भाला ॥ रा० ॥ ६९ ॥ कौण वियोग पड़्यो मो मांहें, किसे ठिकानें

आई। रोही मे भमती एकलड़ी, रोवे छे विलविलाई ॥ रा० ॥७०॥ किण घर जनमी किण घर आई. राजा री राणी कहवाई। साहिब म्हारो मुवो मेली हूं रोही मे आई ॥ रा० ॥ ७१ ॥ कुंवर विछोहो मात पिता रो, जुगवल्लभ लघु भाई। जुगवल्लभ ने महलां मेल्यो, बालक छे वन मांहि ॥ रा० ॥७२॥ महल झरोखा शोभा जाली री, राजवियां रूसनाई। ऋद्धि साहिबी उभी मेली. हूं तीर नदी रण मांहि ॥ रा० ॥ ७३ ॥ विषम उजाड़ ने आय बैठी नो. सुख नही तिल रती। मैंणरह्या तो दुःख करती बैठी. सङ्कट पड्यो छे सती ॥ रा० ॥७४॥ झूरे धणी ने करे विलाप. दुःख भर छाती फाटै। मैंण-रह्या नो दुःख प्रभु जाणै, बैठी छै तट माटै ॥रा०॥७५॥ संजोग रूपणी रोही हुन्ती. विजोगे तिण वाली। नाथ विहुणी दुःखनी करती. आणी रण मे रोली ॥ रा० ॥ ७६ ॥ देखो सगाई इण ससार मे, विछड़ता नही वारो। द्रूम जाणी ने सतगुरु सेवो, लाहो लेज्यो लारो ॥ रा० ॥ ७७ ॥ तिण अवसर मे देवता द्रूम जाण्यो, दुःख करै छे राणी। वैक्रिय रूप कियो हाथी रो, रमत मांड़ी पाणी ॥ रा० ॥ ७८ ॥ दुःख विसारण विलम्बज कियो, सूंड़ सूं उछाले पाणी। दुःख छोड़ी ने हाथी दीठो, रमत देखे राणी ॥ रा० ॥ ७९ ॥ जिम जिम

रमत देखे राणी, अचरज रमत भारी। धर्म अंकुरो पुन्य संजोगे, आवे छे नर नारी ॥ रा० ॥ ८० ॥ देवता छे कोई पर उपकारी, राणी ने सूंड़ सूं झाले। जितरे नेड़ा आय निकलिया, लेपी विमाण में मेले ॥ रा० ॥८१॥ विद्याधर तो राजी हुवो, रूप घणो इण नारी। तुरन्त विमाण में ले पाछो बलियो, सुख विलसां संसारी ॥ रा० ॥ ८२ ॥ मैणरह्या तो मन में जाण्यो, तुरत वल्यो छे पाछो। कुण जाणे कुण देश ले जावे, ओ तो नहीं दीसे छे आछो ॥ रा० ॥ ८३ ॥ विद्याधर ने मैण-रह्या पूछे; जाता किण दिस भाई। अबे तो थे पाछा बलिया, कांई दिल में आई ॥ रा० ॥ ८४ ॥ भगवन्त ने तो दरशण जातां, तो सरीखी मिली नारी। इम जाणी ने पाछो बलियो, सुख विलसां संसारी ॥ रा० ॥ ८५ ॥ मैणरह्या मीठे वचने दाखवे; भगवन्त दरशण जातां। मारग में थाने हूंज मिली छूं, नफो घणो दरशण करता ॥ रा० ॥ ८६ ॥ तीर्थङ्कर ना दरशण करतां, प्रसन्न होसी थारी काया। विद्याधर तो पाछो बलियो, मैणरह्या रे मन भाया ॥ रा० ॥ ८७ ॥ समवसरण सूं नेड़ा आया, विमाण सूं उतरिया। कर वन्दणा ने सुने व्याख्यान, कारज सगला सरिया ॥ रा० ॥ ८८ ॥ जुग-बाहु तो देवता हुवो, उठ्यो छे उमंग आणी। सेवका

तो कर जोड़ हरषत हैं, जय जयकार मुख वाणी ॥ रा० ॥८९॥ इण ठामे स्वामी आय उपना, हुवा हमारा नाथो। कुण गुरु नी सेवा कीनी, दान दियो छे हाथो ॥ रा० ॥ ९० ॥ ज्ञान करी ने, देवता दीठो, पूरव भव नो विचारो। जुगवाहु तो हमारो नामज हुन्तो, मैंणरहा म्हारी नारो ॥ रा० ॥ ९१ ॥ मैंणरह्या रे कारण मोने, मणरथ भाई मास्यो। दे शरणां ने सूंस करायो, मैंणरह्या मोने तास्यो ॥ रा० ॥ ९२ ॥ उपगारी नो गुण जाणी ने, देवता दरशण जायो। देखूं मैंणरह्या कुण ठिकाने, बैठी समोसरण मांयो ॥ रा० ॥ ९३ ॥ परगट रूप कीनो छे देवता, प्रभु ने दक्षिणा दीधी। साधु साध्वी ने वन्दना करने, मैंणरह्या ने वन्दना कीधी ॥ रा० ॥ ९४ ॥ परषदा देखने हंसवा लागी, देव दीसै छे गहलो। स्त्री ने तो वन्दना कीधी, जिण रो प्रभु उत्तर देलो ॥ रा० ॥ ९५ ॥ जुगवाहु इणरो नामज हुन्तो, मैंणरह्या इणरी नारी। धर्म तणो इण ने साभ दीनो, हुवो सुर अवतारी ॥ रा० ॥ ९६ ॥ मैंणरह्या रे कारण इण ने, मणरथ भाई मास्यो। दे शरणा ने सूंस कराया, इण ने मैंणरह्या तास्यो ॥ रा० ॥ ९७ ॥ मैंणरह्या तो मन मे जाण्यो, धणी दीसै छे म्हारो। इण अवसर मे संयम आवै, पीछे विद्याधर नो नहीं सारो

॥ रा० ॥ ९८ ॥ भरी परषदा में मैंणरखा उठी, बोलै छै करजोड़ी। आज्ञा द्यो तो स्वामी संयम लेऊं, टालूं भवतणी खोड़ी ॥ रा० ॥ ९९ ॥ देव कहै थांने आज्ञा म्हारी, ल्यो थे संयम भारी। जुगबाहु तो उरण हुवो, मैंणरखा ने तारी ॥ रा० ॥ १०० ॥ मोने तो विद्याधर लायो, परवश बात प्रकाशी। कठै विद्याधर कह्यो देवता, गयो विद्याधर न्हासी ॥ रा० ॥ १०१ ॥ मैंणरखा तो संयम लीधो. ज्ञान भणै गुरुणी पासै। विनय करी ने आज्ञा पालै, सुमति गुप्ति प्रकाशै ॥ रा० ॥१०२॥ देवता तो मन मे हरषज पाम्यो, पूज्या प्रभुजी ना पायो। साधु साध्वी सर्व वांदी नें, आयो जिण दिश जायो ॥ रा० ॥ १०३ ॥ देवता तो आपणे ठामे पहुन्तो, मैंणरखा संयम पालै। बालक तो मारग में मेल्यो, आपरा पुन्य रुखवालै ॥ रा० ॥ १०४ ॥ ना तो कोई हिन्सक नेड़ो आयो, नहीं कोई पक्षी खायो। देखो पुन्याई के प्रभाव थी, सुकृत कीनी सहायो ॥ रा० ॥ १०५ ॥ मिथिला नगरी नो पदमरथ राजा, चढ़ियो शिकारज सोई। पाप करन्ता पड़ै पाधरो, पूरव सुकृत होई ॥ रा० ॥ १०६ ॥ कर असवारी राजा रण में फिरता, जीवे जीव सब कोई। रण मांहि तो बालक सूतो, दीठो राजा सोई ॥ रा० ॥ १७ ॥ बालक नेड़ो

राजा आयो, रूप देखने अचरज पायो। बालक कोई पुण्यवन्त दीसै, राजा रे मन भायो ॥ रा० ॥ १०८ ॥ म्हारा राज मे पुत्र नही छै, म्हारे सहजे आयो। तो इण बालक ने उरो लेऊं, सौंपूँ राणी ने जायो ॥ रा० ॥ १०९ ॥ कुंवर लेई ने राजा पाछो वलियो, आयो राज दुवारो। पुष्पमाला राणी राय तेडावै, पुत्र दियो छै करतारो ॥ रा० ॥ ११० ॥ नव मास तो भारा मरै छै, देवता पितर मनायो। आपणै पूरव पुण्य करी ने, कुंवर सहज मे आयो ॥ रा० ॥ १११ ॥ अपणा राज मे पुत्र नही छै, करो इणरी प्रतिपालो। राज लायक ओ कुंवरज दीसै, होसी राज रुखवालो ॥ रा० ॥ ११२ ॥ भार भोलावण देई राणी ने, कुंवर खोले घाल्यो। पुण्यवन्त राज में आयां पीछे, भोमियां नमी ने चाल्यो ॥ रा० ॥ ११३ ॥ भोमिया म्हारे अनमी हुन्ता, कुंवर राज में आयो। भोमिया म्हारे सर्व चाकर हुवा, नमीय नाम दरसायो ॥ रा० ॥ ११४ ॥ नमीय कुंवर पदमरथ राजा, दिन दिन वधतो होई। मात पिता बंधव विछोहो, ते सुणज्यो सहु कोई ॥ रा० ॥११५॥ जुगबाहु ने मनरथ मास्रो, विषया रस रे चायो। पाछा वलतां ने सापज खाधो, गयो नारकी मांयो ॥ रा० ॥ ११६ ॥ दोनूं राजा रो मरण हुवो, खबर हुई नगरी मांई।

मैंणरह्या तो निकल नाठी, तिण री खबर न कांई ॥ रा० ॥ ११७ ॥ संसार नो तो कारज कियो, राज जुग-वल्लभ ने दियो। किण ने दोष न दीजे रे प्राणी, करम आपरा कियो ॥ रा० ॥ ११८ ॥ जुगवल्लभ तो राज करै छे, वरते छे चौथो आरो। बाम तणी मन मे थोड़ी आवे, पिण दुःख वरते माता रो ॥ रा० ॥ ११९ ॥ नमी कुमार तो मोटो हुवो, विरह पड्यो राजा रो। नमी कुमार ने राज बैसाण्यो, सुख विलसै संसारो ॥ रा० ॥१२०॥ जुगबाहु तो देवता हुवो, मैंणरह्या सयम पाले। जुगवल्लभ ने नमी भाई, दोनूं राज रुखवाले ॥ रा० ॥१२१॥ आठ करम छे महा जोरावर, जीवा ने फोड़ा पाड़े। च्यारां ने तो न्यारा कीना, करतब खेल दिखाड़े ॥ रा० ॥ १२२ ॥ दोनूं राजा राज भोगवतां, अटवी पड़ी है सीमाड़े। भूमि आपणी राखण सारूं, करै राज वीराड़े ॥ रा० ॥ १२३ ॥ जुगवल्लभ तो मन में जाण्यो, आयलड़ दिसै कठारो। देखोने म्हारी धरती लेसी, राजविया अहङ्कारो ॥ रा० ॥ १२४ ॥ जुगवल्लभ तो फौजां ले चढ़ियो, कांकड़ सीमे जावे। नमी राजा मन मे कोप करी ने, मन मे मगज न मावे ॥ रा० ॥ १२५ ॥ नमीराय तो करी सजाई, बोलै छे बांकी वाणी। मरम मोसो बोलै माता रो, चढ़ियो छे इम

जाणी ॥ रा० ॥ १२६ ॥ तिण अवसर मे मैंणरह्याजी, मन मे इसड़ी आणी। अङ्ग जात छै दोनूं म्हारा, नहीं छठे पुन्य प्राणी ॥ रा० ॥ १२७ ॥ घणा जीव री घातज होसी, मरसी घणा अजाणी। यासूं वणै जो उपगार कीजे, मैंणरह्या मन आणी ॥ रा० ॥ १२८ ॥ कर वन्दना गुरणी ने पूछे, आप कहो तो हूं जाऊं। दोनूं राजा रे राड़ मडी छै, हूं जाई ने समझाऊं ॥ रा० ॥ १२९ ॥ मांहो मांहि तो कोई न हटसी, अङ्ग जात छै म्हारा। घणा जीवा नो घातज होसी, परिणाम एक दया रा ॥ रा० ॥ १३० ॥ देखो पुन्याई राजवियां री, गुरणी तो पिण नहीं वरजे। वस्तु आप री सेठी राखने, पीछे परोपकार करीजे ॥ रा० ॥१३१॥ कर वन्दना ने मैंणरह्या चाली, ले सतियां नो साथो। जुगवल्लभ सूं तो सेन्य मिळाय, पहेली उण सूं बातो ॥ रा० ॥ १३२ ॥ कांकड़ सीमा ठौड़ ठिकाने, फौजां मड़ी छै दोई। जुगवल्लभ नो लशकर पूछी, चाली मैंणरह्या सोई ॥ रा० ॥ १३३ ॥ मैंणरह्या सती चरम शरीरी, आप तीरे पर तारी। राज कचेड़ी सूं नेड़ी आई, निजर पड़ी राजा री ॥ रा० ॥ १३४ ॥ जुगवल्लभ तो उठ्यो सताव सूं, विनय कर्यो छै भारी। सात आठ पग साहमो जाई ने, महासतियां केम पधारी ॥

रा० ॥ १३५ ॥ मैं थारह्या तो कहै राजा ने, कारण पड़ियो तोस्युं भारी। फौज बन्धी तो थे भेली कीनी, मैं तिण सूं कारण विचारी ॥ रा० ॥ १३६ ॥ आय लड़ म्हारी धरती लेसी, नीच चण्डाल घर जायो। साथ सामान इण भेलो कीनो, तिण कारण चढ़ी आयो ॥ रा० ॥ १३७ ॥ बेटा छो थे राजवियां रा, बोलो बोल विचारो। और थां ऊपर कौण चढ़ आसी, यो भाई छै थारो ॥ रा० ॥ १३८ ॥ बात सुणी ने राजा लाज्यो, नीचो मुख करी जोवे। भारी वचन कह्यो माता ने, राजा ने नहीं सोवे ॥ रा० ॥ १३९ ॥ जुगवल्लभ तो कहै माता ने, थे लीधो संयम भारो। मौत आपदा किण विध हुई, बात कहो विस्तारो ॥ रा० ॥ १४० ॥ मण-रथ राजा थांरा पिता ने मास्यो, हूं रात ने निकली आई। जनम नमी रो बन में हुवो, हूं मेल आई बन मे भाई ॥ रा० ॥ १४१ ॥ तीर नदी ने बैठी हुन्ती, विमाण विद्याधर नो आयो। देव उचाय ने मोने मांहे मेली, हूं गई समोसरण मांयो ॥ रा० ॥ १४२ ॥ पिता तो थांरा देवता हुवो, दरशण प्रभु को आयो। आज्ञा मांगी ने मैं तो संयम लीधो, भेव्या प्रभु रा पायो ॥ रा० ॥ १४३ ॥ दोनूं राजा रे मैं बैरज सुणियो, लड़सी मांहो मांई। घणा आदमी मरण पामसी, तिण कारण

छूं भाई ॥ रा० ॥ १४४ ॥ जुगवल्लभ राजा वात सुणी ने, चिन्ता फिकर मन आई । जुगवल्लभ तो कहै माता ने, जाय मिलूं छूं भाई ॥ रा० ॥ १४५ ॥ ठीक नही छै नमी राय ने, यो छै म्हारो भाई । नही विश्वास राजवियां केरो, तिण सूं मिलूं छूं पहेली जाई ॥ रा० ॥ १४६ ॥ जुगवल्लभ ने तो दियो समझाई, नमीराय कने जाय । सतियां निजर पड़ी राजा री, विनय करी साहमो आय ॥ रा० ॥ १४७ ॥ हाथ जोड़ी ने राजा वोल्यो, महासतियां किम आई। का सूं कारण पड़ियो थांरे, इसड़े अवसर मांई ॥ रा० ॥१४८॥ कांई कारण थांरे दोनूं राजा रे, झगड़ो पड़ियो मांहो मांई । फौज वन्धी तो थे भेली कीनो, तिण कारण छूं आई ॥ रा० ॥ १४९ ॥ बाप माखो ने मा निकल भागी, गई ए किण रे लारे । देखो ने ए म्हारी धरती लेसी, कही सनमुख माता रे ॥ रा० ॥१५०॥ बेटा थे छो राजवियां रा, बोलो बोल विचारो । और थां ऊपर कुण चढ़ आसी, भाई छै ओ थारो ॥ रा० ॥१५१॥ जुगवल्लभ ने मोटो मेल्यो, खबर पड़ी अनुसारे। नानो वालक नमी ने जाणी, वात कही विस्तारे ॥ रा० ॥१५२॥ वात सुणी ने राजा लाज्यो, नीचो मुख करी जोवे । भारी वचन कह्यो माता ने, राजा ने नही सोवे ॥ रा० ॥ १५३ ॥

नमी राजा तो मन मांहि जाण्यो, जुगवल्लभ राजा म्हारो भाई। नेह सनेह धरी दोनूं बेटा रो, तिण सूं माजी आई। रा० ॥ १५४ ॥ नमी राजा तो मिलण चाल्यो, जुगवल्लभ सामो जाई। हरष भाव सूँ बांह पसारी, मिलिया दोनूं भाई ॥ रा० ॥ १५५ ॥ एकण हाथी रे होदे बेठा, जुगवल्लभ नमी भाई। जुगवल्लभ रा डेरा कानी, हुई अब हरष सवाई ॥ रा० ॥ १५६ ॥ लोक लड़ाई री बातां करता, लड़ता होड़ा होडी। लोकां मन मे अचरज पाम्या. कांई कियो इण मोडी ॥ रा० ॥ १५७ ॥ बैर मिटाय ने मेल करायो, घणा लोक हुवा राजी। घणा जणा रा माथा पड़ता, राख्या छे इण माजी ॥ रा० ॥ १५८ ॥ लोक राजा रे कुशलज हुवो, घर घर हरष बधाई। भलो होज्यो इण सती केरो, यश लीधो जग मांई ॥ रा० ॥ १५९ ॥ राज कचेड़ी में आई बैठा, जुगवल्लभ नमी भाई। जुगवल्लभ मुख अथिर जाणी ने, वैरागरो मन में आई ॥ रा० ॥१६०॥ जुगवल्लभ कहे मोने दीक्षा लेण द्यो, राज करो महारायो। राज ऋद्धि ने सर्व सम्पदा, मैं थाने भोलायो ॥ रा० ॥ १६१ ॥ जुगवल्लभ तो दीक्षा लीधी, हरष घणो. मन मांई। भाई विछोहो दुःख री लहरां, नमी कुमर ने आई ॥ रा० ॥ १६२ ॥ नमी राजा तो राज करे छे,

राखी एक सौ आठो। हुवो नाटक ने घुरै नगारा, दोनूं राज रो पाटो॥ रा०॥ १६३॥ दाघ ज्वर ने जोग करी ने, लेसी संयम भारो। इन्द्र परीक्षा करवा आसी, उत्तराध्ययन विस्तारो॥ रा०॥ १६४॥ दोनूं भायां रे मेल करायो, मैंणरक्षा पाछी आई। गुरणीजी रे पाय लागने, विध सूं बात सुणाई॥ रा०॥ १६५॥ मोटा राजा रे मेल करायो, राखी घणा री बाजी। मैंणरक्षा ना गुण जाणी ने, गुरणी हुई छे राजी॥ रा० ॥ १६६॥ छत्तीस हजार आरज्यां मांहि. गुरणी चन्दन-वाला। तिण रे पाटै पदवी पाई, शिष्यणी रतना री माला॥ रा०॥ १६७॥ चेडानी जे साते पुत्री, भगवंत आप वखाणी। चेलणा मृगावती तीजी प्रभावती, चौथी शिवादे राणी॥ रा०॥ १६८॥ पांचवी पद्मा-वती छठी सुलसा, जेष्ठा सातमी जाणो। सङ्कट पड्यां संती शीलज राख्यो, दमयन्ती नल राणी॥ रा०॥१६९॥ अञ्जना सती छै महिन्द राजा नी बेटी, विखो सह्यो बन मांहि। सङ्कट पड्यां सती शीलज राख्यो, यश कीरत जग मांहि॥ रा०॥ १७०॥ सती द्रौपदी तो आगे हुई. यश लीधो जग मांई। मोटा राजा रो वि-रोध मिटायो, मैंणरक्षा री अधिकाई॥ रा०॥ १७१॥ संयम लेने सुकृत कीज्यो मनुष्य जमारो मत खोज्यो।

जिन शासन मे जिम मैंणरच्छा कीनी, तिम सब कोई कीज्यो, ॥ रा० ॥ १७२ ॥ मैंणरच्छा तो दीक्षा लेई, मन शुद्ध सयम पाले। जिन मारग मे नाम दीपायो, भव-दुषण सहु टाले ॥ रा० ॥ १७३ ॥ मैंणरच्छा तो कुल तारक हुई, लज्या आप री राखी। विखो सह्यो पिण शील न भांज्यो, भगवन्त तेहना साखी ॥ रा० ॥१७४॥ जुगबाहु ने मैंणरच्छा सती, जुगवल्लभ नमी भाई। च्यारां री तो कारज सीधो, मणरथ दुर्गति मांहि ॥रा० ॥ १७५ ॥ व्यसन सातमो परनारी नो, जीव घात घर हाणी। मणरथ राजा नरक पहुन्तो, कुयश.बांधने प्राणी ॥ रा० ॥ १७६ ॥ एक कुव्यसन मणरथ सेव्यो, बहु रुलियो संसारो। सातूं कुव्यसन जे सेवे प्राणी तिण ने दुःख अपारो ॥ रा० ॥ १७७ ॥ विषया रस ते विष सम जाणी ने, सतगुरु सेवा कीजे। मणरथ राजा नी बात सुणी ने, परनारी सङ्ग न कीजे ॥ रा० ॥ १७८ ॥ दान शील तप संयम पालो, दोषण सगला टालो। दया धर्म री समता आणी, शुद्ध आचार ते पालो ॥ रा० ॥१७९॥ धर्म दयामें केवली भाख्यो, ते साचो कर जाणो। जे जाणी सेवे भव प्राणी, ते पामे निरवाणो ॥ रा० ॥१८०॥ जप तप संयम पालो रे भाई, विषय विकार गमाई। जीव जिके तो शिव सुख पावे, श्रीवीर वचन मन लाई ॥ रा० ॥१८१॥

॥ श्री वीतरागाय नमः ॥

लोंकेजी की हुण्डी।

॥ दोहा ॥

ॐ नमः परमेष्टि पद, पांचूं महा सुखकार।
दुरित विघ्न दूरा टले, वर्त्ते जय जयकार ॥१॥
हुण्डी जेह लोंका तणी, अच्छे पुरातन तेह।
तिणमें आगम साखि थी, बोल उनहत्तर जेह ॥ २ ॥
सकल सुगुण शिर सेहरा, श्री कालू गणि राय।
तासु पसाये गुलाब कहै, दोहा रूप बनाय ॥३॥

॥ सद्गुरु विनती ॥

(खम्माच दादरा)

सद्गुरु सद्बुद्धि बढ़ाना मुझे, मेरे स्वामीन् चरणों लगाना मुझे ॥ टेक ॥ महाव्रत पञ्च पञ्च समिति वर, तीन गुप्ति धर चाहना मुझे ॥ स० ॥ १ ॥ आज्ञा मे धर्म अधर्म आण बिन, यही पाठ पढ़ाना मुझे ॥ स० ॥ २ ॥ आत्म ऋद्धि सिद्धि सुख पावे, सोही मारग बताना मुझे ॥ स० ॥ अनादि से भ्रमण कियो भवारयें, अब शिवराह दिखाना मुझे ॥ स० ॥ ४ ॥

जिन वाणी सुन जान लियो अब, सब पापों से छुड़ाना मुझे ॥ स० ॥५॥ भाव दया यही स्व पर की, सुध निज घर की लगाना मुझे ॥ स० ॥ ६ ॥ उलझ रह्यो मोह कर्म जाल में, सुमति दे सुलझाना मुझे ॥ स० ॥ ७ ॥ समकित व्रत पायो हुलसायो, आयो शरण निभाना मुझे ॥ स० ॥ ८ ॥ गुलाबचन्द आनन्द भयो अति, सुख मे सुख अब पाना मुझे ॥ स० ॥ ६ ॥

॥ सोरठा ॥

शहर जैतारण मांहिरे, लोंका गुजराती वली ।
सरूप रूपचन्द ताहिरे, तेहना उपाश्रय थकी ॥१॥
विक्रम संवत् जान रे, अठारह सत गुणतीस मे ।
शुद्ध प्ररूपणा मान रे, देखी पूर्व तिहां तिम लिखी ॥२
तिण अनुसारे देख रे, सूत्र तणा जेह पाठ युत ।
न्याय सहित सुविशेष रे, कहूं जिज्ञासु कारणे ॥ ३ ॥

॥ अथ हुण्डी को बोल ॥

तीनूं हीं काल रा भाव केवल ज्ञानी दीठा, कोई जीव ने नव तत्व रा जाण पणा बिना संसार समुद्र सूं तिरतो दीठो नहीं। साख सूत्र सूयगडांग अध्ययन १२ गाथा १६ वीं ।

॥ दोहा ॥

तीन काल रा भावना, जाणक केवली सोय।
नव तत्व जाण्या विना, तिण न देखा कोय ॥१॥
यथा अवस्थित वस्तु ना, ज्ञाता नेता तंत।
ते बुद्धा पर तार कर, करै कर्म नो अन्त ॥ २ ॥
धुर सूयगडांगे कह्यो, अध्ययन बारमा मांहि।
तत्व यथा तथ्य जानिये, सोलमी गाथा ताहि ॥३॥

॥ सूत्र पाठ ॥

तेतीय उपन्न मणा गयाइ, लोगस्स जाणति तहा गयाइ।
णेतारो अन्नेसि अणन्न णेया, बुद्धा हु ते अंतकडा भवंति ॥

प्र० श्रुतस्कन्ध सूत्र कृताङ्ग अ० १२ गाथा १६

॥ भावार्थ ॥

भूत, भविष्यत् और वर्त्तमान इन तीनों काल के भाव को जानने वाले, यथा अवस्थित वस्तुओंके और नव तत्वों के ज्ञाता नेता हों, स्वयं तरे और दूसरोंको तारे वे बुद्ध स्वत. तत्वो को जानते हुये कर्मों के अन्त करता बनते हैं। अर्थात् तत्वों को जानने से मुक्ति होती है।

॥ बोल दूसरा ॥

राशि दो कही १ जीव राशि २ अजीव राशि। तीसरी राशि कहै जिण ने सात निन्हवां में छट्ठो निन्हव कह्यो। सा० सू० उववाई प्रश्न १६ वें।

॥ दोहा ॥

राशि दोय जिनवर कही, जीव अजीव सु जोय ।
तृतीय राशि कोई कहे, तेह तो निन्हव होय ॥४॥
उववाई सूत्रे कह्यो, प्रश्न उन्नीसवें जान ।
मिश्र राशि तीजी कहे, ते सात निन्हव मे मान ॥५॥
एक समय कार्य न हुवे बहु रत्ता यह पेख ।
जीव है एक प्रदेश में, द्वितीय निन्हव इम देख ॥६॥
साधु लिङ्ग साधू नही, तृतीय निन्हव इम भास ।
चौथू निन्हव इम कहे चिहुंगति क्षण २ नाश ॥७॥
इक समय दो किरिया हुवे, पञ्चम निन्हव एह ।
छट्ठा जीव अजीव मिल, तीजी राशि कहेह ॥८॥
कर्म सर्प कंचुकि परे, जीव तणे लागन्त ।
सप्तम निन्हव जाणवो. कहे एकान्त विरतन्त ॥९॥

॥ सूत्र पाठ ॥

सेजे इके गामागर णगर जाव सन्निवेसेसु, णिण्हका भवन्ति तजहा—बहुरत्ता, जीव पदेसिया, अव्वत्तिया, सामुच्छिया, दोकिरिया ते राशिया. सव्वट्टिया, इच्चे ते सत्त पव्वय णिण्हका ।

सू० उववाई प्रश्न १९ वाँ ।

॥ भावार्थ ॥

वे जो ग्राम आगर यावत् सन्निवेष में जो निन्हव होते हैं सो कहते हैं—१ बहुत समय में कार्य होय एक समय में नहीं होय [जमालीवत्]

२ एक प्रदेश में जीव है, ऐसा माननेवाला [तीसगुप्तवत्] ३ साधुओं को देख के कहे साधूपना है या नहीं [अपाड़ाचार्य के शिष्यवत्] ४ नरकादि चारों गति का क्षण २ में विनाश होता है [अश्व मित्रवत्] ५ एक समय में दो किरिया लगती है ऐसा मानने वाला [गर्गाचार्य वत्] ६ जीवराशि १ अजीव राशि २ जीवाजीव राशि ३ यों तीन राशि माननेवाला [गोष्ट महिलावत्] ७ जैसे सर्प के कञ्चुकी है वैसे जीव के कर्म लगते हैं ऐसा मानने वाला [ ] इस प्रकार जिन मत के छिपानेवाले प्रवचनों के निन्हव होते हैं।

॥ बोल तीसरा ॥

जीव अजीव त्रस स्थावर जाणे नहीं तिण रा पच्चक्खाण दुःपच्चक्खाण कह्या, साख सूत्र भगवती शतक ७ वां उद्देश्य २ रा।

॥ दोहा ॥

जीव अजीव जाणे नहीं. त्रस स्थावर नहीं जाण।
त्याग करे मारण तणा. तेहना के दुःपच्चक्खाण ॥१०॥
सप्तम शतके भगवती, द्वितीय उद्देशे पेख।
जाण्यां विन व्रत किम हुवे, संवर आश्रयी लेख ॥११॥

॥ सूत्र पाठ ॥

जस्सणं सव्व पाणेहिं, जाव सव्व सत्तेहिं, पच्चक्खाय मितिवदमाणस्स न एव, अभी समण्णा गय भवइ. इमे जीवा इमे अजीवा इमे तस इमे थावरा, तस्सणं सव्व पाणेहिं जाव सव्व सत्तेहिं पच्चक्खाय मितिवदमाणस्स णो सुपच्चक्खाय, दुपच्चक्खाय भवइ।

(सूत्र श्री भगवती शतक ७ वा उद्देश्य २ रा)

॥ भावार्थ ॥

जो सर्व प्राणी यावत् सर्व सत्वोंके मारने का प्रत्याख्यान कहे, किन्तु ऐसा नहीं जाने कि यह जीव है, यह अजीव है, यह त्रस है, यह स्थावर है, ऐसा अज्ञानी सर्व प्राण भूत जीव सत्व मारने के त्याग किये कहे तो उसके दुःपच्चक्खाण है, किन्तु सुप्रत्याख्यान नहीं।

॥ बोल चौथा ॥

जीव अजीव ने जाणै नहीं, जीव अजीव दोना ने जाणै नहीं तिण ने संयम री ओलखणा नहीं। साख सू० दशवैकालिक अध्ययन ४ गा० १२ वीं।

॥ दोहा ॥

दशवैकालिक में कह्यो, तूर्य अध्ययने ताहि।
जीव अजीव जाणे नही, बारवी गाथा मांहि ॥१२॥
जीव अजीव अजाणतो, तसु संयम किम होय।
जाणी त्याग कियां थकां, चारित्र गुण अवलोय ॥१३॥

॥ सूत्र पाठ ॥

जो जीवे वि न याणाइ, अजीवे वि न याणाइ।
जीवा जीवो अयाणतो, कहं सो नाहीय सयम ॥१२॥

दशवैकालिक अ० ४ गाथा १२

॥ भावार्थ ॥

जो जीव को भी नहीं जाने, अजीव को भी नहीं जाने। जीवों अजीवों को ही नहीं जाने उसके संयम कहाँ है। अर्थात् जीवाजीव जाने बिना संयम नहीं है।

॥ बोल पांचवां ॥

सम्यक्त्व विना चारित्र नहीं समकित विना व्रत नहीं। सा० सू० उत्तराध्ययन २८ वें गा० २६ वीं।

॥ दोहा ॥

समकित विन चारित नहीं, नहीं समकित विन व्रत।
उत्तराध्ययन अठवीसमे, गुणतीसमी गाथा सत्त ॥१४॥
दर्शन ज्ञान थकी हुवे, समकित चारित धर्म।
तिणसूं पूर्व समकित लह्यां, पामे चारित पर्म ॥१५॥

। सूत्र पाठ ।

नत्थि चरित्त सम्मत्त विहुणा, दंसणे उभयव्व।
सम्मत्त चरित्ताइ जुगव, पुव्वं च सम्मत्तम् ॥२९॥

सूत्र उत्तराध्ययन अ० २८ गा० २६।

॥ भावार्थ ॥

सम्यक्त्व अर्थात् शुद्ध श्रद्धा विना चारित्र नहीं होता है। ज्ञान से यथार्थ ज्ञान के शुद्ध श्रद्धने से सम्यक्त्वी होता है और सम्यक्त्वी होने से चारित्र गुण उत्पन्न होता है। इसलिये सम्यक्त्व चारित्र में पहिले सम्यक्त्व मुख्य है।

॥ बोल छट्ठा ॥

ज्ञान विना दया नहीं दया चारित्र एक ही कह्यो। सा० सू० दशवैकालिक अ० ४ गा० १० वीं।

॥ दोहा ॥

दया नही है ज्ञान बिन, चारित्र दयाज एक।
ज्ञान सहित संयम हुवे, समझो आण विवेक ॥१६॥
प्रथम ज्ञान पाछे दया, इम सर्व संयती होय।
अज्ञानी जाणे किस्यूं, पाप छेदे किम जोय ॥१७॥
चौथे अध्ययने कह्यो, दशवैकालिक वाय।
दशमी गाथा ने विषे, भाख्यो श्री जिनराय ॥१८॥

॥ सूत्र पाठ ॥

पढम नाणं तओ दया, एव चिट्ठइ सव्वं संजए।
अन्नाणी किं काही, किंवा नाहीय छेय पावग ॥१०॥

॥ भावार्थ ॥

प्रथम ज्ञान और पीछे दया, अर्थात् ज्ञान द्वारा जीव अजीवादि को जानने से षट् जीव निकायों के मारने का त्याग करेगा तब दया होगी। इसी तरह सर्व संयती होते हैं। अज्ञानी को जब यथार्थ ज्ञान ही नही तब वह दया किसकी करेगा और कैसे पाप कर्म छेदेगा।

॥ बोल सातवां ॥

असंयती अव्रती अपच्चक्खाणी ने सूझतो असूझतो, प्राशुक, अप्राशुक देवै तिण ने एकान्त पाप कह्यो। सा० सू० भगवती श० ८ उ० ६।

॥ दोहा ॥

तथा रूप जे असंयती, वलि अविरति जेह ।
च्यार प्रकारे आहार तसु, श्रावक प्रति लाभेह ॥१९॥
सचित्त अचित्त प्राशुक वली, अप्राशुक अवधार ।
देवै दोष सहित वा, दोष रहित निरधार ॥२०॥
दियां हे प्रभु ! शुं करइ, इम गौतम पूछन्त ।
जिन कहे एकान्त पाप करै, नही कांई निर्जरा हुन्त ॥२१॥
अष्टम शतके भगवती, षष्टम उद्देशा मांहि ।
एकान्त पाप कह्यो प्रभु, निर्जरा किञ्चित् नाहिं ॥२२॥

॥ सूत्र पाठ ॥

समणो वासगस्सणं भन्ते तहारूव असंजय अविरय अपडिहय पच्चक्खाय पाव कम्मे फासु एणवा अफासु एणवा एसणिज्जेणवा अणेसणिज्जेणवा असणं पाण खाइम साइमेणं, पडिलामे माणस्स किं कज्जइ, गोयमा ! एगन्त सोसे पावे कम्मे कज्जइ णत्थि से काइ निज्जरा कज्जइ ।

सा० सू० भगवती श० ८ उ० ६ ।

॥ भावार्थ ॥

श्रावक हे भगवान तथा रूप असंयती, अव्रती और जिसके पापकर्म के त्याग नहीं ऐसे अप्रत्याख्यानी को प्राशुक अप्राशुक सदोष वा निर्दोष आहार पाणी खादिम स्वादिम प्रतिलाभता हुआ क्या करता है। तब भगवान ने कहा हे गौतम ! एकान्त पाप कर्मोपार्जन करता है वह किञ्चित निर्जरा नहीं करता है ।

॥ सोरठा ॥

एह पाठ नूं अर्थ रे, कोई जन इहां इम करै।
जो देवै मोक्षार्थ रे, तो तसु एकान्त पाप हुवै ॥२३॥
अथवा तसु गुरु जान रे, दियां मिथ्यात्व नूं पाप है।
यदि अनुकम्पा आन रे, देवै तो तसु पाप नहीं ॥२४॥
इम निज मत अनुसार रे, सूत्र विरुद्ध जे को कहै।
पिण तसु उत्तर सार रे, बुद्धिवन्त न्याय विचारिये ॥२५॥
न कह्यो सूत्रे एम रे, मोक्षार्थी दा गुरु समझ।
तो निज मन थी कहो केम रे, भावार्थ समझ्यां विना।२६।
तथा रूप छै जेह रे, असंयती ना भेषयुत।
तसु गुरु किम जाणेह रे, श्रावक जेह भगवान रा ॥२७॥
वलि दोष सहित किम देय रे, श्रावक गुरु जाणी करी।
न्याय विचारि लेय रे, पक्षपात चित्त छांड़ि करि ॥२८॥
अल्प आयु बन्धाय रे, असूझतो दियां साधु ने।
तीजा ठाणा मांय रे, वलि ठाम २ सिद्धान्त मे ॥२९॥
दोष सहित दियां ताहि रे, पाप हुवे पिण धर्म नहीं।
देखो आगम मांहि रे, असूझता थी पुण्य नहीं ॥३०॥
जो गुरु जाणी तास रे, कदा निर्दोष देवै तसु।
तो पाप एकान्त विमास रे, इहां कहो किण कारणे ॥३१॥
न देऊं अन्य तीर्थी प्रतेह रे, वलि देवाऊं नहीं।

इम सप्तम अङ्गेह रे, आनन्द श्रावक अभिग्रह लियो ॥३३॥
पुनः सम्यक् दृष्टि जेह रे, असंयती ना दान ने ।
मोक्ष अर्थ अछेह रे, जो कदा देवै जान करि ॥३४॥
तो पिण पाप ही लाग रे, तुम लेखे मिथ्यात्व नूं ।
नहीं मुक्ति रो माग रे, सांसारिक जे दान छै ॥३५॥
मोक्ष अर्थ दियां तेह रे, तेहने एकान्त पाप कह्यो ।
तो अनुकम्पा एह रे, मुक्ति काज नहीं जाणवी ॥३६॥
अनुकम्पा संसार रे, स्नेह राग युत जे हुवै ।
आख्या पाप अठार रे, तिण मे राग नवमूं कह्यो ॥३७॥
असंयती नूं जोय रे. अथवा अविरति तणो ।
पुद्गलीक सुख वंछे सोय रे, ते निज आज्ञा वाहिरै ॥३८॥
करणी जे करै कोय रे. पुण्य पुद्गल सुख कारणै ।
तिण मे धर्म न होय रे. पुण्य वन्ध पिण हुवै नहीं ॥३९॥
भगवती वृत्ति मझार रे, अर्थ कियो इण पाठ नूं ।
मुक्ति अभिलाषा धार रे, दीधां पाप एकान्त हुवै ॥४०॥
तिण लेखे पिण तन्त रे, असंयति वा अविरति नूं ।
दान पाप एकान्त रे, मोक्ष मार्ग नहीं जाणवो ॥४१॥
एकान्त पाप नूं अर्थ रे. अष्टादशमूं जो करै ।
तो ठाम २ सूत्रार्थ रे, एकान्त पाठ कह्या बहु ॥४२॥
सुख शय्या कही च्यार रे, ठाणांगे चौथा स्थान मे ।
एकान्त निरजरा धार रे, मुनि सम भावे वेदन सहै ॥४३॥

जो सम भावै न सहेह रे, तो पाप एकान्ते हुवै ।
इहां मुनि रे किस्यूं गिणेह रे, एकान्त पाप मिथ्यात्व नूं । ४४
वलि धुर शतक निहाल रे, अष्टम उद्देशे कह्यूं ।
अव्रती ने एकान्त बाल रे, एकान्त पण्डित साधु ने ॥४५॥
अष्टम शतक रे मांहि रे, छठे उद्देशे भगवती ।
तथा रूप सयति ताहि रे, दियां एकान्त निर्जरा हुवै ॥४६॥
जो एकान्त नूं जेह रे, छेहलो भेद एक ही कहै ।
तो ठाम २ सूत्रेह रे, एकान्त अर्थ छेहलूं किस्यूं ॥४७॥
तिण सूं एकान्त पाप रे, असंयती अविरति ने ।
दीधां जिन कह्यो आप रे. पाठ मांहि प्रगट पणै ॥४८॥
एक अन्त दो शब्द रे, तेहना अर्थ छै जूजूआ ।
एक तेह केवल लब्ध रे, अन्त तेह निश्चय जाणवो ॥४९॥
छट्ठा काण्ड मझार रे, नवम श्लोके देखलो ।
अन्त तेह निश्चय धार रे, हेम नाम माला विषे ॥५०॥
तिणसूं भगवती मांहि रे, दियां असयति अविरति नें ।
एकान्त पाप हिज थाय रे, प्रभु आख्यो तेह सत्य है ॥५१॥

॥ बोल आठवां ॥

शास्वता अशास्वता री खबर नहीं, तिण ने बोध रहित कह्यो । सा० सू० सूयगडांग अ० १ उ० २ गाथा ४ थी ।

॥ दोहा ॥

शास्वत अने अशास्वता, तेहनी खबर न कांय ।
बोध रहित तिण ने कह्यो, प्रथम सूयगडांग मांय ॥५२॥
बाल थकां पण्डित पणो, माने तेह अयाण ।
नियत अनियत जाणै नहीं, द्वितीयाध्ययने चौथी जाण ।५३

॥ सूत्र पाठ ॥

एव मेंयाणि जयता, बाल पंडिय माणिणाो । नियया नियय सत, अयाणाता अबुद्धिया । ४॥

प्र० सू० कृताङ्ग अ० १ उ० २ गा० ४ ।

॥ भावार्थ ॥

बाल अर्थात् मूर्ख अपने को पण्डित मान रहे हैं । परन्तु उन्हें नियत अनियत यानी शास्वत अशास्वत की खबर नहीं है वे अजान बोध रहित हैं ।

॥ बोल नवमां ॥

साधू थोड़ा असाधू घणा । सा० सू० दशवैकालिक अ० ७ गा० ४८ वीं ।

॥ दोहा ॥

साधू थोड़ा लोक मे, घणा असाधू जान ।
ते असाधु थका बहु इम कहै, अमे साधु गुणखान ॥५४॥
दशवैकालिक सातमे, अड़तालीसवो गाथा ताहि ।
असाधु ने साधु कहणो नही, साधु ने साधु कहाहि ॥५५॥

॥ सूत्र पाठ ॥

बहवे इमे असाहु, लोये वुचन्ति साहुणो ।

न लवे जसाहु साहुत्ति, साहु साहुत्ति आलवे ॥ ४८ ॥

दशवैकालिक अ० ७ गा० ४८ ।

॥ भावार्थ ॥

बहुत ऐसे असाधु लोक में हैं जो कहते हैं हम साधु हैं। परन्तु विज्ञजनों को असाधुओं को साधु नहीं कहना चाहिये ।

॥ बोल दशमां ॥

साधु रे सर्व थकी प्राणातिपात रा त्याग छै तिण रे अपच्चक्खाण री अपरिग्रह री किरिया नहीं । सा० सू० पन्नवणा पद २२ वें ।

॥ दोहा ॥

सर्व प्रकारे साधु रे, प्राणातिपात रा त्याग ।
अपच्चक्खाण ने परिग्रह तणी, तसु किरिया नहीं लाग ।५६
बावीसम पद आखियो, पन्नवणा रे मांहि ।
प्राणातिपात निवृत्ति ने, अव्रत परिग्रह नांहि ॥५७॥

॥ सूत्र पाठ ॥

प्राणातिपात विरयस्सण भन्ते जीवस्स परिग्गहिया किरिया कज्जति? गोयमा णो इणट्ठे समट्ठे, प्राणातिपात विरयस्सण भन्ते जीवस्स अपच्चक्खाण वत्तिया किरिया कज्जति ? गोयमा णो इणट्ठे समट्ठे ।

पन्नवणा पद २२ वाँ ।

॥ भावार्थ ॥

प्राणातिपात से हे भगवान् जो जीव निवृत्ते हैं उन्हें परिग्रह की क्रिया लगती है। उत्तर—हे गौतम यह अर्थ समर्थ नहीं है अर्थात् नहीं लगती है। प्राणातिपात से हे भगवान् जो जीव निवृत्ते है उन्हें अप्रत्याख्यान की क्रिया लगती है। उत्तर—हे गौतम यह अर्थ समर्थ नहीं है अर्थात् नहीं लगतो है।

॥ बोल ग्यारहवां ॥

साधु रो आहार असावद्य कह्यो, व्रत में कह्यो, मोक्ष साधन रो हेतु कह्यो, पाप कर्म रहित कह्यो। सा० सू० दशवै० अ० ५ गाथा ९२ वीं।

॥ दोहा ॥

असावद्य साधु तणो. जयणायुत जेह आहार।
पाप रहित छै व्रत में, भाख्यो श्री जगतार ॥५८॥
दशवैकालिक पंचमे, प्रथम उद्देश मभार।
गाथा बाणवों मे कह्यो, मोक्ष साधन सुविचार ॥५९॥

॥ सूत्र पाठ ॥

अहो जिणेहिं असावज्जा, वित्ती साहूण देसिया।
मोक्ख साहण हेउस्स, साहु देहस्स धारणा ॥९२॥

दशवैकालिक अ० ५ गा० ९२।

॥ भावार्थ ॥

जिनेश्वरों ने साधुओं का आहार करना असावद्य कहा, वृत्ति पुष्ट का

कारण कह्या तथा मोक्ष साधन का उपाय और साधु के शरीर का धारण करनेवाला है ।

॥ बोल बारहवां ॥

भगवान श्री महावीर स्वामी ठंडो आहार घणा दिनां रो नीपनूं लियो कह्यो। सा० सू० प्र० आचाराङ्ग अध्ययन ८ उद्देशा ४ गा० १३ वीं ।

॥ दोहा ॥

घणा दिना रो नीपनूं, शीतल वासी पिण्ड ।
शान्ति भाव धरि लेवता, महावीर गुणमण्ड ॥६०॥
प्रथम अङ्ग में देखल्यो, अष्टम (नवम) अध्ययन उदार ।
चोथा उद्देशा विषे, तेरवी गाथा सार ॥ ६१ ॥

॥ सूत्र पाठ ॥

अवि सूइय वा सुक्क वा, सीय पिंड पुराण कुम्मास ।
अदु वक्कस पुलागवा, लद्धे पिंडे अलद्धए दविए ॥१३॥

॥ भावार्थ ॥

भगवान् श्री महावीर स्वामी छद्मस्थपने में भीजा हुआ सूखा ठंडा पुराणा बहुत दिनों का रांधा हुवा उडद का तथा पुराने धान्य का बना हुआ निरस धान्य का बना हुआ आहार मिलने से शान्ति भाव से भोगवते यदि नहीं मिलता तो भी शान्ति भाव से रहते ।

॥ बोल तेरहवां ॥

केवल ज्ञानी री प्ररूपणा बिना आप आप री

प्ररूपणा करे तिण ने किञ्चित् मात्र जाणपणो नहीं। सा० सू० सूयगडांग अ० १ उ० २ गाथा १४ वीं।

॥ दोहा ॥

केवली प्ररूप्या धर्म बिन अपनी मति अनुसार।
करै प्ररूपणा जेहने, जाण पणो न लिगार ॥६२॥
इक २ माहण श्रमण वलि, कहै म्हे छां सर्व जाण।
पिण प्राणी सहु लोक मे, तेहना जेह अजाण ॥६३॥
ते किञ्चत नहीं जाणता, धुर सूयगडांग मांहि।
प्रथम अध्ययने, जाणिये, द्वितीय उद्देशे ताहि ॥६४॥

॥ सूत्र पाठ ॥

माहणा समणा एगे, सव्वे नाण सय वए।
सव्व लोगे वि जे पाणा, न ते जाण किंचणे ॥१४॥

॥ भावार्थ ॥

जगत में एक २ श्रमण ब्राह्मण ऐसे हैं सो कहते हैं हम सर्व जानकार हैं परन्तु लोक में सर्व प्राणी हैं उन्हे वे किञ्चित् मात्र नहीं जानते हैं। अर्थात् निज मतानुसार एक २ श्रमण ब्राह्मण कहते हैं हम सर्व जानते है परन्तु उन्हें किञ्चित् मात्र जाणपना नहीं है।

॥ बोल चौदहवां ॥

श्रावक ने केवलज्ञानी प्ररूप्या धर्म विना दूजो धर्म मानणो नहीं। सा० सू० उववाई प्र० २० वां।

॥ दोहा ॥

श्रावक सत्य करि जानता केवली भाषित धर्म ।
दूजो धर्म न मानणो, एह जिन शासन मर्म ॥६५॥
निर्ग्रन्थ बचनज अर्थ है, निर्ग्रन्थ प्रवचन परमार्थ ।
अन्य जन ने पिण इम कहे, प्रवचन बिना अनर्थ ॥६६॥
लाध्या ग्रह्या अर्थ पूछ कर, धार्‌या विनय सहित ।
अस्थि अस्थि मज्जा तसु, प्रेम राग रङ्ग रत्त ॥६७॥
सूत्र उववाई मे कह्यो, प्रश्न बीसवें ठीक ।
शंक रहित जिन बचन मे, त्यांने मुक्ति नजीक ॥६८॥

॥ सूत्र पाठ ॥

निग्गन्थे पावयो निस्संकिया, णिक्कंखिया, निव्वितिगिच्छा, लद्धट्ठा, गाहियट्ठा; पुच्छियट्ठा, अभिगट्ठा, विणिच्छियट्ठा, अट्ठि मिंज पेमाणु राग रत्ता, अयमाउसो णिग्गन्थे पावय णो अट्ठे अय परमट्ठे, सेसे अणट्ठे ।

सू० उववाई प्र० २० वा ।

॥ भावार्थ ॥

वे श्रावक निर्ग्रन्थ प्रवचन में नि.शक है अर्थात् शङ्का रहित है आ कांक्षा रहित है अर्थात् पाखण्डियों का ढोंग देख के उनकी वाञ्छा नहीं करते । वितिकिच्छा रहित है यानी स्वय जो जिनाज्ञा माँहि की करणी करते हैं उसके फल में सन्देह नहीं रखते । वे सूत्रों का अर्थ पाये हैं, ग्रहण किये हैं, अर्थ पूछे हैं, प्रवचनों के अर्थों के सन्मुख हुए हैं, और विनय सहित ग्रहण किये हैं, जिनकी अस्थि और अस्थि की मज्जा जिन

वचनों से रगी हुई हैं, अर्थात् निग्रन्थ प्रवचनोंमें लवलीन हो रहे हैं, और दूसरों को भी ऐसा ही कहते हैं कि "आयुष्मानों" निर्ग्रन्थ वचन है सो ही अर्थ है, सोही परमार्थ है। इनके अतिरिक्त सब अनर्थ है।

॥ बोल पन्द्रहवां ॥

समकिती ने निसङ्क निकंख विदगंछा रहित रहणो कह्यो सा० सू० उत्तराध्ययन अ० २८ वां गा० ३१ वीं।

॥ दोहा ॥

शंक नही जिन वचन मे, कंखा अनमति नांहि।
करणी फल संन्देह नही, ते नि विदगंछ कहाहि ॥६९॥
असूढ़ दिट्ठी परमत तणी, देख प्रशंसा आदि।
अन्य मत दृष्टि करे नही, चित मे धरे समाधि ॥७०॥
उववूह गुणी ना गुण करे, स्थिरि कारण स्थिर होय।
वत्सल भाव सहु थकी, धर्म प्रभाव न जोय ॥७१॥
उत्तराध्ययन अठवीस मे, समकित ना आचार।
आराधे तेह समकिती, इकतीसवी गाथा धार ॥७२॥

॥ सूत्र पाठ ॥

निसाक्खिय निकखिय निव्वितिगिच्छा अमूढ दिट्ठीय उववूह थिरी करणे वच्छल पभावणे अट्ठ।

उत्तराध्ययन अ० २८ गा० ३१।

॥ भावार्थ ॥

१ जिन वचनों में शङ्का नहीं करै अर्थात् भगवान ने एक शरीर में अनन्ते जीव आदि अनेक बातें कही है सो सत्य है।

२ निकंखिय अर्थात् जो अन्य मतवाले कहते हैं वह भी ठीक होगा ऐसी वाँछा न करे।

३ निव्वितिगिच्छा यानी जो तप नियमादि करणी करता हूं सो फल दायक होगी या नहीं ऐसी विचारणा नहीं करे।

४ अमूढ दिट्ठिय अर्थात् अन्य मत वालों की अनेक प्रकार प्ररूपणा को देखके उनकी तरफ खयाल न करे।

५ उववूह यानी गुणवन्त पुरुषों के गुणगान करे।

६ थिरि करणे अर्थात् सम्यक्त्व में स्थिर रहै।

७ वत्सल यानी षट् कायों के जीवों पै वात्सल्य भाव रक्खें।

८ प्रभावना अर्थात् जैन धर्म की प्रभावना करे। यह सम्यक्त्व के आठ आचार कहे हैं।

॥ बोल सोलहवां ॥

केवलज्ञानी रा बचना री खबर नहीं जिकां रे घणो बाल मरण अकाम मरण होसी। सा० सूत्र उत्तराध्ययन अ० ३६ गा० २६० वीं।

॥ दोहा ॥

जे जिन बचन जाणे नहीं, बाल मरण तसु जाण।
घणा अकाम मरणे मरे, उत्तराध्ययने छत्तिसमे पिछाण।७३

॥ सूत्र पाठ ॥

बाल मरणाणि बहुसो, अकाम मरणाणि चेवय बहूसो।
मरिहिंति ते बराया, जिण वयण जे न याणंति॥२७०॥

॥ भावार्थ ॥

वहुत वाल मरण और वहुत से अकाम मरण मरै जो जिन ववनों को नहीं जानता है।

॥ बोल सतरहवां ॥

प्रवचन सोही अर्थ, प्रवचन सोही परम अर्थ, सा० सू० उववाई प्र० २० वां।

॥ दोहा ॥

प्रवचन सोही अर्थ है, प्रवचन सो परमार्थ।
उववाई प्रश्न बीसवें, बाकी सर्व अनर्थ ॥७४॥

॥ सूत्र पाठ ॥

अयमाउसो णिग्गन्थे पावयणे अट्टे, अय परमट्टे, सेसे अणट्टे।

उववाई प्र० २० वें।

॥ भावार्थ ॥

हे आयुष्मानों निर्ग्रन्थ प्रवचन ही अर्थ है यही परमार्थ है। इनके सिवाय सर्व अनर्थ है।

॥ बोल अठारहवां ॥

केवलियां रो आचार सोही छद्मस्थ रो आचार, केवलियां रो अनाचार सोही छद्मस्थ रो अनाचार। साख सूत्र आचारांग अ० २ उ० ६ ट्ठो।

॥ दोहा ॥

केवलियां रो आचार सो, छद्मस्थ रो आचार ।
केवलियां रो अनाचार ते, छद्मस्थ रो अनाचार ॥७५॥
कुशल पुरुष जे केवली, नहीं बन्धाय मूकाय ।
जे आरंभ्यो तिम आरंभे, ते बुद्धिवन्त कहाय ॥७६॥
प्रथम आचाराङ्गे कह्यो, दूजे अध्ययन उदार ।
छट्ठा उद्देशा बिषे, निपुण न्याय अवधार ॥ ७७ ॥

॥ सूत्र पाठ ॥

कुसले पुण णो बद्धे णो मुक्के से ज च आरम्भे जे च अणारम्भे अणा रहइ च ण आरम्भे छण छण परिन्नाय लोग संन्न च सव्वसो।

आचाराङ्ग अ० २ उ० ६ ठा

॥ भावार्थ ॥

केवली भगवान बन्धे हुवे नहीं, छूटे हुवे नहीं, जैसे वे वर्त्ते होय वैसे ही करना और जैसा उनका आचरण नहीं है वैसा नहीं आचरे। अर्थात् सयम क्रिया जैसी केवलियों की है वैसी ही अकेवलियों की है। हिंसा तथा लोक संज्ञा को जान कर उनका परिहार करना।

॥ बोल उन्नीसमां ॥

वक्तव्या २ कही १ स्व समय वक्तव्वया, २ पर समय वक्तव्वया। स्व समय वक्तव्वया की तो साधु आज्ञा दे तथा मानण योग छै, पर समय वक्तव्वया में सात अवगुण कह्या— १ अनर्थ, २ अहित, ३

असंयम, ४ अक्रिया, ५ उन्मार्ग, ६ उपयोग रहित ७ मिथ्यात्व सहित । सा० सू० अनुयोग द्वार सात नयां को समास पूरो हुवो जठे ।

॥ दोहा ॥

होय वक्तृता जाणवी, स्वपर समय विचार ।
उभय मिल्यां तीजी हुवे, भाखी अनुयोग द्वार ॥७८॥
वक्तृता स्व समय जे, श्री जिन आगम सार ।
पाखण्ड रचिता पर समय, तेह नी वात असार ॥७९॥
मुनि आज्ञा स्व समय नी, पर समय अवगुण मात ।
अहित अनर्थ असद्भाव वलि. अक्रिया उन्मार्ग जात ॥८०॥
ते उपदेश वा योग्य नहीं, दरशन जे मिथ्यात ।
यह सातों अवगुण कह्या. नहीं गुण छै तिलमात ॥८१॥
कांइक जिन सिद्धान्त नो, कांइक पर सिद्धान्त ।
बिहुं मिल तीजी पिण हुवे, वक्तव्यता आख्यात ॥८२॥
स्व तेह स्व मां प्रक्षेपवो, पर तेह पर मां जोय ।
तिण सुं दोय वक्तव्यता, न्याय हिये अवलोय ॥८३॥
जिण प्रणीत सिद्धान्त ते, सक्षेपे आख्यात ।
वलि विस्तार प्ररूपणा, कहे दृष्टान्त विख्यात ॥८४॥
विशेष करि दर्शावतां, परिषध में उपदेश ।
मुनि स्व समय दृढ़ावता, जिनोक्त वचन हमेश ॥८५॥

आगम वच ते स्व समय, तेहिज मानण योग ।
वक्तृता पर शास्त्र नी, जाणो तास प्रयोग ॥८६॥
नैगम संग्रह व्यवहार जे, इच्छे वक्तृता तीन ।
स्व पर मिश्र इम त्रण हुवे, ऋजु सूत्र दोय लीन ॥८७॥
शब्दादिक त्रण नयतिका, इच्छे वक्तृता एक ।
स्व समय तेहिज सत्य है, पर ते सहु अविवेक ॥८८॥

॥ सूत्र पाठ ॥

से किं त वत्तव्वया ? वत्तव्वया तिविहा पन्नता, तजहा—१ ससमय वत्तव्वया, २ पर समय वत्तव्वया, ३ ससमय पर समय वत्तव्वया, से किं त ससमय वत्तव्वया ? ससमय वत्तव्वया—जत्थणा ससमय आघ विज्जंति पणणा विज्जति परूविज्जति दसइ नि दसिज्जइ उवदसिज्जइ से त ससमय वत्तव्वया। से किं त पर समय वत्तव्वया ? जत्थणा पर समय आघविज्जति जाव उवदसिज्जन्ति से त पर समय वत्तव्वया । से किं त ससमय पर समय वत्तव्वया ? जत्थणा ससमय पर समय आघविज्जति जाव उवदसिज्जति से त ससमय परसमय वत्तव्वया इयाणिको न ओ के वत्तव्वय इच्छति ? तत्थ णेगम सगह ववहारो तिविह वत्तव्वय इच्छति तजहा—ससमय वत्तव्वय पर समय वत्तव्वय ससमय पर समय वत्तव्वय। उज्जु सुओ दुविह वत्तव्वय इच्छइ तजहा-ससमय वत्तव्वय पर समय वत्तव्वय तत्थणा जासा ससमय वत्तव्वया सा ससमय परिठ्ठाजा, सा परसमय वत्तव्वया सा पर समय पारिठ्ठाजा तम्हा दुविहा वत्तव्वया णत्थि तिविहा वत्तव्वया । तिणि सद्दा नया

राग ससमय वत्तव्वय इच्छन्ति णत्थि पर समय वत्तव्वया, कम्हा ? जम्हा परसमय १ अणट्टे, २ अहेउ, ३ असब्भावे, ४ अकिरिए, ५ उम्मग्गे, ६ अणुवएसे, ७ मिच्छा दसण, मितिकट्टु तम्हा सव्व ससमय वत्तव्वया णत्थि पर समय वत्तव्वया, से त वत्तव्वया।

अनुयोग द्वार सूत्र।

॥ भावार्थ ॥

प्रश्न—वक्तव्यता कितने प्रकार की है। उत्तर—वक्तव्यता तीन प्रकार की सो कहते हैं—१ स्व समय, २ पर समय, ३ और स्वपर समय वक्तव्यता। स्वसमय वक्तव्यता किसे कहते हैं? "स्वसमय अर्थात् स्वमत जिन प्रणीत सूत्रों को संक्षेप से कहे, विस्तार पूर्वक कहे, प्ररूपणा करे, दृष्टान्तादि कर दर्शावे, प्रपधा में उपदिशे, विशेष कर दर्शावें, सो स्वसमय वक्तव्यता।" अहो भगवान् पर समय वक्तव्यता किसे कहते हैं? "जो अन्य मत के शास्त्र उक्त प्रकार सामान्य प्रकार कहे, प्ररूपे, दृष्टान्त से कहे, विस्तार से कहे, विशेष कर दर्शावे, और उपदिशे, वह पर समय वक्तव्यता है। स्वपर समय वक्तव्यता किसे कहते हैं? "जो स्वमत के शास्त्रों और परमत के शास्त्रों को शामिल करके कहे यावत् उपदिशे, सो स्वपर समय वक्तव्यता है।" अब नयों का समास कहते हैं—नैगम संग्रह और व्यवहार यह तीन नय वस्तु वक्तव्यता को माने, और ऋजु सूत्र नय दो प्रकार की वक्तव्यता को माने, स्वसमय और पर समय वक्तव्यता। परन्तु दोनों को मिला के मिश्र वक्तव्यता को नहीं माने क्योंकि जो स्व समय वक्तव्यता है उसे स्वमत में स्थापन करे, और जो पर समय वक्तव्यता है उसे पर मत में स्थापन करे, इसलिये दोनों ही प्रकार की वक्तव्यता है। शब्द और समभिरूढ़ और एव भूत नय केवल एक स्वसमय वक्तव्यता को ही माने, परन्तु पर समय वक्तव्यता को नहीं इच्छे, क्योंकि जो पर समय वक्तव्यता है उसमें अनर्थ है, अहेतु है, असद्भाव है,

क्रिया रहित है, उन्मार्ग है, कुउपदेश है, मिथ्या दर्शन है। यह सात दोष पर शास्त्र में है। अत. एक स्व समय वक्तव्यता ही है पर समय वक्तव्यता नहीं।

॥ बोल बीसवां ॥

केवली प्ररूपियो धर्म एकान्त प्रधान कह्यो सा० सू० प्र० सूयगडांग अ० ६ गा० ७।

॥ दोहा ॥

केवल ज्ञानी भाषियो, तेहिज धर्म एकान्त।
धुर सूयगडांगे छट्ठे, सप्तमी गाथा तंत ॥८९॥
प्रधान धर्म श्री जिन कह्यो, तसु नेता वर्द्धमान।
शोभे सहु देवां विचे, इन्द्र समा गुण खान ॥९०॥
सब नेतां मे श्रेष्ठ है, काश्यप गोत उत्पन्न।
दिव्य धर्म जिनवर कह्यो, तेहिज धर्म सुमन्न ॥९१॥

॥ सूत्र पाठ ॥

अणुत्तर धम्म मिणं जिणाणं, णेया मुणी कासव आसुपन्ने।
इन्देव देवाण महानुभावे, सहस्स णेता दिविणं विसिट्ठे ॥७॥

प्र० सूयगडाग अध्ययन ६ ठा।

॥ भावार्थ ॥

प्रधान धर्म हे जिनेश्वरों का कहा हुआ, उनके नेता मुनीश काश्यप गौत्रोत्पन्न श्री महावीर स्वामी हैं वे हजारों नेताओं में सुशोभित हैं।

॥ बोल इक्कीसमां ॥

केवली प्ररूप्यो धर्म यथार्थ सरल शुद्ध माया कपटाई रहित कह्यो। सा० सू० सूयगडांग अ० ६ गाथा १।

॥ दोहा ॥

धर्म यथा तथ्य आखियो. जेह माहण मतिवन्त।
कपट रहित तेह सरल छे, जिनोक्त धर्म सु तन्त ॥८२॥
प्रथम सूयगडांगे कह्यो, नवम अध्ययन रे मांहि।
पहिली गाथा ने विषे, जिन काह्यो धर्म कहाहि ॥८३॥

॥ सूत्र पाठ ॥

कयरे धम्मे अक्खाये, माहणेण मति मता।
अजु धम्म जहा तच्च, जिणाण त सुणेह मे ॥ १ ॥

प्र० सूत्र कृतांगे नवम अध्ययने १ गाथा।

॥ भावार्थ ॥

माहाण अर्थात् मत हनो २ ऐसा उपदेश है जिनका वे मुनि कैसा धर्म कहै—ऋजु अर्थात् सरल माया कपटाई रहित जैसा जिनेश्वरों से सुना है वैसा ही धर्म कहै।

॥ बोल बावीसवां ॥

जिण करणी मे किञ्चित मात्र हिंसा नहीं ते करणी ज्ञान रो सार कही। सा० सू० प्र० सूयगडांग अध्ययन १ उ० ४ गाथा १० वीं।

॥ दोहा ॥

किञ्चित्मात्र हिंसा नही, ते करणी करे आर्य।
धुर सूयगडांगे कह्यो, ज्ञान सार तेह कार्य ॥९४॥
अहिंसा समता धरै, ज्ञान तणो यह सार।
एहिज जाणपणो सिरे, भाष्यो श्री जगतार ॥९५॥
प्रथमाध्ययने चतुर्थे, उद्देशे दशमी गाह।
अहिंसा मे वर्त्तता, ते विज्ञानी कहाह ॥९६॥

॥ सूत्र पाठ ॥

एवं नाणिणो सार, जेन हिंसइ किंचिया।
अहिंसा समय चेव, एतावत वियाणिया॥ १०॥

प्र० सूत्र कृताङ्ग १ अध्ययने ४ उद्देशे १० गाथा।

॥ भावार्थ ॥

ज्ञान पाने का, निश्चय कर के यही सार है कि किञ्चितमात्र भी हिंसा नहीं करे अहिसा और समता धरे यही ज्ञान विज्ञान है।

॥ बोल तेबीसवां ॥

केवल ज्ञानी भाष्यो धर्म सन्देह रहित कह्यो।
सा० सू० प्र० सूयगडांग अध्ययन १० वें गा० ३ री।

॥ दोहा ॥

संदेह रहित सु आखियो, केवली भाषित धर्म।
आतम वत् पर प्राणी गिणे, न करे हिंसा कर्म ॥९७॥

शुद्ध आहार लेवे सदा, संचय न करे लिगार।
सूयगडांग दशमे कह्यो, तीजी गाथा सार ॥९८॥

॥ सूत्र पाठ ॥

सुयक्खाय धम्मे वितिगिच्छ तिण्णे।
लाढे चरे आय तुले पयासु॥
आय न कुज्जा इह जीवियट्ठी।
चय न कुज्जा सु तवस्सि भिक्खू॥ ३ ॥

॥ भावार्थ ॥

समाधिवन्त पुरुष केवली भाषित धर्म को सन्देह रहित मान कर सर्व जीवों को आत्म तुल्य मानता हुआ निर्दोष आहार की गवेषणा करके विचरे। असंयम जीवितव्य के लिये पापास्रव करे नहीं, ऐसे सुतपस्वी साधु धनधान्यादि आहार पाणी का संचय न करे।

॥ बोल चोवीसवां ॥

आप रो छान्दो रूंधे तेहिज धम। सा० सूत्र उत्तराध्ययन अ० ४ गा० ८ वीं।

॥ दोहा ॥

छांदो रूंधे आपणो, तेहिज धर्म उदार।
बहु वर्ष पूर्वां लगे, रोके स्वेच्छाचार ॥९९॥
पर छन्दे जिम अश्व लहै, योग्यपणो अवधार।
तिम अप्रमत्त पणे मुनि, लोपे नही गुरुकार ॥१००॥

शीघ्र पणें कर्म चय करी, पामे मोच प्रधान।
चौथा उत्तराध्ययन मे, अष्टम गाथा जान ॥१०१

॥ सूत्र पाठ ॥

छन्द निरोहेण उवेइ मोक्ख, आसे जहा सिखिये वम्म धारी।
पुव्वइ वासाइ चर अप्पमत्तो, तम्हा मुणी खिप्प मुवेइ मोक्ख ॥८॥

उत्तराध्ययन अ० ४।

॥ भावार्थ ॥

अपना छन्दा अर्थात् अपनी इच्छा का निरोध करने से मुक्ति होती है। जैसे जातिवन्त अश्व (घोड़ा) सवारकी इच्छानुसार रहने से योग्यता प्राप्त करके दुखों से छुटकारा पाता है। वैसे ही मुनि पूर्व वा वर्षों पर्यन्त अपनी इच्छा (छन्दा) को रोक के गुर्वाज्ञा प्रमाण चलने से अप्रमत्तपने विचरता हुआ मोक्ष प्राप्त करता है।

॥ बोल पच्चीसवां ॥

केवली प्ररूप्यो धर्म अहिंसा संयमो तवो कह्यो सा० सू० दशवैकालिक अध्ययन १ गा० १ ली।

॥ दोहा ॥

दशवैकालिक में कह्यो, धुर अध्ययन मझार।
धुर गाथा केवली प्रणित, अहिंसा धर्म सार ॥ १०२॥
अहिंसा संयम तपो, यह धर्म मंगलीक।
तासु नमे सर्व देवता, जासु धर्म मन ठीक ॥१०३

॥ सूत्र पाठ ॥

धम्मो मगल मुक्किट्ठ, अहिंसा सजमो तवो ।

देवावि त नम सन्ति, जस्स धम्म सयामणो ।।१।।

दशवैकालिक अ० १ ।

॥ भावार्थ ॥

अहिंसा संयम तप रूप धर्म उत्कृष्ट मङ्गल है, जिनका मन सदा धर्म में है उन्हें देवता भी नमस्कार करते हैं ।

॥ बोल छबीसवां ॥

अपछन्दा री प्रशंसा करै करावै करता ने भलो जाणै तो चौमासी प्रायश्चित कह्यो । सा० सूत्र निशीथ उद्दशे ११ वें ।

॥ दोहा ॥

त्रिकरण प्रशंसा करै, अपछन्दा री सोय ।

प्रायश्चित मुनि ने कह्यो, निशीथ ग्यारहवें जोय ॥१०४

॥ सूत्र पाठ ॥

जे भिक्खू अहाछन्द पससइ पससं त वा साइज्जइ ॥१८७॥

निशीथ उद्देशे ११ वें ।

॥ भावार्थ ॥

जो साधु अपछन्दा अर्थात् अपनी इच्छानुसार चलनेवाला अविनीत की प्रशंसा करे करावे अनुमोदे तो चौमासी प्रायश्चित आवे ।

॥ बोल सतावीसवां ॥

बाल मरण री प्रशंसा करे करावे अनुमोदे तो प्रार्याश्चित कह्यो। सा० सू० निशीथ उद्देशे ११ वें।

॥ दोहा ॥

मुनिवर बाल मरण तणी, करे प्रशंसा कोय।
करतां प्रते अनुमोदियां, दंड निशीथ मे जोय ॥१०५॥

॥ सूत्र पाठ ॥

बाल मरणाणि वा पससइ पसस त वा साइज्जइ।

निशीथ उद्देशा ११ वा।

॥ भावार्थ ॥

बाल मरण अर्थात् बिना अनशन किये मिथ्यात सहित मरे उसको प्रशंसा करे करावे और उसका अनुमोदन करे तो प्रायश्चित।

॥ बोल अठावीसवां ॥

जो साधु गृहस्थ ने अणतीर्थी ने १ असण, २ पाण, ३ खादिम, ४ स्वादिम, ५ वस्त्र, ६ पात्र, ७ कम्बल, ८ पाय पुच्छण, ये आठ बोल देवे देवावे देता ने भलो जाणे तो चौमासो प्रायश्चित कह्यो। सा० सू निशीथ उद्देशे १५ वें।

॥ दोहा ॥

अन्य तीर्थि वा गृहस्थ ने, च्यार प्रकारे अहार।
वस्त्र पात्र कम्बल वली, पाय पुच्छणो धार ॥१०६

ये आठ बोल देवे तसु, तथा देवावे ताय ।
देतां प्रते भलो जाणियां, दण्ड चौमासी आय ॥१०७॥
निशीथ उद्देशे पन्दरहवें, भाष्यो श्री जगतार ।
पक्षपात सहु परिहरी, जोवो नयण उघार ॥१०७॥

॥ सूत्र पाठ ॥

जे भिक्खू अरणा उत्थिएण वा, गारत्थिएण वा, पाणं वा, खाइम वा, साइम वा, देयइ देयं त वा, साइज्जइ ॥ ७८ ॥

जे भिक्खू अरणा उत्थियेण वा, गारत्थिएण वा, वत्थ पडिग्गह वा, कम्बल वा, पाय पुच्छण वा, देयइ देय त वा साइज्जइ ॥ ७९ ॥

निशीथ उद्देशा १५ वाँ।

॥ भावार्थ ॥

जो साधु अन्य तीर्थी को गृहस्थ को आहार पानी खादिम स्वादिम देवे दिवावे देते हुए को भला जाने तो प्रायश्चित। जो साधु अन्य तीर्थी को गृहस्थ को वस्त्र पात्र कम्बल पाद (पग) पुच्छणा देवे देवावे देते हुए को भला जाने तो प्रायश्चित।

॥ बोल उनतीसवां ॥

जो साधु बूसी राई ने अबूसी राई कहे अबूसी राई ने बूसी राई कहे तो चौमासी प्रायश्चित आवे। सा० सू० निशीथ उ० १६ वां।

॥ दोहा ॥

ज्ञान दर्शन चारित्त तणो, धारक बूसी जेह।
ते साधु गुण आगरा, तसु जे बूसी वदेह ॥१०९॥

विराधक ज्ञानादिक तणो, विषय लम्पटी जान ।
ते अबूसी राई ने बूसी कहे, प्रायश्चित तसु मान ॥११०॥
निशीथ उद्देशे सोलहवें, तेरम चवदम बोल ।
निन्दा करि गुणवन्त नी, गुण तेहना मत खोल ॥१११॥

॥ सूत्र पाठ ॥

जे भिक्खू बूसी रायइ अबूसी रायइय वदइ वद त वा साइज्जइ ।

जे भिक्खू अबूसराइय बूसराइय वदइ वद त साइज्जइ ।

निशीथ उद्देशा १६ वाँ ।

॥ भावार्थ ॥

जो साधु बूसी रायई अर्थात् ज्ञान दर्शन चारित्र गुणके धारक अपने से बड़े मुनिराज को अबूसी रायइ कहे और अबूसी रायइ जो विषय लम्पटी को बूसी रायइ कहे तो चौमासी प्रायश्चित ।

॥ बोल तीसवां ॥

सरीखा साधु होकर सरीखा साधुवां ने स्थानक देवे नहीं, देवावे नहीं, देतां प्रते भलो जाणै नहीं, तो प्रायश्चित कह्यो । सा० सू० निशीथ उद्देशे १७ वें ।

॥ बोल इकतीसवां ॥

सरीखी साध्वी होकर सरीखी साध्वी ने स्थानक देवे नहीं, देवावे नहीं, देतां प्रते भलो जाणे नहीं, तो प्रायश्चित कह्यो । सा० सू० निशीथ उद्देशे १७ वें ।

॥ दोहा ॥

सरीखा साधु ने मुनी, थानक मे ठहराय।
निशीथ उद्देशे सतरहवें, प्रायश्चित कहवाय ॥११२॥
इमहिज सरखी साधवी, साध्वियां प्रते जान।
प्रायश्चित आवे तसु, जो नही दे निज स्थान ॥११३॥

॥ सूत्र पाठ ॥

जे भिक्खू निग्गथे निग्गथस्स सरिसगस्स स ते उवासे, अन्ते उवासे, न देइ न देय त वा साइज्जइ। जे भिक्खूणि णिग्गथी णिग्गथीए सरिसयांए, स ते उवासे न देइ त वा साइज्जइ।

सा० सू० निशीथ उद्देशा १७ वाँ।

॥ भावार्थ ॥

जो साधु निर्ग्रन्थ सदृश निर्ग्रन्थ को अपनी निश्रा में उनके रहने जैसी जगह हैं वे उनको नहीं देवे, नहीं देवावे, और नहीं देनेवाले को अनुमोदना करे, तो प्रायश्चित आवे। जो साध्वी अपने जैसी साध्वियों को अपनी निश्रा में रहा उपाश्रय नहीं देवे, नहीं देवावे, नहीं देते को भला जाने, तो प्रायश्चित आवे।

॥ बोल बत्तीसवां ॥

अन्य तीर्थी को ग्रहस्थ की वेयावच्च करे, करावे, करतां प्रते भलो जाणे तो प्रायश्चित आवे। सा० सू० निशीथ उ० ११ वां।

॥ दोहा ॥

अन्य तीर्थी वा गृहस्थ की, वेयावच किया है दंड ।
भलो जाण्या पिण दंड है, निशीथ ग्यारहवें मंड ॥११४॥
तैलादिक मर्दन करे, मसले दावे पाव ।
धोवे रंगे प्रमार्जे, वलि लोद्रवादि लगाय ॥११५॥
तसु तन मे देखी करी, गड़गुम्बड़ादिक कोय ।
पूंजे धोवे मालिश करे, वलि छेदे अवलोय ॥११६॥
रुधिर राध काढ़े तसु तेल लेपादि लगाय ।
धूपादिक देई करि, क्रिमि आदि निकलाय ॥११७॥
केश संवारे काट कर, दन्तादिक धोवाय ।
घसी दांत मज्जन करे, कान नाक नूं मैल कढ़ाय ॥११८॥
नेत्र रोग युत देख के, प्रचाली साफ करेह ।
सुरमादिक घाले तसु, भौंह बाल संवारे तेह ॥११९॥
पसीनादिक साफ करि, साता दे उपजाय ।
तृतीय उद्देशे जिम कह्या, पचपन बोल गिणाय ॥१२०॥
यावत् विचरंता मुनी, अन्य तीर्थि प्रते देख ।
वा ग्रहस्थी प्रत देख कर, शिर ढांके सुविशेष ॥१२१॥
इत्यादिक वेयावच कियां, वलि करायां ताह ।
भलो जाण्यां पिण दंड कह्यो, सूत्र निशीथ रे मांह ॥१२२॥

॥ सूत्र पाठ ॥

जे भिक्खू अणउत्थियस्स वा, गारत्थियस्स वा, पाये सवाहेज्ज

वा पलि मद्देज्ज वा, सवाहं त वा, पलि मद्द त वा साइज्जइ। एव जाव तइयो उद्देसो गमो योयवो, अयण उत्थियस्स वा, गारत्थियस्स वा, अभिलावो जाव जे भिक्खू गामाणुगाम दुइज्ज मायो, अयण उत्थियस्स वा, गारत्थियस्स वा, सीस दुवारिय करेइ त वा साइज्जइ।

सा० सू० निशीछ उद्देशा ११ वाँ।

॥ भावार्थ ॥

जो साधु अन्य तीर्थी का वा गृहस्थ का पग मसले मर्द्दन करे अथवा करते हुए को भला जाने तो प्रायश्चित। जिस प्रकार तीसरे उद्देशे में ५५ बोल कहे हैं उसी प्रकार यहाँ सर्व कहना यथा—१ अन्य तीर्थी को वा गृहस्थ को प्रमार्जे २ मर्दन करे, ३ तेलादि मसले, ४ लोद्रादि लगावे, ५ धोवे, ६ रंगे, ७ ऐसे ही शरीर को प्रमार्जे, ८ मर्दन करे, ९ तेलादि मसले, १० लोद्रवादि लगावे, ११ धोवे, १२ रंगे, १३ शरीर के गणगुम्ब-ड़ादि होय उन्हें प्रमार्जे, १४ मर्दन करे, १५ तेलादिक लगावे, १६ लोद्र-वादि लगावे, १७ धोवे, १८ रंगे, १९गुम्बडादिकोंको छेदे, २० रक्त निकाले, २१ पीप निकाले, २२ धोवे, २३ लेप करे, २४ मर्दन करे २५ धूप देवे, २६ गुदाकी कृमि निकाले, २७ नख सुधारे, २८ गुह्य स्थानके बाल छेदे, २९ भौंहों के जंघा के कांख के दाढी के मूछ के मस्तक के कान के नाक के आँख के इन नवों स्थान के केश छेदे, ३८ दाँत घसे, ३९ दाँत धोवे, ४० दाँत रंगे, ४१ ओष्ठ घसे, ४२ ओष्ठोंका मैल निकाले, ४३ ओष्ठ धोवे, ४४ खटाई देवे, ४५ रंग चढावे, ४६ लम्बे ओष्ठों को काटे, ४७ दीर्घ मूछे काटे, ४८ आँख साफ करे, ४९ आँख का मैल निकाले, ५० आँख धोवे, ५१ आँखको शुद्ध करे, ५२ अञ्जन सुरमादि डाले, ५३ भौंहोंसे केश सुधारे, ५४ आँख, कान, नाशिका, दाँत, नखों का मैल निकाले, ५५ स्वेद [पसीना] पोंछे, यावत् साधु मुनिराज ग्रामानुग्राम विचरते हुए अन्य

तीर्थी वा गृहस्थ को देख कर उनका मस्तक छत्र वस्त्रादि से ढांके इत्यादि वैयावृत्य करे, करावे, करते हुए की अनुमोदना करे, तो प्रायश्चित्त।

॥ बोल तेतीसवां तथा चोतीसवां ॥

साधु आप रहता होय जिण स्थानक में न्यातीला वा अण न्यातीला, श्रावक वा अश्रावक ने आखो रात वा आधी रात, राखे तो प्रायश्चित्त आवे। सा० सू० निशीथ उद्देशे ८ वें बोल १२ वें।

साधु रहता होय जिण स्थानक में न्यातीला वा अण न्यातीला, श्रावक वा अश्रावक, आखो रात वा आधो रात रहे उणां ने नहीं निषेधे तो प्रायश्चित्त आवे। सा० सू० निशीथ उद्देशे ८ बोल १३ वें।

॥ दोहा ॥

साधु बसे तिण स्थान में, निज न्याती प्रते जान।
अथवा अण न्याती प्रते, राख्यां दण्ड पिछान ॥१२३॥
श्रावक हो अथवा वलि, अश्रावक जो होय।
सर्व वा अर्ध रात्रि मे, राख्यां प्रायश्चित्त जोय ॥१२४॥
इमहिज रहता हुयां प्रते, नहीं निषेधे तास।
निशीथ उद्देशे आठवें, प्रायश्चित्त कह्यो जास ॥१२५॥

॥ सूत्र पाठ ॥

जे भिक्खू णायग वा अणायग वा उवासय वा अणुवासयं वा

अन्तो उवस्सयस्स अद्ध वरायं, कसिण वराय, सवसावेइ, सवसा वता साइज्जइ ॥१२॥ जे भिक्खू त न पडिआण्क्खेइ न पडियाइक्खं त वा, साइज्जइ ॥१३॥

सू० निशीथ उद्देशे ८ वें।

॥ भावार्थ ॥

जो साधु ज्ञाती ने तथा अज्ञाती ने, श्रावक ने तथा अश्रावकने आप जिस स्थान में रहते हों उसी स्थान में सर्व रात्रि अथवा अर्द्ध रात्रि उनके साथ रहे यावत् अनुमोदे तो प्रायश्चित्त। रहते हुए को न निषेधे अर्थात् मना न करे तो प्रायश्चित्त आवे।

॥ सोरठा ॥

एक स्थान इक कल्प रे, तिण मे ग्रहस्थी ने मुनी।
राख्या प्रायश्चित्त जल्प रे, अर्द्ध तथा सर्व रात्रि तक।१२६॥
इक आंगण उपरान्त रे, सामायक पौषध ग्रही करे।
ते ठाम २ विरतन्त रे, सूत्र देख निर्णय करो ॥१२७॥

॥ बोल पैंतीसवां ॥

सावद्य दान की प्रशंसा करे तिण ने प्राणी जीवां को वध बंछणहारो कह्यो। सा० सू० सूयगडांग अ० ११ वें गा० २० वीं।

॥ दोहा ॥

जो सांसारिक दान री, करे प्रशंसा कोय।
वंध बंछे षट् काय नूं, सूयगडांगे जोय ॥१२८॥

अध्ययन इग्यारहवां ने विषे, बीसमों गाथा मांहि ।
निषेधियां वर्त्तमान में, वृत्ति छेद कहाहि ॥१२९॥

॥ सूत्र पाठ ॥

जेय दाणं पससंति वह मिच्छन्ति पाणिणो ।
जेयणं पडि सेहंति, वित्तिच्छेय करंति ते ॥१३०॥

॥ भावार्थ ॥

जो दान की प्रशंसा करे सो प्राणी जीवों का वध वंछता है, और जो वर्त्तमान में निषेध करे सो लेनेवाले की वृत्ति का छेद करे ।

॥ सोरठा ॥

इहां को प्रश्न करेह रे, सावद्य शब्द नहीं पाठ में ।
समुचे दान कहेह रे, तसु उत्तर आगे सुणो ॥१३०॥
छहुं काय रो घात रे, मुनि ने देतां नहिं हुवे ।
ते निरवद्य साक्षात रे, तिण रो प्रशंसा बहु जगह ॥१३१॥
दान शील तप भाव रे, च्यार मार्ग यह मुक्ति रा ।
ते निरवद्य ठहराव रे, करे जिन आज्ञा सहित जो ॥१३२॥
शरीर अधिकरण नाहि रे, पीहर है षट् काय ना ।
यावज्जीव लग तांहि रे, मुनि रे हिंसा त्याग है ॥१३३॥
तसु दीधां पुण्य जान रे, अशुभ कर्म पिण क्षय हुवे ।
दियां सुपात्र दान रे, श्रावक रे व्रत बारमूं ॥१३४॥
दुर्लभ कह्या जिनराय रे, शुद्ध दान दाता तिका ।
दीधां शुभ गति जाय रे, दशवैकालिक विषे कह्यो ॥१३५॥

सुमुख प्रमुख दश ताय रे, मुनि ने दान देई करी ।
एकावतारी थाय रे, केइक तिण भव मोक्ष में ॥१३३॥
पञ्चम अङ्ग पिछाण रे, अष्टम शत उद्देश षट् ।
तथा रूप मुनि ने जाण रे, श्रावक पडिलाभे तसु ॥१३७॥
एकान्त निर्जरा होय रे, किञ्चितमात्र पिण पाप नहीं ।
पुण्य बन्ध अवलोय रे, ठाम ठाम सूत्रे कह्यो ॥१३८॥
स्थानाङ्ग नवमें जोय रे, नव विधि पुण्य बन्धे कह्यो ।
निर्वद्य नवों अवलोय रे, मुनि ने कल्पे ते कह्या ॥१३९॥
नमस्कार कियां जाहि रे, तेहने निर्दोष अन्न दियां ।
पुण्य तणो बन्ध थाहि रे, नव ही सरीखा जाणिये ॥१४०॥
ते माटे इहां जान रे, निरवद्य दान न लेखवो ।
वीसमों इकवीसमों पिछाण रे, गाथा देख निर्णय करो ॥
अस्ति नास्ति ये दोय रे, पुण्य पाप नो नहीं कहे ।
वर्त्तमान में जोय रे, पूछ्यां थी मुनि नहीं वदे ॥१४२॥
तेम इहां अवधार रे, निषेधियां वर्त्तमान मे ।
करन्ति शब्दे धार रे, क्रिया तेह वर्त्तमान री ॥१४३॥
कियां प्रशंसा सोय रे, वध वंछणहारो कह्यो ।
प्रत्यक्ष ही अवलोय रे, सावद्य दान यह जाणवो ॥१४४॥
ठाम २ जिनराय रे, कुपात्र दान तणा कह्या ।
फल कडुआ अधिकाय रे, पक्षपात तज सांभलो ॥१४५॥
मृगा लोढा ने देख रे, गौतम जिनपे आय करि ।

दुःख विपाक में लेख रे, पूछ्यो किं दया हुवे ॥१४६॥
सूत्र भगवती मांहि रे, अष्टम शतके देखलो।
छट्ठे उद्देसे ताहि रे, असंयति अविरति ने ॥१४७॥
पाप एकान्त जे थाय रे, सचित अचित पड़िलाभियां।
निर्जरा किञ्चित नांहि रे, प्रत्यक्ष पाठ विषे कह्यो ॥१४८॥
तथा सूयगडाअंगेह रे, नवम अध्ययन तेवीसमी।
गाथा में इम लेह रे, साधु विन अनेरा प्रते ॥१४९॥
दान देवो अवधार रे, कारण पाप तणो तिको।
भ्रमण हेतु संसार रे, इत्यादिक बहु सूत्र मे ॥१५०॥
वलि आनन्द श्रावक जान रे, अन्य तीर्थी ने देण रा।
कीधा छे पच्चखान रे, सप्तम अङ्ग देखल्यो ॥१५१॥
जो फल न कहे कदेह रे, सावद्य दान तणा अशुभ।
तो भवि किम जाणेह रे, सुपात्र कुपात्रज दान ने ॥१५२॥
निषेधियां वर्त्तमान रे, अन्तराय लागे तसु।
वलि वृत्तिच्छेदक जान रे, दान लेण वाला तणी ॥१५३॥
प्रशंसियां जे दान रे, प्राण घात वांछक कह्यो।
तो ते दीधां दान रे, ते हिंसक किम नहीं हुवे ॥१५४॥
मुनि विन अपर शरीर रे, अधिकरण षट् काय नूं।
तसु तीखो कियां सीर रे, हिंसादिक कारज तणो ॥१५५॥
अव्रत मांहि देह रे, लेवे ते पिण अविरत में।
दूजो आस्रव सेवेह रे, तिण थी न हुवे पुण्य बंध ॥१५६॥

कोई कहै शुभ परिणाम रे, दान देण वाला तणा ।
तिण सूं पुण्य बन्ध ताम रे, तसु उत्तर हिये विचारिये ॥
साता बंछो एक रे, धुर आस्रव सेवावियो ।
दूजो बोल अलीक रे, दुःख दूजा रो मेटियो ॥१५८॥
तीजो चोरी कराय रे. पर साता परिणाम से ।
इक मैथुन सेवाय रे, साता रा परिणाम से ॥१५९॥
इम परिग्रह रखवाय रे, हित वच्छी भल भाव से ।
यह पंचास्रव न्याय रे, बुद्धिवन्त हिये विचारिये ॥१६०॥
धुर पंचम रे मांहि रे, धर्म पुण्य जो होय तो ।
विचला तिण मे ताहि रे, धर्म पुण्य पिण जानवो ॥१६१॥
न हुवे शुभ परिणाम रे, पचास्रव सेवावतां ।
जिन आज्ञा बिन काम रे, कीधां थी धर्म पुण्य नहीं ॥१६२॥
तिण सूं लौकिक दान रे, प्रशंसवो नहीं मुनि भणी ।
प्रशंसियां थी जान रे, छक्कक प्राणी वध तणुं ॥१६३॥

॥ बोल छत्तीसवां ॥

विषय सहित धर्म बुरो, जिम ताल पुट जहर खायां, कुरीति से हाथ में शस्त्र लियां, कुविधि मन्त्र जपियां मरण पामें, तिम इन्द्रियों को विषय सहित धर्म प्ररूपे ते घणा जन्म मरण वधावे । सा० सू० उत्तराध्ययन अ० २० वें गा० ४४ ।

॥ दोहा ॥

जिम विष खायां तालपुट, कुविधि शस्त्र हाथ मझार ।
मन्त्र कुरीति जपियां थकां, पामे मरण सिवार ॥१६४॥
तिम विषय सहित जे धर्म के, प्ररूपियां तसु जान ।
दुःखदाई होवे घणो, जन्म मरण बहुमान ॥१६५॥
उत्तराध्ययन मे जिन कह्यो, वीसमाध्ययन रे मांहि ।
चार चालीसवी गाह में, हिंसा धर्म दुःखदाय ॥१६६॥

॥ सूत्र पाठ ॥

विसन्तु पीय जह काल कूड, हणाइ सत्थ जह कुग्गाहिय ।
एसो विधम्मो विसओव वनो, हणाइ वेयालइवा विवन्नो ॥४४॥

उत्तराध्ययन अ० २० वें ।

॥ भावार्थ ॥

जैसे कालकूट जहर पीने से, कुविधि शस्त्र ग्रहण करने से और कुरीति से वेतालादि मन्त्र जपने से, मृत्यु प्राप्त हो । वैसे इन्द्रिय विषय सहित धर्म प्ररूपना करने से जन्म मरणादि की वृद्धि हो तथा दुःखदाई हो ।

॥ बोल सैंतीसवां ॥

भाषा २ कही १ आराधक, २ विराधक। विराधक भाषा में औगुण ४ कह्या यथा—१ असंयम, २ अविरत, ३ अपडियाई, ४ अपच्चक्खाण पाप कर्म सा० सू० पन्नवणा पद ११ वें ।

॥ दोहा ॥

दोय प्रकारे जाणवी, भाषा जे बोलेह।
आराधक प्रथमा कही, द्वितीय विराधक जेह ॥१६७॥
सउपयोग यथोक्त जे, ते आराधक जान।
विराधक तेरा परं अछे, विन उपयोग अयुक्त पिछान ॥
अवगुण चार तिण में अछे, असंयम अव्रत अवलोय।
अप्रतिहत अपचक्खाण इम, पन्नवणा इग्यारहवें जोय ॥

॥ सूत्र पाठ ॥

इच्चेयाइ भन्ते चत्तारि भासाज्जायाइ भासमाणे किं आराहए विराहए ? गोयमा इच्चेयाइ चत्तारि भासाज्जायाइ आउत्त भासमाणे आराहए णो विराहए, तेण पर असजय, अविरय अपडिहत, अपच्चक्खाय पाव कम्मे।

पन्नवणा पद ११ वाँ।

॥ भावार्थ ॥

हे भगवान् यह चार भाषा जाति भाषते हुए आराधक है या विराधक ? हे गौतम यह चार प्रकार की भाषा उपयोग सहित जैसे की जैसे बोले तो आराधक है, विराधक नहीं। इसके उपरान्त असंयम, अविरत, अप्रतिहत, पाप कर्मों का अप्रत्याख्यान है।

॥ बोल अड़तीसवां ॥

मिश्र भाषा बाल्यां महा मोहनीय कर्म वंधे।

सा० सू० दशाश्रुतस्कन्ध अध्ययन ६ वें बोल ६ वें।

॥ दोहा ॥

मिश्र भाषा बोल्यां थकां, महा मोहनीय बन्ध ।
नवमे बोले भाखियो, श्री दशाश्रुत स्कन्ध ॥१७०॥
जाणंतो परिषध विषे, सांच झूठ बिहुं मेल ।
बोले कपट सहित जे, मिश्र वच कुकला खेल ॥१७१॥

॥ सूत्र पाठ ॥

जाणं माणो परिसए, सच्च मोसाइं भासए ।
अखीण झंझे पुरिसे, महा मोह पकुव्वइ ॥९॥

दशाश्रुतस्कन्ध अ० ९

॥ भावार्थ ॥

जो जानता है कि यह झूठ है तो भी सभा में बैठ कर मिश्र भाषा बोले, अर्थात् सत्य झूठ का निर्णय न होवे ऐसी भाषा बोले सत्यासत्य भाषा बोले, क्लेश की वृद्धि करे, सो महा मोहनीय कर्म उपार्जन करता है ।

॥ बोल उनचालीसवां ॥

मिश्र भाषा छोड़े छुडावे तिणने समाधि कही ।
सा० सू० प्र० सूयगडांग अ० १० वें गा० १५ वीं ।

॥ दोहा ॥

वचन गुप्ति प्राप्त मुनी, परम समाधिवन्त ।
छोड़े छोड़ावे मिश्र वच, शुभ लेश्या धर सन्त ॥१७२॥

घर छावे नहीं महा ऋषि, नहीं छवावे जेह ।
वर्जे संग स्त्री तणो, दशम सूयगडाअंगेह ॥१७३॥

॥ सूत्र पाठ ॥

गुत्तोवई यय समाहि पत्तो, लेस समाहट्टु परिव्वयेज्जा ।
गिह न छाये णवि छायेज्जा, समिस्स भाव पयहे पयासु ॥१५॥

॥ भावार्थ ॥

वचन गुप्तिवन्त अर्थात् सावद्य वचन गोपने वाले समाधि और शुभ लेश्या के धारक अपने रहने के लिये घर छावे नहीं, अन्य से छवावे नहीं समभाव धारण करता हुआ मिश्र भाषा का त्याग करे ।

॥ बोल चालीसवां ॥

मिश्र भाषा तथा असत्य भाषा सर्व प्रकारे छोड़नी कही. सत्य और व्यवहार भाषा बोलनी कही। सा० सू० दशवैकालिक अ० ७ गाथा १ ली ।

॥ दोहा ॥

सर्व प्रकारे असत्य मिश्र, नहीं बोले मुनि वैण ।
सत्य व्यवहार ही भाषवे, च्यार भाषा में सैण ॥१७४॥
दशवैकालिक मे कह्यो, सप्तमध्ययने स्वच्छ ।
पहली गाथा ने विषे, सीखे सविनय वच्छ ॥१७५॥

॥ सूत्र पाठ ॥

चउण्ह खलु भासाण, परिसंखाए पण्णव ।
दोण्ह तु विणय सिक्खे, दो ण भासिज्ज सव्वसो ॥१॥

दशवैकालिक अ० ७ वाँ ।

॥ भावार्थ ॥

चार प्रकार की भाषा है जिसमें सत्य और व्यवहार तो विनय पूर्वक सीखे, किन्तु असत्य और मिश्र भाषा सर्वथा प्रकारे नहीं बोले।

॥ बोल इकचालीसवां ॥

मिश्र भाषा रा धणी रो वचन अवक्तव्य कह्यो, अणविमासी बोलनहार कह्यो, अज्ञानवादी कह्यो, पूछ्यां रो जवाब देवा असमर्थ कह्यो, मिश्र धर्म प्ररूपणे वालो आप रो मत थापवा भणी छलबल मांडतो कह्यो। सा० सू० प्र० सूयगडांग अध्ययन १२ वें गा० ५ वीं।

॥ दोहा ॥

मिश्र भाव प्राप्त थको, मिश्र नूं बोलणहार।
बोले विना विचारियो, अज्ञान वादी धार ॥१७६॥
जाब देवा समरथ नहीं, पूछ्यां थी अवलोय।
मिश्र धर्म प्रते स्थापवा, छल बल मांडे सोय ॥१७७॥
आत्म अक्रिया मान कर, पुन प्रकृति क्षय मुक्ति।
इम इक पख इम दोय पख, सांख्य दर्शनी उक्ति ॥१७८॥
प्रथम सूयगडांगेह कह्यो, द्वादशाध्ययने पेख।
मिश्र वक्ता अवक्त हैं, पंचमी गाथा पेख ॥१७९॥

॥ सूत्र पाठ ॥

सम्मिस्स भाव व गिरा गहीए, से मुम्मुई होइ अणाणुवाई ।

इम दु पक्ख इममेग पक्ख, आहंसु छलाय तणा च कम्म ॥५॥

प्र० सूत्र कृतांगे द्वादशमध्ययने ।

॥ भावार्थ ॥

मिश्र भाव को प्राप्त होके, प्रश्न करने वाले को उत्तर देने में असमर्थ होते हैं, और मौन धारण करते हैं, वे अज्ञानवादी कभी क्या कहे, कभी क्या कहे, इस तरह से कभी एक पक्षी, कभी दो पक्षी होते है। और छल वल करके अपना मत स्थापन करते हैं।

॥ बोल बयालीसवां ॥

साधु री आज्ञा बारै धर्म श्रद्धे तिण ने काम भोग में खूतो कह्यो, हिन्सा रो करणहार कह्यो। सा० सू० प्र० आचारांग अध्ययन ६ उद्देशो ४ थो।

॥ दोहा ॥

साधु री आज्ञा विना, श्रद्धे धर्म उदार ।
ते काम भोग मे खूतिया, हिंसा रा करणहार ॥१८०॥
प्रथम आचारांगे कह्यो, षष्ठमध्ययन मझार ।
चौथा उद्देशा विषे, सांभलज्यो विस्तार ॥१८१॥
ब्रह्मचर्य वसता थकां, आण न मन मानेह ।
माननीय होऊं लोक में, इम धारी घर छोड़ेह ॥१८२॥

ते काम भोग गृद्धो छता, मूर्च्छित विषय मभार ।
समाधि मार्ग जिन भाषियो, ते नहीं सेवे लिगार ॥१८३॥
आर्य व शुद्ध साधु तसु, शिक्षा दे किण वार ।
तो तेहनी निन्दा करै, वे द्विगुण मूर्ख इम धार ॥१८४॥

॥ सूत्र पाठ ॥

वसित्ता बभचेरसि आणं तं णो त्ति मण्णा माणा, अग्घाय तु सोचाणि सम्म समणुन्ना जिविस्सामो, एगे णिक्खम्मते असभवेता विडज्झ-माणे कामेहिं गिद्धा, अज्झो वण्णा समाहि माधाए मज्झो सय ता सत्थारमेव फरूस वदति । सील मता उव सता सखाए रीयमाणा असीला अणुवय माणस्स वितिया मदस्स बालया ।

प्र० आचारांगे षष्ठमध्ययने चतुर्थोद्देशे ।

॥ भावार्थ ॥

कितनेक साधू होकर आज्ञा का अनादर करते हुए विषय लम्पटी होकर उनमें लिप्त हो जाते हैं। मैं सब का माननीय होऊंगा ऐसा विचार करके दीक्षा अङ्गीकार करते हैं, ब्रह्मचर्य धारते हैं, परन्तु गुर्वाज्ञा प्रमाण मोक्ष मार्ग में नहीं चलते। काम इच्छा से सुखों में मूर्च्छित होकर विषयों की ओर ध्यान दे गृद्धि हो तीर्थंकर भाषित जो समाधि मार्ग है उसका सेवन नहीं करते, यदि उन्हें कोई अच्छी शिक्षा देवे तो उनकी निन्दा करते हैं, गुर्वाज्ञा विना अपने मनमाना हिंसा धर्म प्ररूपते हुए सुखों से जीवें ऐसा विचार के भ्रष्ट हुए, वे बाल, मन्द बुद्धि वाले, शुद्धाचार के पालने वाले साधुओं से द्वेषभाव रख के निन्दा करने में तत्पर हैं अतः वे दुगुने मूर्ख हैं।

॥ दोहा ॥

वलि तिणहिज उद्देशे कह्यो, धर्म कहै आज्ञा बाहर।
प्राण जीव हिंसक तिका, असंयम अर्थी धार ॥१८५॥
अधर्मार्थी वाल ते आरम्भार्थी जेह।
हने हनावे प्राणी ने, भलो जाणता तेह ॥१८६॥
दुक्खर धर्म जिनवर कह्यो, ते पालन समर्थ नाहिं।
तव तसु करै अवहेलना, तत्पर हिंसा माहिं ॥१८७॥
ते आज्ञा बाहिर थई, धर्म प्ररूपे एम।
जिन आज्ञा नहीं मानतो, भ्रष्ट किया निज नेम ॥१८८॥

॥ सूत्र पाठ ॥

अहमट्ठी तुमसि णाम बाले आरभट्ठी अणुवय माणे हण पाणे घायपाणे हण ओयावि समणु जाण माणे घोरे धम्मे उदीरिए उव हइण अणाणाए एस विसण्णे वितट्टे वियाहितेत्तिबेमि।

प्र० आचारांग सूत्रे षष्टमध्ययने चतुर्थोद्देशे)

॥ भावार्थ ॥

संयम से भ्रष्ट हुए को सत्पुरुष इस तरह बोध देते हैं कि हे पुरुष तू प्राणियों की हिसा करता है हिंसा का उपदेश देता है अतः तू हिंसा का चाहनेवाला है अजान है अधर्म का अर्थी है। तीर्थंकरों ने तो अहिंसा धर्म आराधना दुष्कर कहा है किन्तु तू आज्ञा बाहर होके आज्ञा बाहिर धर्म प्ररूपता है धर्म की उपेक्षा करता है इसलिये तू मन्द बुद्धि है।

॥ बोल तियालीसवां ॥

आज्ञा बाहिर धर्म कहसी तिण रा तप अने नियम भ्रष्ट कह्या, तिण ने मूर्ख कह्यो, संसार से पार पामतो नहीं कह्यो। सा० सू० आचारांग अध्ययन २ उद्देशो २।

॥ दोहा ॥

कहसी धर्म आज्ञा बिना, तिणरा तप अरु नेम।
भ्रष्ट कह्या धुर अङ्ग मे, द्वितीय अध्ययने एम ॥१८९॥
दूजे उद्देशे देखल्यो, परिसह उपसर्ग पाय।
आज्ञा बाहिर होयने, शिथिल थई मोह वर्ताय ॥१९०॥
कहै मैं अपरिग्रही अछूं, पिण भोग मिल्यां भोगाय।
तथा भोग मिलवा तणा, करत अनेक उपाय ॥१९१॥
ते भेष लजावे साधु नूं, सेवे काम विकार।
वार २ मोह मे फंस्या, जे नहीं पामे पार ॥१९२॥

॥ सूत्र पाठ ॥

अणाणाए पुट्ठावि, एगेणियट्ट ति मंदा मोहेण पाउडा, अपरिग्गहा भविस्सामो समुट्ठाए लद्धे कामे अभिगाहेंति, अणाणाए मुणिणो पडिलेहति, एत्थ मोहे पुणो पुणो सएणा णो पाराए।

आचारांगे द्वितीयध्ययने द्वितीय उद्देशे।

॥ भावार्थ ॥

अज्ञानी मूर्ख जीव परीषह उपसर्ग आने से आज्ञा बाहिर होवे.

संयम से भ्रष्ट होते हैं, और कहते हैं हम अपरिग्रही है दीक्षा लेके मुनि का वेश लजाते हैं, काम भोग प्राप्त होने से अभिग्रहण करते हैं कामादि प्राप्त करने को उपाय करते रहते हैं इस तरह आज्ञा वाहिर धर्म कहने वाले जो हैं वे वार २ मोह में फंसे हुए संसार का पार नहीं पाते।

॥ बोल चमालीसवां ॥

आज्ञा वारे उद्यम, आज्ञा मांहि आलस्य, ए दो बोल मत होज्यो, यह कुशल पुरुष भगवान् की श्रद्धा छे। सा० सू० आचारांग अ० ५ उ० ६।

॥ दोहा ॥

कुशल पुरुष महावीर नो, यह श्रद्धा है सार।
आज्ञा मे उद्यम सदा, नहिं उद्यम आज्ञा वार ॥१८३॥
उद्यम आज्ञा वाहिरे, आज्ञा मे आलस्य।
यह दोनूं मत होयज्यो, इम भाष्यो कुशलस्य ॥१८४॥
धुर आचारांगे कह्यो. पंचम अध्ययने पेख।
छट्ठा उद्देशा विषे, जिन दर्शन इम लेख ॥१८५॥

॥ सूत्र पाठ ॥

अणाणाए एगे सोवट्ठाणे, आणाए एगे निरूवट्ठाणे।

एत ते माहोंउ, ए य कुसलस्स दसणं ॥

आचाराङ्ग पंचम अध्ययने षष्ठमोद्देशे।

॥ भावार्थ ॥

कितनेक आज्ञा वाहिर विपरीत प्रवृत्ति में उद्यमी वर्त्तते हैं और कितने ही जिनाज्ञानुकूल प्रवृत्ति में निरुद्यमी होते हैं अतः यह दोनों

अर्थात् आज्ञा में आलस्य और आज्ञा बाहिर उद्यम कभी न होवे, यही कुशल पुरुष भगवान् महावीर का दर्शन है।

॥ बोल पैंतालीसवां ॥

प्रवचन से विरुद्ध प्ररूपने वाला ने भगवान निन्हव कह्यो। सा० सू० उववाई प्रश्न १९ वें।

॥ दोहा ॥

प्रवचन विरुद्ध प्ररूपणा करै ते निन्हव धार।
सूत्र उववाई मे कह्यो उन्नीसवां प्रश्न मझार ॥१९६॥
सप्त निन्हव प्रवचन तणा भाष्या श्री जगतार।
करता अशुद्ध प्ररूपणा श्रद्धा तास असार ॥१९७॥

। सूत्र पाठ ।

इच्चे ते सत्त पव्वय णिण्हका।

उववाई प्रश्न १९ व.।

॥ भावार्थ ॥

यह सातों प्रवचन के निन्हव हैं ॥ इति ॥

॥ बोल छ्यालीसवां॥

राग द्वेष दोनूं पाप कह्या दोनां से न्यारा रहे सो संसार में नहीं रुलै। सा० सू० उत्तराध्ययन अ० ३१ वें गाथा ३ री।

॥ दोहा ॥

राग द्वेष दो पाप हैं, प्रवर्त्तै पाप मझार ।
जे भिक्खू न्यारा रहै, ते न रूलै ससार ॥१६८॥
उत्तराध्ययने आखियो, इकतीसम अध्ययने जान ।
तीजी गाथा ने विषे. भाष्यो श्री भगवान ॥१६९॥

॥ सूत्र पाठ ॥

राग दोसे य दो पावे, पाव कम्म पवत्तयो ।
जे भिक्खू रुम्भये निच, से न अच्छइ मडले ॥३॥

उत्तराध्ययन अ० ३१ वां ।

॥ भावार्थ ॥

राग द्वेष ये दोनों पाप है, पाप कर्म में ही प्रवर्त्तते हैं । अर्थात् किसी पै राग करने में भी पाप है और द्वेष करने में भी पाप है। इसलिये साधु राग द्वेष किसी पर भी न करें । वे संसार रूपी मंडल में भ्रमण नहीं करते हैं ।

॥ बोल सैंतालीसवां ॥

कोई इम कहै साता दियां साता होय, तिण ऊपर भगवान छव बोल प्ररूप्या—१ आर्य मार्ग से वेगलो, २ समाधि मार्ग से न्यारो, ३ जिन धर्म री हेलणा रो करणहार, ४ अमोक्ष रो कारण, ५ थोड़ा सुखां रे कारणे घणा सुखां रो हारणहार, ६ लोह

वाणिया नी परे घणो झूरसी । सा० सू० सूयगडांग अ० ३ उद्देशो ४ गाथा छठी ।

॥ दोहा ॥

साता दियां साता हुवे, इम को कहै अविचार ।
तिण ऊपर षट् बोल इम, भाष्या श्री जगतार ॥२००॥
शाक्यादिक इक एक जे, वा स्वतीर्थी जेह ।
परिषह थी डरता थकां, ते जे इम भाषेह ॥२०१॥
साता से साता हुवे, एम कहै जे कोय ।
ते आर्य मार्ग से वेगला, समाधि से अलगा होय ॥२०२॥
वलि हेलण हार जिन धर्म ना, ते अल्प सुखांरे काज ।
घणां सुखां ने हारता, अछे अमोत्त रो काज ॥२०३॥
लोह वाणिया नी परे, घणा झूरसी जेह ।
साता दियां साता हुवे, जे कोई एम वदेह ॥२०४॥

॥ सूत्र पाठ ॥

इह मे गेउ भासंति, सातं सातेण विज्जति ।
जे तत्थ आरिअ मग्ग, परमं च समाहिए ॥६॥
माएथ अव मन्नता, अप्पेण लुपहा बहु ।
एतस्स अमोक्खाए, अय हारिन्व जूरह ॥७॥

॥ भावार्थ ॥

यहां एक एक ऐसा कहते हैं कि साता से साता होती है अर्थात् सुख देने से सुख होता है। ऐसा कहनेवाले आर्य मार्ग से पृथक् हैं १,

परम समाधि का करने वाला जो जिन प्रणीत मार्ग है उससे दूर हैं २, जिन मार्ग की निन्दा करने वाले हैं ३, अल्प सुखों के लिये बहुत सुखों के हारने वाले हैं ४, अमोक्ष का कारण है ५, और वे लोह वणिक की तरह बहुत पछतावेंगे ६।

॥ सोरठा ॥

कोई कहै इम वाय रे. इहां मुनि निज तनु आश्रयो।
उपसर्ग थी डरता ताय रे, कहै साता दियां साता हुवे॥
तप लोचादि अनेक रे, करतां कष्ट हुवे घणो।
भूख तृषादि विशेष रे, सह न सकै तब इम कहै ॥२०७॥
पिण अन्य अन्य ने देख रे, अनुकम्पा आणी करी।
भोजन वस्त्र सुविशेष रे, साता दियां साता हुवे ॥२०८॥
इम निज मन अनुसार रे. सूत्र विरुद्ध जो को कहै।
तसु उत्तर अवधार रे, बुद्धिवन्त हिये विचारिये ॥२०९॥
क्षुधा निवारण काम रे, आहार उदक मुनि आचरे।
वस्त्र कल्पनीक आम रे, पहिरे ओढे वावरे ॥२१०॥
अथवा निज तनु नी सार रे. व्यावच्च करावे शिष्य कने।
देवे वस्त्र अरु आहार रे, अन्य मुनि नी वेयावच्च करे ॥२११
एम अनेक प्रकार रे, साधर्मी साधु बनी।
करता सार संभार रे, नव लघु वृद्ध मुनिवर तणी ॥२१२॥
ते साता अवधार रे, निरवद्य छै जिन आण मे।
करै करावै सार रे, दे आदेश अरु उपदिशे ॥२१३॥

मुनि बिन अपर शरीर रे, अधिकरण षट्कायं नूं ।
तसु तीखो कियां शरीर रे, हिंसादिक कारज तणो ॥२१४॥
प्रथम उद्देशा मांहि रे, सप्तम शतके भगवती ।
सामायक मे ताहि रे, श्रावक आतम अधिकरण ॥२१५॥
तो बिन सामायक जेह रे, ग्रहस्थी तणो शरीर जे ।
ते अधिकरण कहेह रे, शस्त्र पृथ्व्यादि छहों तणो ॥२१६॥
तसु तीखो करे कोय रे, अव्रत सेवावि करी ।
तासु धर्म किम होय रे, इम सावद्य साता दियां ॥२१७॥
सेवे अव्रत पाप रे, प्रथम करण ग्रहस्थी तिको ।
देखो स्थिर चित्त थाप रे, दूजे करण सेवावियां ॥२१८॥
धर्म पुन्य किम थाय रे, फुन अनुमोदयां तृतीय करण ।
हिये विचारो न्याय रे, जिन आज्ञा बिन धर्म नहीं ॥२१९
षोडशमूं अनाचार रे, साता पूछ्यां गृहस्थ नी ।
दशवैकालिक अवधार रे, तीजे अध्ययने कह्यो ॥२२०॥
मुनि गृहस्थ नी जान रे, तिणहिज अध्ययनने विषे ।
वेयावच्च कियां पिछाण रे, अनाचार अठावीसमूं ॥२२१॥
भूती कर्म करेह रे, गृहस्थ नी रचा निमित ।
प्रायश्चित आवेह रे, निशीथ उद्देशे तेरहवें ॥२२२॥
मार्ग बतायां दण्ड रे, सूत्र निशीथ मांहि कह्यो ।
बतावे औषधादि सुमंड रे, गृहस्थ ने तो प्रायश्चित ॥२२३॥
जीव संसार मझार रे, असाता बहु पावी रह्या ।

स्व स्व कर्म अनुसार रे. इन्द्रिय विषय विकार घी ॥२२४॥
तसु सेवावे भोग उपभोग के, खाणा पीणा आदि दे ।
त्यांरो मिलायां जोग रे, दूजे करणे पाप है ॥२२५॥
निज खाणो पीणो जेह रे. श्रावक अव्रत मे गिणे ।
तो पर ने खवाव्यां तेह रे, किम धर्म श्रद्धे समकिती ॥
असंख्य एकेन्द्रिय जीव रे, मार असाता तसु करै ।
पंचेन्द्रिय ने साता अतीव रे, कियां धर्म किण विध हुवे ॥
मोह अनुकम्पा आण रे, साता वंछे निज पर तणी ।
ते सावद्य ही पिछाण रे, जिन आज्ञा नहीं तेह में ॥
उपदेशे त्याग कराय रे, घटावे अव्रत गृहस्थी नी ।
तप चारित्र वढ़ाय रे. मुक्ति मार्ग साहमूं करै ॥२२६॥
चिहुंगति भ्रमण मिटाय रे, दुःख जन्म मरण मूंकाय दे।
आतम सुख प्रकटाय रे, निरवद्य साता इम हुवे ।२३०।
ते माटे इहां जोय रे, सावद्य साता जाणवी ।
स्व परनी अवलोय रे, वंछ्या घी जिन धर्म नहीं ॥२३१॥
सांसारिक उपकार रे, सांसारिक नूं मार्ग है ।
जिन धर्म नहीं लिगार रे, जिन आज्ञा विन कार्य मे ॥
तिण सूं कह्यो जिनराय रे, जे को इक इक इम वदे ।
सुख दियां सुख थाय रे, ते आर्य मार्ग से वेगला ॥२३३॥
यावत् भूरसी तेह रे, लोह वाणिया नी परें ।
सूत्रे जे भाषेह रे, तेह सत्य करि जाणवो ॥२३४॥

॥ बोल अड़तालीसवां ॥

साधू होकर अनुकम्पा रे वास्ते त्रस जीवां ने बांधे बंधावे बांधताने अनुमोदे, तथा अनुकम्पा करि बंध्या जीवां ने छोड़े छोड़ावे छोड़तां प्रते भलो जाणे तो चौमासी प्रायश्चित। सा० सू० निशोथ उ० १२ वें, बोल १ तथा २ रे।

॥ दोहा ॥

मुनि अनुकम्पा आण कर, त्रस जीवां ने जोय।
तृणादिक पाशे करी, बांधे बंधावे कोय ॥२३५॥
अथवा बन्धिया देख कर, छोड़े छोड़ावे तास।
बांध्यां छोड़्यां भलो जाणियां, प्रायश्चित चौमास ॥२३६॥
निशीथ उद्देशे बारमे, पहले दूजे बोल।
यह करुणा आज्ञा बाहर है, आंख हिया री खोल ॥२३७॥

॥ सूत्र पाठ ॥

जे भिक्खू कोलुण पडियाए, अण्णयरिं तस पाण जाय।
तण पासएणवा मुंज पासएणवा, चम्म पासएणवा रज्जु ॥
पासएणवा सुत्त पासएणवा, बंधइ बंध त वा साइज्जइ ॥१॥
जे भिक्खू बंधेल्लयं वा, मुयइ मुय त वा साइज्जइ ॥२॥

(निशोथ उद्देशो १२ वें)

॥ भावार्थ ॥

जो साधु अनुकम्पा के लिये अन्य त्रस प्राणियों की जाति अर्थात् त्रस जीवों को घास की डोरी से, चमड़े की डोरी से, रज्जव की डोरी से, इत्यादिक डोरियों से बाँधे बँधावे बाँधते को अनुमोदे तो चौमासी प्रायश्चित्त ॥ १ ॥ ऐसे ही बँधे हुवे त्रस जीवों को देख अनुकम्पा करके छोड़े छोड़ावे और अनुमोदे तो चौमासिक प्रायश्चित्त ॥ २ ॥

॥ सोरठा ॥

शब्द अर्थ अत्र जेह रे, ते किंइक इहां इम कहै ।
कोलुण दीन भावेह रे, बांध्या छोड्यां दंड है ॥२३८॥
ततोत्तर वित्त कह्यो एथ रे, दीन भाव इहां स्यूं हुवे ।
त्रस प्रति बांध्या तेथ रे, गरीब भाव होवै किण तणो ॥
मुनिवर दीनज होय रे, त्रस बांधे किण कारणे ।
कदा दीन त्रस जोय रे, तो साधु अनुकम्प करि ॥२४०॥
तथा बंधिया प्रति देख रे, दीन पणो मुनि स्यूं करै ।
जो दीन अनुकम्पा लेख रे, सावद्य तिण सूं प्रायश्चित कह्यो
न्याय दृष्टि अवलोय रे, लघु चूर्णि जिन दास कृत ।
तिहां कोलुण शब्दे जोय रे, कोलुण अनुकम्प अर्थ ॥२४२॥

॥ जिनदास आचार्यकृत लघुचूर्णिका ॥

भिक्खू पुव्व भणिओ कोलूणंति-कारुण्यं अनुकम्पा प्रतिज्ञाया इत्यर्थः ।

॥ सोरठा ॥

जो कहै कौतुहल काज रे, कोलुण शब्द तणो अरथ ।
तो कोऊल कौतुहल बाज रे, तेह पाठ न्यारो अछै।२४३।
सप्तदशम उद्देश रे, निशीथ सूत्र में देखिये ।
बाधै वा छोड़ेश रे, कोऊल बड़ियाए तिहां शब्द है ॥
तिहां कौतुहल निमित्त रे मुनि त्रस प्राणी देख कर ।
बांधै छोड़े इत्त रे, तो प्रायश्चित है मुनि भणी ॥२४५॥

॥ सूत्र पाठ ॥

जे भिक्खू कोऊल वडियाए अगणाया तस पाणुजाति तसा पासणएवा जाव सुत्त पासणएवा वधति वध त वा साइज्जइ ॥१॥ जे भिक्खू कोऊल वडियाए वधेल्लय वा मुयति मुय त वा साइज्जइ ॥२॥

निशीथ उ० १७ वें ।

॥ भावार्थ ॥

जो साधु कौतुहल निमित्त अन्य त्रस प्राणियोंको घास की डोरी से यावत् सूत की डोरी से बांधे बंधावे बांधते को अनुमोदे तो प्रायश्चित ॥१॥ जो साधु कौतुहल के निमित्त अन्य त्रस प्राणियों को छोड़े छोडावे छोड़ते को अच्छा जाने तो प्रायश्चित ॥ २ ॥

॥ सोरठा ॥

कौतुहल काज मुनिराज रे. बांध्यां छोड़्यां त्रस प्रति।
दण्ड कह्यो जिनराज रे, सतरहवें उद्देश निशीथ मे ॥
बारमा उद्देश मझार रे, कोलुण ते अनुकम्प करि ।

बांध्यां खोल्यां दंड धार रे, त्रस जीवां प्रते, आखियो॥
इम बिहुं स्थाने जोय रे,पाठ शब्द छै जूजुआ।
कोलुण अनुकम्प होय रे, कोऊल ते कौतुहल कह्यो॥
त्रस जीवां रे मांहि रे, मनुष्य तिर्यञ्च सहु आविया।
तसु अनुकम्पा ल्याहि रे, बांधे खोले मुनी तदा॥२४९॥
प्रायश्चित कह्यो तिहिवार रे, सूत्र वचन ते सत्य है।
ग्रहस्थ नो सार सभार रे, सावद्य जान मुनि नहीं करे॥
ग्रहस्थ तणों जे काम रे, ते करवूं कल्पे नहीं।
कदा अकल्पनीक ठाम रे, पाम्या ग्रहस्थ अनुकम्प करि॥
तेलादि मर्द्दन करेह रे, मुनि तनु शान्ति पमायवे।
यह दोष उपजेह रे, द्वितीय श्रुत स्कन्धे धुर अंगे॥२५२॥
तिहां पिण कोलुण ही शब्द रे, तसु अनुकम्पा अर्थ छै।
एम इहां पिण लब्द रे, कह्यो कोलुण शब्द सारखो॥
तथा अजीविका निमित्त रे, अर्थ करे कोलुण तणो।
ते पिण है विपरीत रे, इहां मुनि ने कांई आजीविका॥
किहां ही न सूत्र विषेह रे, कोलुण ते आजीविका।
जे सूत्रार्थ न जाणेह रे, ते मन कल्पित अर्थ करे॥२५५॥
वलि कहै इम वाय रे, अनुकम्प सावद्य न हुवे।
निर्वद्य ही कहिवाय रे, ततोत्तर न्याय विचारिये॥२५६॥
अनुकम्पा रे काज रे, देवकी नां षट् सुत प्रते।
सुलसां घरे समाज रे, मेल्या हरण गवेषि सुर॥२५७॥

अनुकम्पा चित्त आण रे, डोलहो पूर्ण कियो देवता ।
ज्ञाता सूत्र बखाण रे अभय कुमार तणो तदा ॥२५८॥
श्रीकृष्ण ईंट उपार रे मेली वृद्ध तणे घरे ।
अंतगढ सूत्र मझार रे अनुकंपा करि तेहनी ॥२५९॥
भोग प्रार्थना कीध रे, रयण देवी जिन ऋषि प्रते ।
ते अनुकम्पा करी प्रसिद्ध रे, ज्ञाता नवमाध्ययन में ॥
इत्यादिक बहु ठाम रे, अनुकम्पा करी ने बहु ।
कीधा सावद्य काम रे, ते सवद्य अनुकम्प इम ॥२६१॥
सांसारिक उपकार रे, तेह थी मुनि न्यारा थया ।
श्री जिन आज्ञा बार रे, कार्य कियां प्रायश्चित हुवे॥२६२॥
तेम इहां अवलोय रे, अनुकम्पा अर्थे मुनि ।
त्रस बांधे मूके कोय रे, तो चौमासी प्रायश्चित ॥२६३॥

॥ बोल उनचासवां॥

मोक्ष रो मार्ग जाणे नहीं तिण ने श्री भगवान् रो आज्ञा रो लाभ नहीं । सा० सू० प्रथम आचारांग अ० ४ उ० ४ ।

॥ दोहा ॥

मोक्ष मार्ग जाणे नही, प्रथम आचारांग मांहि ।
लाभ नही जिन आण ने, तूर्य अध्ययने ताहि ॥२६४॥

उद्देशा चौथा विषे. भाष्यो श्री जिनराय ।
मोक्षाभिलाषी वीर ने, मार्ग विकट कहिवाय ॥२६५॥
तिण सूं तप थी निज तनु, लोही मांस सुकाय ।
ब्रह्मचर्य वसवें करी, माननीय कहवाय ॥२६६॥
प्रथम इन्द्रियां वश करी, पिण मोह उदय ते बाल ।
विषयासक्त होता थकी. न सके वन्धन टाल ॥२६७॥
वलि प्रपञ्च करे घणो, एहवो पुरुष अयाण ।
मोह तिमिर मे वर्त्ततो, किम पामे जिण आण ॥२६८॥

॥ सूत्र पाठ ॥

दुरणु चरो मग्गो, वीराण अणियट्ट गामीण, विगिं च मस सोणिय एस पुरिसे दवीए वीरे आयाणिज्जे वियाहिए जे धुणाति समुस्सय वसिता बभचेरमि, गोत्तेहिं पलिछन्नेहिं आयाण सोय गढिये बाले अवोच्छिन्न बधणे अणभिकत सजोए । तमसि अविजाण ओ आणाए लंभो णत्थि त्तिवेमि ।

श्री आचारांग सूत्रे प्रथम श्रुतस्कन्धे चतुर्थ अध्ययने ।

॥ भावार्थ ॥

मुक्ति पाने वाले वीर पुरुषों का मार्ग बहुत ही कठिन है । इसलिये हे मुनि ! तपश्चर्यादि करके माँस रक्तको शुष्क कर । जो पुरुष सदैव ब्रह्मचर्य पूर्वक रह कर, तप से शरीर को दमते हैं वे मोक्ष प्राप्त करने वाले वीर पुरुष माननीय होते है । और जो पुरुष शुरूआत में कदाचित् इन्द्रियों को वस करके वर्त्ते हैं और पीछे मोहके जोश में आके विषयों में आशक्त हो गये हैं ऐसे बाल (अज्ञानी) पुरुष किसी बन्धन से नहीं

छूटते और प्रपञ्च रहित नहीं होते। अतः ऐसे अज्ञान पुरुष को मोहमय अन्धकार में वर्त्तते हुए, भगवान की आज्ञा का लाभ नहीं होता है।

॥ बोल पचासवां ॥

ब्राह्मण ने जिमायां तमतमा कही। सा० सू० उ० अ० १४ गाथा १२।

॥ दोहा ॥

विप्र जिमायां तमतमा, कह्यो भृगु ना पुत्र।
उत्तराध्ययने चवदमे, गाथा बारमी सूत्र ॥२६९॥
वेद भण्या नही त्राण शरण, नही आतम उद्धार।
भोजन जिमायां तमतमा, पहोंचे नरक मझार ॥२७०॥
सुत जायां नही शिव गति, ते माटे अवधार।
गृहस्थाश्रम नही रहां हमे, लेस्यां संयम भार ॥२७१॥

॥ सूत्र पाठ ॥

वेया अहिया न भवति ताणा भुत्ता दिया निंति तम तमेणं।
जायाय पुत्ता न हवति ताणा, को णाम ते अणु मन्नेज एयं ॥१२॥

उत्तराध्ययने अ० १४।

॥ भावार्थ ॥

वेद पढ़ने से ही त्राण शरण नहीं होता, भोजन देने से तमस्तमा में जाते हैं और पुत्रादि होने से संसार समुद्र नहीं तिरते, अतः अहो तातजी तुम्हारे बचनों को कैसे स्वीकारें।

॥ सोरठा ॥

इहां कोई युक्ति लगाय रे. कहै भृगु सुत तो गृहस्थ छा।
तसु वच किम मनाय रे, वा तमातम मिथ्यात हुवै ॥२७२॥
तसु उत्तर सुविचार रे न्याय दृष्टि अवलोकिये।
इग्यारहवीं गाथा मझार रे, भगवन् गणधर इम कह्यो ॥
बोले वचन विमास रे, तूर्य पदे इम आखियो।
तो मिथ्या वच किम तास रे, गणधर तास सरावियो ॥
सांचो सुत वच मान रे, भृगु पिण संयम लियो।
जिन मत सांचो जान रे, निज मत खोटो श्रद्धियो ॥२७५॥
कहै हुवै मिथ्यात रे. धर्म श्रद्धी जिमावियां।
ते लेखे पिण थात रे, पाप बन्ध भोजन दियां ॥२७७॥
अवचूरी रे मझार रे. अन्धकारे अन्धकार छै।
रौरवादि नरक विस्तार रे तमतमा नूं अर्थ इम ॥२७७॥

॥ बोल इकावनवां ॥

भोजिता द्विजा विप्रा नयन्ति तम सोपियत्त मस्तरिमन् रौद्रे रौरवादिके नरकेणं वाक्यालंकारे।

॥ सोरठा ॥

तथा सूयगडाअङ्ग मझार रे, आर्द्र मुनि पिण इम कह्यो।
द्वितीय श्रुतस्कन्धे धार रे, अध्ययन छट्ठा ने विषे ॥२७८॥

स्नातक दोय हजार रे, विषयाशक्त विप्रां प्रते ।
जावे नरक मझार रे, भोजन जिमायां इम कह्यो ॥२७९॥
मांस लोलुपी जेह रे, एकान्त अर्थी खाया रा ।
घर २ भमता तेह रे. पेट भराई कारणे ॥२८०॥
ब्रह्म क्रिया न पालेह रे, हिंसा धर्म प्रशंसता ।
वलि निषेधना ते करेह रे, प्रधान दया धर्म तेहनो ॥२८१॥
हीनाचारी एक रे. एहवा प्रते जे जीमावतां ।
जावे नरक मझार रे, सुरावतार जिहां हो रह्यो ॥२८२॥

॥ सूत्र पाठ ॥

सिणाय गाण दुओो वे सहस्से, जे भोयए णितिए कुलाल याण ।
से गच्छइ लोलुपा सपगाढे तिव्वा भितावी णरगाहि सेवी ॥४४॥
दयावर धम्म उगछ माणे, वहावह धम्म पसस माणे ।
एगपि जे भोय अयइ असील, णिवोणि सजाइ कओो सुरेहिं ॥४५॥

सूत्र कृतांगे द्वि० श्रुत० षष्टमध्ययने ।

॥ भावार्थ ॥

आर्द्र कुमार मुनि को ब्राह्मणों ने कहा कि दो हजार विप्रों को जिमाने से पुण्य का स्कन्ध उपार्जन करके देवता होता है। तब आर्द्र कुमार मुनि ने उत्तर दिया कि जो दो हजार स्नातक आमिष्यार्थी ब्रह्मचर्य क्रिया रहित घर २ में भिक्षा माँगनेवाले कुपात्र ब्राह्मणों को जिमाने से महा तीव्र वेदना वाली नरक में जाते हैं। क्योंकि जो प्रधान दया धर्म है उसकी तो वे निन्दा करते हैं और हिंसा धर्म की प्रशसा करते हैं ऐसे एक को भी भोजन कराने से सुरगति तो जहाँ ही रही परन्तु नरक गति प्राप्त होती है।

॥ बोल बावनवां ॥

साधु रे सर्व थकी अठारह पाप रा त्याग छै पिण देश थकी नहीं ।

॥ दोहा ॥

सर्व प्रकारे त्यागिया, पाप अठारह जान ।
उववाई प्रश्न इकीसवें, साधु महा गुणखान ॥२८३॥
गामागर अरु नगर में, यावत् सन्निवेश ।
इक २ मनु एहवा अछे, सांभलजो सुविशेष ॥२८४॥
अणारंभ अपरिग्रही, धार्मिक धर्म इष्ट ।
यावत् धर्म नी वृत्ति कल्प, सुशील सुव्रती शिष्ट ॥२८५॥
आनन्दकारी मुनि तिका, सर्व प्राणातिपात ।
यावत् सर्व परिग्रह थकी, निवृत तेह सुजात ॥२८६॥
क्रोध मान माया अरु, लोभ थकी मुनि तेह ।
जाव मिथ्या दर्शन शल्य थी, प्रति विरत्या छै तेह ॥२८७॥
सव आरम्भ समारम्भ वलि, करण करावण जाण ।
पचन पचावन तेहना, सर्वथा किया पच्चखान ॥२८८॥
कूटण पीटण तर्जना. ताड़न वध अने बन्ध ।
परि क्लेशें थी निवृत थया छोड़ दिया सर्व धन्ध ॥२८९॥
सर्व थकी न्हावा तणा, वलि मर्द्दन पीठी जान ।
तैल विलेपन आदि ना, छै त्यांरे पच्चक्खाण ॥२९०॥

शब्द स्पर्श रस रूप गन्ध, माला ने अलङ्कार ।
सर्व प्रकारे छांडिया, सावद्य योग व्यापार ॥२६१॥
कष्ट परिताप पर प्राणि ने, होवे जेह उपाय ।
यावज्जीव निवर्त्या तेह थी, ते अणगार कहाय ॥२६२॥
इरिया भाषा समिति युत, निर्ग्रन्थ वचनज तन्त ।
तसु आगे करकी मुनि, विचरे महा गुणवन्त ॥२६३॥

॥ सूत्र पाठ ॥

से जे इमे गामागर नगर जाव सन्निवेसेसु मणुया भवन्ति तंजहा—अणारम्भा, अपरिग्गहा, धम्मिया, धम्मिठ्ठा, जाव धम्मेणा चेव वित्ति कप्पे माणा, सुसीला सुव्वया सु पडियाणा दा, सव्वा ओ पाणाइवाया ओ पडि विरया, जाव सव्वा ओ परिग्गहा ओ पडि विरया, सव्वा ओ कोहा ओ माणा ओ माया ओ लोहा ओ मिच्छा दंसणा सल्ला ओ पडि विरया, सव्वा ओ आरम्भ समारम्भा ओ पडि विरया, सव्वा ओ करणा करावणा ओ पडि विरया, सव्वा ओ पयणा पयावणा ओ पडि विरया, सव्वा ओ कोट्टणा पीट्टणा तज्जणा ताडणा वह बध परि किलेसा ओ पडि विरया, सव्वा ओ ण्हाणा मद्दणा वणक विलेवन सद्द फरिस रस रूव गंध मल्ला लंकाराती पडि विरया, जे पावयणो तहप्पगारे सावज्ज जोगो वहिया कम्मता पर पाण परियावणा करा कज्जति ततोवि पडि विरया, जावज्जीवाए, से जहा नामए अणगारा भवति, इरिया समिया भासा समिया जाव इणा मेव णिग्गंथ पावयणा पुराओ काओ विहरति ।

उववाई प्रश्न २१ वाँ ।

॥ भावार्थ ॥

वे जो ग्राम आगार यावत् सन्निवेश में मनुष्य होते हैं तद्यथा :— सर्वथा छवों ही कायों के आरम्भ रहित, सर्वथा मृपावाद रहित, सर्वथा अदत्त रहित, सर्वथा मैथुन रहित, सर्वथा धातु मात्र परिग्रह रहित होते हैं, जिन्हों को धर्म ही इष्ट है यावत् धर्म की वृत्ति कल्पते हुए विचरते है, वे सुशील शुद्धाचारी सुव्रती अच्छा कार्य कर आनन्द माननेवाले सर्व प्रकार तोन करण तीन योग से प्राणातिपात से निवृत्त हुए यावत् परिग्रह निवृत्त हुए तैसे ही सर्व प्रकार से क्रोध मान माया लोभ यावत् मिथ्या दर्शन शल्य से निवृत्त हुए, सब तरह आरम्भ समारम्भ से निवृत्त हुए एवं पचन पचावनादि क्रिया से निवृत्त हुए सब तरह से कूटन पीटन तर्जन ताडन वध वन्धन क्लेश से निवृत्त हुए एवं सब तरह से स्नान, पोठी मर्द्दन, तिलकादि विलेपन से निवृत्त, शब्द स्पर्श रूप गन्ध माला अलंकार आदि से सर्वत. निवृत्त हुये और भी सावद्य काम योगोपाधि कर्म से अन्य प्राणी को परिताप होय ऐसे कार्य्य से जावजीव पर्य्यन्त सर्वथा निवृत्त हुये वे अणगार यानी साधू होते हैं, वे ईर्या समितिवन्त भाषा समितिवन्त यावत् जिन प्रणीत निग्रन्थ प्रवचन को आगे कर उनके अनुगामो बने विचरते हैं।

॥ बोल बावनवां ॥

साधु रा भंड उपकरण परिग्रह में नहीं कह्या मूर्छा राखे तो परिग्रह लागे इम कह्यो। सा० सू० दशवैकालिक अ० ६ गाथा २१ वीं।

॥ दोहा ॥

वस्त्र पात्र ने कम्बल, पाय पूछणा आदि।
संयम लज्जा अर्थ मुनि, धारे तज असमाधि ॥२९४॥

ते परिग्रह मांहि नहीं, भख्यो ज्ञात पुत्र महावीर ।
मूर्च्छा थी परिग्रह कह्यो, मृषा ऋषि गुण धीर ॥२९५॥
दशवैकालिक देखलो, छट्ठा अध्ययन मझार ।
इकबीसमी गाथा मझे, भाख्यो श्री जगतार ॥२९६॥

॥ सूत्र पाठ ॥

जं पि वत्थ व पायं वा, कवल पाय पुच्छण ।
त पि सजम लज्जट्ठा, धारति परि हरति य ॥२०॥
न सो परिग्गहो वुत्तो, नाय पुत्तेण ताइणा ।
मुच्छा परिग्गहो वुत्तो इअ वुत्त महिसिणा ॥२१॥

दशवैकालिक अ० ६ गा० २१ ।

॥ भावार्थ ॥

जो वस्त्र वा पात्र कम्बल पायपूछना आदि संयम् लज्जार्थ रखे सो परिग्रह में नहीं श्री ज्ञातपुत्र महावीर स्वामी ने कहा है यदि उन पै मूर्च्छित भाव लावे तो परिग्रह में है ऐसा महर्षियों ने कहा है ।

॥ बोल तिरेपनवां ॥

साधु रे नव कोटी पच्छखाण कह्या । सा० सू० दशवैकालिक अ० ४ ।

॥ दोहा ॥

त्रिविध २ नव कोटि से, साधु रे पच्चखाण ।
दशवैकालिक में कह्यो, चतुर्थ अध्ययने जाण ॥२९७॥

षड् जीव निकाये प्रते, हणे हणावे नांहि ।
अनुमोदे न हणतां प्रति, मन वच काया ताहि ॥२९८॥

॥ सूत्र पाठ ॥

इच्छेहिं छयह जीव निकायाण नेव सय दड समारम्भेज्जा नेवन्नेहिं दण्ड समारम्भेज्जा, दण्ड समार भते वि अन्नेन समणु जाणेज्जा जाव-ज्जीवाए तिविहेण २ मणेण वायाए कायेण न करेमि न कारवेमि कर ते पि अन्न न समणु ज्जाणामि ।

दशवैकालिक अध्ययन ४ था ।

॥ भावार्थ ॥

इन षड् जीव निकायों का स्वयं आरम्भ करे नहीं अन्य से आरम्भ करावे नही और करने वाले को अच्छा जाने नहीं मन वचन काया से यावज्जीव पर्यन्त वैसा करे नहीं अन्य से करावे नहीं करते को अच्छा जाने नहीं इस तरह नव कोटी पच्छखान है ।

॥ बोल चौपनवां ॥

आचारज नी आज्ञा बिना आहार करे करता ने भलो जाणे तो प्रायश्चित कह्यो । सा० सू० निशीथ उ० ४ बोल २२ वां ।

॥ दोहा ॥

आचार्य नी आज्ञा बिना अरु बिन दीधां आहार ।
जे साधु जो भोगवे, प्रायश्चित तसु धार ॥२९९॥

इम कह्यो सूत्र निशीथ मे, चौथे उद्देशे मझार ।
गुरु आज्ञा विन भोगव्यां, आख्यो दण्ड उदार ॥३००॥

॥ सूत्र पाठ ॥

जे भिक्खू आयरिय अदित आहार आहारतवा साइज्जइ ।

निशीथ उद्देशा ४ बोल २२ वाँ ।

॥ भावार्थ ॥

जो साधु आचार्य के विना दिये चारों प्रकार का आहार करे करते को भला जाने तो प्रायश्चित ।

॥ बोल पचपनवां ॥

पुण्य पाप से जीवने पचतो दीठो कह्यो । सा० सू० उत्तराध्ययन अ० १० गाथा १५ वीं ।

॥ दोहा ॥

पुन्य पाप सें जीव ने, पचतो देख्यो सोय ।
दशमे उत्तराध्ययन मे, पनरमी गाथा जोय ॥२०१॥
भव संसारे संसरइ, शुभाशुभ कर्म प्रभाव ।
प्रमाद बहोल पणे करइ, न जाणे तिरणा रो दाव ॥२०२॥

॥ सूत्र पाठ ॥

एव भव ससारे, संसरइ सुहा सुहेहि कम्मेहिं ।
जीवो पमाय बहलो, समय गोयम मा पमाय ए ॥

उत्तराध्ययने १० वें ।

॥ भावार्थ ॥

ऐसे भव संसार में प्रमादी जीव शुभाशुभ कर्म करके परिभ्रमण करता हैं। इसलिये हे गौतम ! समय मात्र भी प्रमाद मत कर।

॥ बोल छप्पनवां ॥

पुन्य पाप ने खपावणा कह्या। सा० सू० उत्त- अ० २१ वें गाथा० २४ वीं।

॥ दोहा ॥

पुन्य पाप वेहूं भणी, खपावण सुविशाल।
उत्तराध्ययने इकबीसमे, चौवीसमी गाथा न्हाल ॥३०३॥
द्विविध खपायां शीघ्र ते, पुन्य पाप असराल।
अपुनरागम गति लही भवाब्धि तर्यो समुद्रपाल ॥३०४॥

॥ सूत्र पाठ ॥

दुविह खवे ऊय पुराणा पाव निरगणे सव्वाओ विप्पमुक्के।
तरित्ता समुद्द व महाभवोध, समुद्द पाले अपुणागम गए तिवेमि ॥

उ० अध्य० २१ वें गा० २४ वीं।

॥ भावार्थ ॥

पुन्य पाप दोनों का क्षय कर शैलेसी अवस्था को प्राप्त हो महा प्रभाविक भव समुद्र है उसे तैर कर पुन. वापिस न आना पडे ऐसी जो सिद्ध गति है सो समुद्रपाल मुनि प्राप्त हुये।

॥ बोल सतावनवां ॥

उसन्ना पासत्था अर्थात् ढीला शिथिलाचारी ने वन्दना करे प्रशंसा करे करावे करता ने भलो जाणे तो प्रायचित कह्यो। सा० सू० निशीथ उद्देश १३ बोल ४२-४३-४४-४५।

॥ दोहा ॥

जे मुनि पासत्था प्रते, वन्दना करै कराय।
करतां ने भलो जाणियां, चौमासी प्रायश्चित आय ॥२०५॥
दोषी मूल उत्तर गुणे, ते उसन्ना कहवाय।
तेहने पिण वांद्या थकां, इमहिज दण्ड सुपाय ॥२०६॥
वलि पासत्था उसन्ना तणो, करै प्रशंसा कोय।
प्रायश्चित चौमासी तसु, निशीथ तेरहवें जोय ॥२०७॥

॥ सूत्र पाठ ॥

जे भिक्खू पासत्थं वंदइ वंदंतं वा साइज्जइ ॥४२॥

जे भिक्खू पासत्थं पसंसंति, पसंसं तं वा साइज्जइ ॥४३॥

जे भिक्खू उसण्णं वंदइ वंदंतं वा साइज्जइ ॥४४॥

जे भिक्खू उसण्णं पसंसेइ पसंसं तं वा साइज्जइ ॥४५॥

निशीथ उ० १३।

॥ भावार्थ ॥

जो भिक्षु पासत्था अर्थात शिथिलाचारी को वन्दे वन्दावे अनुमोदे, तो प्रायश्चित ॥४२॥ जो भिक्षु शिथिलाचारी की प्रशंसा करे करावे अनु-

मोदे तो प्रायश्चित ॥४३॥ जो भिक्षु उसन्ना यानी मूल उत्तर गुणों में दोष लगाने वाले को वन्दे वन्दावे अनुमोदे तो प्रायश्चित ॥ ४४ ॥ जो भिक्षु उसन्ना की प्रशंसा करे करावे अनुमोदे तो प्रायश्चित ।

॥ बोल अठावनवां ॥

जो साधु ग्रहस्थ की औषधि करे करावे करतां प्रते अनुमोदे तो प्रायश्चित । सा० सू० निशीथ उ० १२ वें बोल १७ वूं ।

॥ दोहा ॥

ग्रहस्थ नी औषध करै, जो साधु मुनिराय ।
निशीथ उद्देशे बारहवें, दंड कह्यो जिनराय ॥३०८॥

॥ सूत्र पाठ ॥

जे भिक्खू गिहि तिगिच्छं करेइ कर त वा साइज्जइ ॥१७॥

॥ भावार्थ ॥

जो साधु ग्रहस्थ को औषधि करे करावे करते को अनुमोदे तो प्रायश्चित ।

॥ बोल उणसठवां ॥

सामायक दो कही १ आगार सामायक २ अणागार सामायक । सा० सू० ठाणांग ठाणे २ उ० ३ रा ।

॥ दोहा ॥

सामायक दो विध कही, आगार अने अणागार ।
स्थानांग ठाणे दूसरे, तीजा उद्देशा मझार ॥३०९॥
आगार सामायक ग्रहस्थ रे, करे आगार सहित्त ।
अणागार अणगार रे, ते आगार रहित्त ॥३१०॥

॥ सूत्र पाठ ॥

दुविहे सामाइए पएणत्ते तंजहा—आगार सामाइए चेव अणा-गार सामाइए चेव ।

स्थानांगे द्वितीय स्थाने ।

॥ भावार्थ ॥

दो प्रकार की सामायिक कही तद्यथा—आगार सामायिक अर्थात् ग्रहस्थ श्रावक के मुहूर्त्तादिक की मर्याद सहित सामायिक। दूसरी अणागार सामायिक यानी साधु के जो महाव्रत रूप यावज्जीवन पर्यन्त है सो आगार रहित ।

॥ बोल साठवां ॥

चारित्र दोय कह्या—१ आगार चारित्र २ अणा-गार चारित्र । सा० सू० स्थानांग ठाणे २ उ० १ ।

॥ दोहा ॥

चारित्र धर्म द्विविध कह्यो, आगार अणागार जाण ।
स्थानांग ठाणे दूसरे, पहले उद्देशे पिछाण ॥३११॥

॥ सूत्र पाठ ॥

'चरित्त धम्मे दुविहे पराणते त जहा'—आगार चरित्त धम्मे चेव, अणागार चरित्त धम्मे चेव ।

सू० स्थानाङ्ग द्वितीय स्थाने ।

॥ भावार्थ ॥

चारित्र धर्म के दो भेद प्ररूपे तद्यथाः—आगार चारित्र धर्म सो ग्रहस्थ सम्यक्त्व सहित स्थूलपने व्रत आदरे । अणागार चारित्र धर्म सो ग्रहस्थाश्रम का सर्वथा त्याग कर पंच महाव्रत आदरे ।

॥ बोल इकसठवां ॥

धर्म दोय कह्या—श्रुत धर्म १, चारित्र धर्म २ सा० सू० ठाणाङ्ग ठा० २ उ० १ ।

॥ दोहा ॥

दोय धर्म जिन आखिया, श्रुत चारित्र उदार ।
श्रुत ते आगम जिन कथित, चारित्र ते व्रत धार ॥३१२॥
स्थानांग स्थाने दूसरे, प्रथमा उद्देशे मझार ।
बोले पच्चीसमां ने विषे, कह्यो धर्म विस्तार ॥३१३॥

॥ सूत्र पाठ ॥

दुविहे प० त० सुयधम्मे चेव चरित्त धम्मे चेव ।

ठाणांग ठा० २ ।

॥ भावार्थ ॥

दुर्गति में पडे हुये को धार रक्खे वह धर्म दो प्रकार का कह्या—श्रुत धर्म द्वादशांग रूप १, चारित्र धर्म पच महाव्रत रूप २ ।

॥ बोल बासठवां ॥

कर्म खपावा री करणी दोय कही—संयम, और तप। सा० सू० उत्तराध्ययन अ० २८ वें गाथा ३६ वीं।

॥ दोहा ॥

करणी कर्म खपायवा, दोय कही जिनराय।
उत्तराध्ययन अठवीसमे, छत्तीसवी गाथा ताय ॥३१४॥
पूर्व संचित कर्म ते, तप संयम थी खपाय।
हीन करण सब दुःख तणों, महा ऋषि करणी कराय ॥

॥ सूत्र पाठ ॥

खवेत्ता पुव्व कम्माइं, संजमेण तवेणय।
सव्व दुक्ख पहीणट्ठा, पक्कमति महेसिणो तिवेमि ॥३६॥

उत्तराध्ययन अ० २८ वाँ।

॥ भावार्थ ॥

सतरे प्रकार संयम से और बारै प्रकार तप से पूर्व सञ्चित कर्मों को क्षय करे और जन्म जरा मृत्यु रूप सर्व दुखों से रहितार्थ महा ऋषि करणी करे।

॥ बोल तिरेसठवां ॥

मार्ग दोय कह्या—भगवान रो प्ररूप्यो मार्ग १, और पाखंडिया रो प्ररूप्यो मार्ग २। सा० सू० उ० अ० ३३ वें गा० ६३ वीं।

॥ दोहा ॥

दोय मार्ग हैं जगत मे, इक पाखंडी कहाय ।
द्वितीय मार्ग है जिन कथित, तेह परम सुखदाय ॥३१५॥
उत्तराध्ययन तेवीसवें, केशी श्रमण पूछंत ।
तब गोयम इह विधि कह्यो, ते सुणिज्यो धरि खंत ॥३१६॥
कुप्रवचन पाखंडी ना, सर्व उन्मार्ग गच्छंत ।
सन्मार्ग जे जिन कह्यो. उत्तम मार्ग ते तंत ॥३१७ ॥

॥ सूत्र पाठ ॥

कु पव्वयण पासण्डी, सव्वे उम्मग्ग पट्ठिया ।
सम्मग तु जिणक्खाय, एसमग्गे हि उत्तमे ॥६३॥

॥ भावार्थ ॥

कुप्रवचन है सो पाखंडियों का कहा हुआ उन्मार्ग है उसमें जाने वाले सर्व कुमार्ग जा रहे हैं और जो जिनेश्वरों का कहा हुआ है सो सन्मार्ग है सोही उत्तम अर्थात् श्रेष्ठ है ।

॥ बोल चौसठवां ॥

संवर गुण अने आस्रव गुण जुदा २ कह्या ।
सा० सू० प्र० आचाराङ्ग अ० ४ उ० २ ।

॥ दोहा ॥

संवर गुण न्यारो कह्यो. आस्रव गुण कह्यो न्यार ।
प्रथम आचारांग चतुर्थ वें, बुद्धिवंत करो विचार ॥३१८॥

जेह आस्रव द्वार छे, ते रोक्यां संबर थाय।
खोल्यां आस्रव होत है, इम गुण अलग कहाय २१९॥
कर्म बंधनां हेतु ते, प्रवर्त्यां आस्रव होय।
तसु त्याग कियां संबर हुवे, इम जुदा २ गुण जोय ॥२२०॥
आस्रव नूं अणास्रव हुवे, अणास्रव नूं आस्रव।
प्रथमें जिण २ भाव मे, पृथक २ गुण सर्व्व ॥२२१॥

॥ सूत्र पाठ ॥

जे आसवा ते परिसव्वा, जे परिसव्वा ते आसवा, जे अणासव्वा ते अपरिसव्वा जे अपरिसव्वा ते अणासव्वा।

प्र० आचाराङ्ग अ० ४ उ० २।

॥ भावार्थ ॥

जो कर्म बाँधने के हेतु हैं वे कर्म क्षपाने के या रोकने के हेतु हो सकते हैं, जो कर्म क्षपाने के या रोकने के हेतु हैं वे कर्म बाँधने के हेतु हो जाते हैं, तथा जितने कर्म बाँधने के हेतु हैं वे रोकने के हेतु हो जाते हैं और जितने कर्म रोकने के हेतु हैं वे बाँधने के हेतु हो जाते हैं, अर्थात जिन २ कारणों से कर्म बंधते हैं वे आस्रव द्वार है और उन्हीं का त्याग करने से वेही संवर हो जाते हैं—जैसे मित्थ्या श्रद्धना मित्थ्यात आस्रव द्वार है, हिन्सा करना प्राणातिपात आस्रव द्वार है, और मित्थ्या श्रद्धनाँ का त्याग कर सम श्रद्धना सम्यक्त्व संवर द्वार है इसी तरह हिन्सा का त्याग करे सो अहिन्सा संवर द्वार है, तात्पर्य कर्म आने के जो द्वार हैं सो खुल्ले द्वार है उनको बंध करे सो संवर हैं, इस प्रकार आस्रव और संवर का गुण अलग २ है।

॥ बोल पैंसठवां ॥

करणी च्यार कही—इह लोक रे हित १, परलोक रे हित २. कीर्त्ति वर्ण शब्द व पूजा श्लाघा रे हित ३, निरजरा रे हित ४, इण च्यार प्रकार में से एकान्त कर्म निर्जरा रे हित तप करणो कह्यो। सा० सू० दशवैकालिक अ० ९ उ० ४।

॥ दोहा ॥

करणी च्यार प्रकार नी, कही दशवैकालिक मांहि।
नवमां अध्ययन ने विषे, चौथे उद्देशे ताहि ॥३२२॥
इह लोक अर्थ तप नहिं करे, वलि नही परलोक ने हेत।
वर्ण श्लाघा शब्दादि निमित, न करे तप संकेत ॥३२३॥
एकान्त निर्जरा कारणे, तप करणो कह्यो सोय।
समाधि हुवे चौथे पदे, तसु गुण श्लोके जोय ॥३२४॥
नित्य विविध गुण होत हैं, आस रहित तप आसक्त।
निरजरा अर्थी पाप क्षय करे, तप समाधि सदा संयुक्त ॥

॥ सूत्र पाठ ॥

चउविहा खलु तव समाहि भवइ त जहाः—नो इह लोगट्ठयाए तव महि ट्ठिज्जा, नो परलोगट्ठया ए तव महि ट्ठिज्जा, नो किति वयण सद्द सिलोगट्ठयाए तव महि ट्ठिज्जा, नन्नथ निज्जरट्ठयाए तव महि ट्ठिज्जा चउत्थं पय भवइ भवइ एत्थसिलोगो, विविह गुण तवोरए निच्च,

भवइ निरासए निज्जरट्ठिए, तव साहुणइ पुराण पावग जुत्तोसया तव समाहिए ।

दशवैकालिक अ० ९ उ० ४ ।

॥ भावार्थ ॥

च्यार प्रकार तप समाधि कही—इस लोक के सुखों के लिये तप नहीं करे १, परलोक के सुखों के लिये तप नहीं करे २, कीर्त्ति वण शब्द श्लाघा के लिये तप न करे ३, एकान्त निरजरा का अर्थी होके तप करे ४, चतुर्थ पद जो निरजरार्थी होके तप करे जिसका गुण श्लोक में कहा सो कहते हैं—तप समाधि में सदा युक्त साँसारिक आशा रहित निरजरा का अर्थी, पूर्व कृत पापों का नाश करता है।

॥ बोल छासठवां ॥

प्रज्ञा दोय कही—ज्ञान प्रज्ञा १, पचखाण प्रज्ञा २, ज्ञान प्रज्ञा करी जाणे और पचखाण प्रज्ञा करी पचखाण करै। सा० सू० आचाराङ्ग प्र० श्रु० अ० १ ।

॥ दोहा ॥

दोय प्रकारे वर्णवी. प्रज्ञा ते बुद्धि जान ।
जाणे ज्ञान प्रज्ञा करी, प्रत्याख्यान पचखान ॥३२६॥
धुर आचारांगे कह्यो, धुर अध्ययन मझार ।
द्विविध प्रज्ञा इण्रकार नूं, बुद्धिवत करे विचार ॥३२७॥
समजो क्रिया भेद प्रते, द्विविध प्रज्ञा यो जेह ।
समझ कर्म कारण भणी, दूर रहै मुनि गुण जेह ॥३२८॥

॥ सूत्र पाठ ॥

जस्स ते लोगं सि कम्म समारम्भा परिणाया भवति, सेहु मुणी त्तिवेमि ।

प्र० आचारांग अ० १ उ० १ ।

॥ भावार्थ ॥

समस्त वस्तुओं के जानने वाले भगवान केवलज्ञान से साक्षात देखके उपरोक्त जो क्रियाओंके भेद बताये तथा दो प्रकार की प्रज्ञा बताई उन्हें अच्छी तरह समझ के कर्मों के कारणों से दूर रहे सो मुनि कहलाते हैं ।

॥ बोल सड़सठवां ॥

धर्म दोय कह्या—आगार धर्म १, अणागार धर्म २, सा० सू० उववाई समवशरण इधकार में ।

॥ दोहा ॥

धर्म दोय प्रकार नूं, कह्यो उववाई मांहि ।
आगार ने अणागार रो, ते व्रत मे धर्म कहाहि ॥३२९॥
सर्व प्रकारे मुण्ड हो, आगार ते अणगार ।
प्रवर्ज्या अङ्गीकार करि, अणागार धर्म धार ॥३३०॥
हिन्सा सर्व प्रकार से, मृषा सर्व प्रकार ।
चोरी मैथुन परिग्रह, सर्व प्रकार निवार ॥३३१॥
सर्व प्रकारे त्यागियो, रात्रि भोजन जेह ।
अहो आयुष्यमान ते, अणागार सामाइ कहेह ॥३३२॥

ये धर्म सीख्या ऊठिया, निर्ग्रन्थ निर्ग्रन्थनी जान ।
ते आराधक जिन आण ना, इम भाख्यो भगवान ॥२३३॥
आगार धर्म द्वादश विध, आख्यो श्री जिनराय ।
पञ्च अणुव्रत तीन गुण, च्यार सिखा व्रत सांय ॥२३४॥
हिन्सा झूठ अदत्त फुन, मैथुन परिग्रह जान ।
स्थूल थकी त्यागन किया, ते पंच अणुव्रत मान ॥२३५॥
दिशि उपभोग परिभोग नी, कीधी जे मर्याद ।
बिरम्यां अनर्थ दंड से, यह तीनूं गुण व्रत लाध ॥२३६॥
सामाइ देशावगासियं, पोषह अतिथि सं विभाग ।
च्यार सिखा व्रत एह हैं, सर्व द्वादश व्रत साग ॥२३७॥
अपश्चिम मर्णान्त जे, सलेहणा झूसणा करन्त ।
आगार सामाई धर्म ये, अहो आयुषामन्त ॥२३८॥
इण हिज धर्म मे ऊठिया, सीख्यो यह व्रत धर्म ।
विचरे श्रावक श्राविका, ते आज्ञा आराधक पर्म ॥२३९॥
जे जे अविरत्ति निवृत्तिया, ते ते श्रावक धर्म ।
धर्म नहिं आगार मे, यह जिन शासन मर्म ॥२४०॥

॥ सूत्र पाठ ॥

धम्म दुविहं आइक्खति तं जहाः—आगार धम्म च १, अणागार धम्म च २, ताव इह खलु सव्व तो सव्वत्ताए मुंडे भवित्ता आगाराओ अणागारियं पव्वइ सइ, सव्वओ पाणाइ वायाओ वेरमणं, सव्वाओ मुसावायाओ वेरमणं, सव्वाओ अदिन्ना दाणाओ वेरमणं, सव्वाओ

मेहुणाओ वेरमण, सव्वाओ परिग्गाहाओ वेरमणं, सव्वाओ राई भोयणाओ वेरमणं, अयमाउसो अणगार सामाइए धम्म पणत्ते, एयस्स धम्मस्स सिक्खाए उवट्ठिए णिग्गंथ णिगथिवा विहरमाणे आणाए आराहए भवति। आगार धम्म दुवालस विह आइक्खइ त जहा—पञ्चअणुव्व-याइं तिणि गुणव्वयाइं चत्तारि सिक्खा वयाइं, पञ्चअणुव्वयाइं त जहा—थूलाओ पाणाइ वायाओ वेरमणं, थूलाओ मुसावायाओ वेरमणं, थूलाओ, अदिन्ना दाणाओ वेरमणं, सदारा संतोसे, इच्छापरिमाणं थूलाओ परि-ग्गहाओ वेरमणं, तिणि गुणव्वयाइं त जहा—दिसिव्वय, उवभोग परिभोग परिमाणं, अणत्थ दंड वेरमणं, चत्तारि सिक्खा वयाइं त जहा—सामाइय, देसावग्गासिय, पोसहोववासे, अतिहि स विभागो, अपच्छिम मरणांतिया सलेहणा भूसणाराहणाए। अयमाउसो अगार सामाइए धम्मे पणत्ते, एयस्स धम्मस्स सिक्खाए उवट्ठिए समणोवासए समणो-वासियावा विहरमाणे आणाए आराहए भवति।

॥ भावार्थ ॥

धर्म दो प्रकार का कहा सो कहते हैं—आगारिक धर्म तो गृहवास में रहता हुआ धर्म पाले १, अणागारिक धर्म गृहावास त्याग कर साधु धर्म पाले सो निश्चय कर के सर्वथा प्रकार मुण्ड होके आगार से अना-गार हो सर्वथा प्रकार प्राणातिपात से निवृत्ते, सर्वथा प्रकार मृषावाद से निवृत्ते, सर्वथा प्रकार चोरी से निवृत्ते सर्वथा प्रकार स्त्री संग से निवृत्ते, सर्वथा प्रकार परिग्रह से निवृत्ते, सर्वथा प्रकार रात्रि भोजन से निवृत्ते, हे आयुष्यमान यह अणगार सामाइ धर्म प्ररूप्या है, यही धर्म सीखा है, इसी धर्म में उठे हैं साधु तथा साध्वी उपरोक्त पंच महाव्रत रूप धर्म पालते हुए विचरते हैं। आगार धर्म बारह प्रकार का कहा है

सो कहते हैं—पंच अणुव्रत तीन गुण व्रत च्यार सिखा व्रत इस प्रकार द्वादश व्रत रूप धर्म कहा सो कहते हैं—स्थूल से प्राणातिपात से निवृत्ते १, स्थूलसे मृषावाद से निवृत्ते २, स्थूल से चोरी कर्म से निवृत्ते ३, स्व स्त्री से ही संतोष अर्थात् पर स्त्री के त्याग ४, स्थूल से परिग्रह से निवृते ५, (उपरोक्त पंच अणुव्रत कहे) तीन गुण व्रत इस प्रकार—दिशि मर्याद अर्थात् दशों दिशा में मर्याद उपरान्त जाने का त्याग ६, उपभोग परिभोग की मर्याद ७, अनर्थ दण्ड परिहार ८, (च्यार सिखा याने चोटी समान व्रत इस प्रकार) सामायक एक मुहूर्त्त प्रमाण सावद्य जोगों के त्याग ९, देशावकासी काल की मर्याद करके इच्छा प्रमाण सावद्य जोगों को त्यागे १०, पोषह उपवास ११, अतिथिसं विभाग अर्थात् शुद्ध साधु, साध्वियों को निर्दूषण चउदे प्रकार का दान दे १२, इस प्रकार द्वादश व्रत धर्म पालता हुआ मर्णान्ते संलेखना संथारा दिक करे, व्रतों में कोई दोष लगा हो उसका प्रायश्चित लेके आराधक होना ऐसा व्रतमयी धर्म श्रावक श्राविकों ने सीखा है, इसी धर्म में उठे हैं, इसी धर्म में विचरते हुए जिन आज्ञा का आराधक होते हैं।

॥ सोरठा ॥

पञ्च महाव्रत रूप रे, मुनि नूं धर्म इहां कह्यो।
द्वादश व्रत सरूप रे, श्रावक धर्म जिन भाखियो ॥३४१॥
कोई कहे बारमूं व्रत रे, अतिथि ते साधां प्रते।
देवे सचित्त अचित्त रे, ते पिण श्रावक धर्म है ॥३४२॥
एम सूत्र विपरीत रे, अर्थ करै निज मन थकी।
तसु उत्तर सुवदीत रे, बुद्धिवन्त हिये विचारिये ॥३४३॥
अव्रत धर्यां व्रत होय रे, तो अव्रत में देवतां।

व्रत्ति धर्म किम जोय रे, अव्रत सेवायां थकां ॥३४४॥
ठाम २ सिद्धान्त रे, बारमूं व्रत श्रावक तणूं।
श्रमण निर्ग्रन्थ ने तंत रे, दान दे चउदे प्रकार नूं ॥३४५॥
प्रासूक दोष रहित रे, मुनी प्रते प्रतिलाभतो।
विचरे छै इण रीत रे, ते बारमूं व्रत सूत्रें कह्यो ॥३४६॥
वलि देवगुरु धर्म काज रे, हिन्सा करे षटकाय नी।
ते धर्म न कह्यो जिनराज रे, आगार धर्म विधि इहां ॥३४७॥

॥ बोल अड़सठवां ॥

ध्यान च्यार कह्या—आर्त्त ध्यान, रौद्र ध्यान, धर्म ध्यान, शुक्ल ध्यान। सा० सूत्र० उववाई समवशरण इधकार में।

॥ दोहा ॥

च्यार ध्यान जिनवर कह्या, आर्त्त ने रौद्र ध्यान।
धर्म ध्यान है तीसरो, चौथो शुक्ल ध्यान ॥३४८॥
समवशरण इधकार मे, तप वर्णन रे मांहि।
आर्त्त रौद्र नहिं ध्यावणो, सूत्र उववाई ताहि ॥३४९॥

॥ सूत्र पाठ ॥

से किं तं झाणे? झाणे चउव्विहे पन्नत्ते तं जहा— अट्टे झाणे रूद्दे झाणे, धम्मे झाणे, सुक्के झाणे।

उववाई।

॥ भावार्थ ॥

ध्यान कितने ? ध्यान च्यार प्रकार के प्ररूपे आर्त्तध्यान १, रौद्र ध्यान २, धर्म ध्यान ३, शुक्ल ध्यान ४।

॥ बोल उणसत्तरवां ॥

साधु असंयती ने ऊभो रहै, बैठ, सो, आव, जाव, कार्य कर, इम न कहै। सा० सू० दशवैकालिक अ० ७ गा० ४७ वीं।

॥ दोहा ॥

असंयती ने नहि कहै, ऊभो रहै वा बेस।
सयन आव अरु जाव नूं, कार्य कर इम न कहेस ॥३५०॥
सावद्यकारी वचन इम, न कहै प्रज्ञावन्त।
धीर वीर जे सयती, इम भाख्यो भगवन्त ॥३५१॥
दशवैकालिक आखियो, सप्तम् अध्ययन मझार।
गाथा सैंतालीसमी, बुद्धिवन्त करो विचार ॥३५२॥

॥ सूत्र पाठ ॥

तहेवा सजय धीरो, आसएहि करे हिवा।
सय चिट्ठ वयाहित्ति, नेव भासेज्ज पण्णवं ॥४७॥

दशवैकालिक अ० ७ वीं।

॥ भावार्थ ॥

वैसे ही साधु असयती को बैठो ऊठो आवो जावो अमुक कार्य्य करो ऐसी सावद्य भाषा प्रज्ञावत न कहै।

॥ दोहा ॥

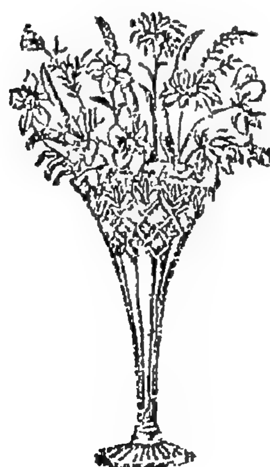
ए गुणोत्तर बोल इम, भाख्या आगम मांय ।
लोंकाजी संग्रह किया, तिण सूं लोंका हुगडी कहाय ।३५३।
प्रगटे पञ्चम् अर्क में, भिक्षु महा गुण धार ।
श्री जिन आज्ञा शिर धरी, प्रगट कियो उजियार ॥३५४॥
यथा तथ्य ओलखावियो, यह प्रभु तेरापन्थ ।
पाले महाव्रत पञ्च समिति, तीन गुप्त निर्ग्रन्थ ॥३५५॥
हिन्सा धर्म उथापियो, दयामयी धर्म दिपाय ।
कैहणी करणी एकसी, आगम न्याय बताय ॥३५६॥
श्री जिन धर्म अनादि रो, हुआ अनन्त अरिहन्त ।
जे जिम भाख्यो तिम कह्यो, निशंक सूं भिक्षु सन्त ॥३५७॥
तसु पट भारीमालजी, तीजे पाट ऋषिराय ।
जयगणि चौथे पाट वर, पंडित प्रसिद्ध कहाय ॥३५८॥
मघवा सम मघवा गणी, पंचम् पट अवलोय ।
पाट छठे माणक भला, सप्तम् डाल गणीश्वर जोय ॥३५९॥
वर्त्तमान शासन धणी, अष्टम पाटे जान ।
सुखद दाता सुरतरु समां, कालूगणी गुणखान ॥३६०॥
दिन २ वृद्धि ज्ञान नी, चारित्र गुण इधकाय ।
दिन २ सुख सम्पति वढे, सुगुरु तणें सुपसाय ॥३६१॥

दिन २ ऋद्धि सम्पजे, वीर्य लब्धि प्रगटाय।
दिन २ सद्बुद्धि बढे, सिद्धि नेड़ी थाय ॥३६२॥
समकित व्रत सुध पालियां, सीझे वाञ्छित काज।
दुःख दोहग दूरां टले, पामे अविचल राज ॥३६३॥
भिक्षु फुन जयाचार्य कृत, ग्रन्थ मांहि अधिकाय।
बारू न्याय बतावियो, प्रगट पणे सुखदाय ॥३६४॥
तसु अनुसारे में इहां, दोहा सोरठा मांहि।
न्याय कह्यो किञ्चित पणें, देख २ करि ताहि ॥३६५॥
सूल पाठ जे जिम कह्या, ते तिम लिखा इण स्थान
ओछा इधक आया हुवे, तो मिच्छामि दुक्कड जान ॥३६६॥
अक्षर लघु दीर्घादि नूं, नहि मुज ज्ञान विशेष।
लघु बुद्धि माफक रची, सोरठ दोहा कहेस ॥३६७॥
तिण सूं पण्डित जन जिके, बांचि न करस्यो हास्य।
गुण ग्राही गुणवन्त नूं, सदा अछूं मैं दास ॥३६८॥
श्रमणोपासक श्रमण नूं, श्री जिन मत में सीर।
समकित धर्म साधर्मी फुन, श्रावक नूं लघु वीर ॥३६९॥
श्री श्री कालू गणपति, प्रतपो जेम जिनन्द।
तसु अनुग्रह दिन २ इधक, गुलाबचन्द आनन्द ॥३७०॥
शत उन्नीस तियांसिये, विक्रम सम्वत् एह।
जोड़ रची हुण्डी तणी, जयपुर नगर विषेह ॥३७१॥

॥ कलश ॥

(चाल गीतक छन्द)

गुण रयन बयन जिनेश केरा, अति भलेरा जानियें। जे कह्या, जे जिम सत्य तथ्य, सुअथ्य पथ्य वखानिये ॥ धरि आसता प्रतीति रीति, विनीत केरी आनियें। सुगुरु वाचा सर्व सांचा अधिक आछा मानिये ॥ १ ॥ तज कपट लपट मिथ्यात नीं, निज आधिदीं सुध ल्याविये ॥ अव्रत घटावी व्रत बढावीं, आतम भावे आवियें । सुख सम्पदा निज घर घणी, गुणवंत नां गुण गाविये ॥ कहै गुलाबचन्द आनन्द अति ही, सुगुरु सेयां पाविये ॥ २ ॥



पूज्यजी महाराज श्री श्री १००८ श्री भीखणजी कृत

अथ जिन आज्ञा को चौढालियो

दोहा

कोई पाखण्डी जैन रा, साधु नाम धराय। ते पाप कहै जिन आज्ञा मझे, कूड़ा कुहेत लगाय ॥१॥ आहार पाणी साधु भोगवे, ते श्रीजिन आज्ञा सहित। तिण मे प्रमाद ने अव्रत कहै, त्यांरी श्रद्धा घणी विपरीत ॥ २ ॥ वले वस्त्र पात्र कामलो, इत्यादिक उपधि अनेक। ते जिन आज्ञा स्यूं भोगवे, तिणमे पाप कहै ते बिना विवेक ॥३॥ त्यां श्रीजिन धर्म नहीं ओलख्यो, जिन आज्ञा पिण ओलखी नांह। तिणस्यूं अनेक बोलां तणो, पाप कहै जिन आज्ञा रे मांह ॥ ४ ॥ कहै नदी उतरै तिण साधु ने, आज्ञा दे जिन आप। आ प्रत्यक्ष हिन्सा देखल्यो आज्ञा छे तो पिण पाप ॥ ५ ॥ इत्यादिक अनेक बोलां मझै, आज्ञा दे जिनराय। जठे हिन्सा होवे छे जीव री, तठे पाप लागे छे आय ॥६॥ इम कही ने जिन आज्ञा मझै, थापे पाप एकन्त। हिवे ओलखाऊं जिन आगन्यां ते सुणज्यो मतिवन्त ॥ ७ ॥

॥ ढाल १ ली ॥

(भवियण सेवो रे साध सयाणा—एदेशी)

जे जे कारज जिन आज्ञा सहित छै, ते उपयोग सहित करै कोय। ते कारज करतां घात होवै जिवांरी तिणरो साधु ने पाप न होय रे॥ भवियण जिन आगन्यां सुखकारी ॥ १ ॥ जीवां तणी घात हुई साधु थी, त्यांरो साधु ने पाप न लागै। जिन आगन्यां पिण लोपी न कहिजै, वले साधु रो व्रत न भांगै रे ॥ २ ॥ आ दूचरज वाली बात उघाड़ी, काचां रे हिये कैम समावै। ज्यां जिन आज्ञा ओलखी नहीं पूरी, ते जिन आज्ञा में पाप बतावै रे ॥ ३ ॥ नदी उतरै जव शुद्ध साधु ने आज्ञा दे श्रीजिन आप। जो जु नदी उतरतां पाप होवै तो, आज्ञा दे त्यांने पिण पाप रे ॥४॥ छद्मस्थ साधु नदी उतरै जब, त्यांने केवली आज्ञा दे सोय। पोतै पिण केवली नदी उतरै छै, पाप हुसी तो दोयां ने होय रे ॥ ५ ॥ जे नदी उतरै छै केवल ज्ञानी, त्यांने पाप न लागै लिगार। तो छद्मस्थ ने पाप किण विध लागै, आं दोयां रो एक आचार रे ॥ ६ ॥ छद्मस्थ ने केवली नदी उतरै जब. दोयां स्यूं होवै जीवां री घात। जो जीव मुआ त्यांरो पाप लागै तो, दोयां ने लागै

प्राणातिपात रे ॥ ७ ॥ केवल ज्ञानी नदी उतरै त्यांने पाप न लागे कोय। तो छद्मस्थ साधु नदी उतरै जब, त्यांने पिण पाप न होय रे ॥ ८ ॥ कोई कहै केवली ने तो पाप न लागै, नदी उतरतां जोग रहै शुद्ध। पिण छद्मस्थ ने पाप लागै नदी रो. आ प्रत्यक्ष बात विरुद्ध रे ॥ ९ ॥ जिण विध केवली नदी उतरै जिम, छद्मस्थ जो उतरै नाही। तो खामी छै तिण रे इर्या सुमति मे, पिण खामी नही कर्तव्य मांहि रे ॥ १० ॥ ते खामी पड़े ते अजाण पणो छै, इरिया वहि पड़ि-क्कमणो थाय। वले अधिको खामी जाणै इर्या समिति मे, तो प्रायश्चित ले उतारै पाप रे ॥ ११ ॥ साधु छद्मस्थ नदी उतरै ते कर्तव्य. सावज म जाणो कोय। जो सावज होवे तो संजम भागै, विराधक री पांत होय रे ॥ १२ ॥ आगे नदी उतरतां अनन्त साधां ने, उपनो छै केवल ज्ञान। त्यां नदी मांहि आउषो पूरो करी ने, पहोंता पञ्चमी गति प्रधान रे ॥ १३ ॥ केइ कहै साधु नदी उतरै त्यांरे. व्रत री हिन्सा रो छै आगार। तिण री पाप लागै पिण व्रत न भांगै, इम कहै ते मूढ़ गिंवार रे ॥ १४ ॥ जो साधु रे हिन्सा रो. आगार होवै तो. नदी उतरतां मोक्ष न जावे। हिन्सा री आगार ने पाप लागै जब, चवदमों गुणठाणो न

आवै रे ॥ १५ ॥ कोई कहै नदी उतरै जब साधु नै, लागै असंख्य हिन्सा परिहार। तिणरो प्रायश्चित लियां विन शुद्ध नही छै। इम कहै तिण रे हिय छै अन्धार रे ॥ १६ ॥ जो नदी उतस्यां रो प्रायश्चित विन लीधां ते साधु शुद्ध नही थावै। तो नदी मांहि साधु मरै ते अशुद्ध छै. ते मोक्ष मांहि क्युं कर जावै रे ॥ १७ ॥ साधु नदी उतस्यां मांहे दोष हुवे तो. जिन आगन्यां दे नाही। जिन आगन्यां दे तिहां पाप नही छै, थे सोच देखो मन मांहि रे ॥ १८ ॥ नदी उतरै त्यांरो ध्यान किसो छै, किसी लेश्या किसा परिणाम। जोग किसा अध्यवसाय किसा छै, भला भुण्डा पिछाणो ताम रे ॥ १९ ॥ ए पांचूं भला छै तो जिन आज्ञा छै, माठा मे जिन आज्ञा न कोय। पांचूं माठा स्यूं तो पाप लागै छै, पांचूं भला स्यूं पाप न होय रे ॥ २० ॥ छद्मस्थ ने केवली नदी उतरै जब, लारै छद्मस्थ केवली आगै। छद्मस्थ उतरै छै केवली री आज्ञा स्यूं, त्यांने पाप किसै लेखै लागै रे ॥ २१ ॥ जिन शासण च्यार तीर्थ मांहि. जिन आगन्यां छै मोटी। कोई जिन आगन्यां मांहि पाप बतावै. तिण री श्रद्धा छै खोटी रे ॥ २२ ॥ दवरो दाघो जाय पड़ै जल मांहि. पिण जल मांहि लागी लाय। तो किसी

ठौड़ वो करै ठंढाई, किसी ठौड़ साता होवै ताय रे ॥ २३ ॥ ज्युं जिण आज्ञा मांहि पाप होवे तो किण री आज्ञा मांहे धर्मो । किण री आज्ञा पाल्यां शुद्धगति जावे । किण री आज्ञास्यूं कटे कर्मो रे ॥ २४ ॥ छांटां आवे छे तिण मांहि साधु. मात रो परठे दिसां जावे । तिण रे छें पिण जिनजी री आज्ञा, तिणमे कुण पाप बतावे रे ॥ २५ ॥ साधु राते लघु बड़ी नीत दोनूं ही, परठण जावे अछांहि । वलि सिज्झाय करै राते थांनक बारै, जावे आवे अछायां मांहि रे ॥ २६ ॥ इत्यादिक साधु राते काम पड़े जब, अछायां आवै ने जावे । तिणने पिण छे जिनजी री आज्ञा, तिणमे कुण पाप बतावे रे ॥ २७ ॥ राते अछायां अपकाय पड़े छे, तिणरी घात साधु थी थाय । ओ पिण न्याय नदी जिम जाणो । तिण ने पाप किसी विध थाय रे ॥ २८ ॥ नदी मांहि बहती साधवी ने, साधु राखे हाथ संभावे । तिण मांहि पिण छे जिनजी री आज्ञा, तिणमें कुण पाप बतावे रे ॥ २९ ॥ इर्या समिति चालतां साधु स्यूं . कदा जीव तणी होवै घात । ते जीव मुआं रो पाप साधु ने, लागे नही अंशमात रे ॥ ३० ॥ जो इर्या समिति बिना साधु चाले, कदा जीव मरै नवि कोय । तो पिण साधु ने हिन्सा छऊं काय री लागे । कर्म तणो बंध होय रे

॥ ३१ ॥ जीव मुआ तिहां पाप न लागो, न मुआ तिहां लागो पापो । जिण आज्ञा संभालो जिण आज्ञा जोवो जिण आज्ञा मे पाप म थापो रे ॥ ३२ ॥ जव कोई कहे गृहस्थो हाल्यां चाल्यां विन, साधु ने किम वहिरावै । हालण चालण री तो नहीं जिन आज्ञा, चाल्यां विन तो वहरावणो नांवे रे ॥ ३३ ॥ वैठो होवे तो उठ वहरावे, उभो होवे तो वैठ वहरावै । वैठन उठण री तो नहीं जिन आज्ञा तो वारमों व्रत कैम निपजावे रे ॥ ३४ ॥ जो जिन आज्ञा वारै पाप होवै तो. हालण चालण रो पाप थावै । साधां ने वहरायां रो धर्म तै चौवड़े, कोई ईसड़ी चरचा ल्यावे रे ॥३५॥ कोई कहै चालण री तो जिन आज्ञा नाहीं, तोही चाल वहरायां री धर्म । जिण आगन्यां विन चाल्यो तिण ने, लागो नहीं पाप कर्म रे ॥ ३६ ॥ इण विध कुहेत लगावे अज्ञानी, धर्म कहै जिन आज्ञा वारो । हिवे जिन आगन्यां मांहि धर्म श्रद्धण रा. ये जाव हिया मांहे धारो रे ॥ ३७ ॥ मन वचन काया रा जोग तीनूं ही, सावद्य निर्वद्य जाण । निर्वद्य जोगां री श्रीजिन आज्ञा, तिण री करजो पिछाण रे ॥ ३८ ॥ जोग नाम व्यापार तणो छै, ते भला ने भूण्डा व्यापार । भला जोगां री जिन आज्ञा छै, माठा जोग जिन आगन्यां वार रे ॥ ३९ ॥ मन

वचन काया भला बतावो, गृहस्थ ने कहै जिनरायो। ते काया भणी किण विध प्रवर्तावे, तिण रो विवरो सुणो चित्त लायो रे॥ ४०॥ निर्वद्य कर्तव्य री छै श्री जिन आज्ञा, तिण कर्तव्य मे काया जोग जाण। तिण कर्तव्य री छै श्री जिन आज्ञा, तिण कर्तव्य मे करो आगीवाण रे॥ ४१॥ साधां ने आहार हाथां स्यूं बहरावे, उठ बैठ बहरावे कोय। ते बहरावण रो कर्तव्य निर्वद्य छै. तिण मे श्रीजिन आगन्यां होय रे॥ ४२॥ निर्वद्य कर्तव्य गृहस्थी करै छै, त्यांने आगन्यां दे जिनराय। ते कर्तव्य तो काया स्यूं करसी पिण न कहै थे चलावो काय रे॥ ४३॥ निर्वद्य कर्तव्य री आगन्यां दीधां पाप न लागे कोय। हालण चालण री आगन्यां दीधां, गृहस्थ स्यूं संभोग होय रे॥ ४४॥ बेसो सुवो उभो रहो ने जावो, गृहस्थ ने साधु न कहै आम। दशवैकालिक रे सातमें अध्ययने, सैंतालीसमो गाथा मे ताम रे॥ ४५॥ उभा रो कर्तव्य बैठा रो कर्तव्य. करणो कहै जिनराय। पिण बैठण उठण रो नहीं कहै गृहस्थ ने. थे विचार देखो मन मांय रे॥ ४६॥ निर्वद्य कर्तव्य री आगन्यां दीधां, निर्वद्य चालवो ते मांहि आयो। कर्तव्य छोड़ने चालण री आज्ञा देवे तो गृहस्थ रो संभोगी थायो रे॥ ४७॥ गृहस्थ रे द्वार

पड्यो कपड़ादिक, जब साधु सूं जाणी नावै माहि।
जब कोई गृहस्थ भेलो करै कपड़ादिक. साधु ने मारग
देवे ताहि रे ॥४८॥ साधां ने मारग देवै जावण आवण
रो, ते कर्तव्य निर्वद्य चोखो। जो कपड़ादिक रे काम,
भेलो करै तो सावद्य काम छै देखो रे ॥ ४९ ॥ तिण
स्यूं साधु कहै गृहस्थ ने. म्हाने जायगां द्यो जावां मांहि।
पिण कपड़ादिक भेलो करो सांवट ने, दूसड़ी न काढै
वाई रे ॥ ५० ॥ गृहस्थ रो उपधि करै आगो पाछो,
बैसवा सोयवादिक रे काम। ते पिण कर्तव्य निर्वद्य
जाणो. नहीं उपधि ऊपर परिणाम रे ॥ ५१ ॥ कोई
श्री जिन आगन्यां बारै अज्ञानी, धर्म कहै छै ताम।
ते भोला लोकां ने भ्रम में पाडै लेइ अनेक बोलां रो
नाम रे ॥ ५२ ॥ श्रावक री मांहो मांहि करै वियावच.
वले साता पूछै ने पूछावै। तिण मे श्री जिन आगां
मूल न दिसै, तिण मांहै धर्म बतावै रे ॥ ५३ ॥ श्रावक
री मांहो मांहै व्यावच कीधी, तिण दियो शरीर रो
साज। छव काया रो शस्त्र तीखो कीधो, तिण स्यूं
आज्ञा न दे जिनराज रे ॥ ५४ ॥ गृहस्थो री व्यावच
कीधी तिण रे, अठाइसमूं अणाचार। साता पूछ्यां रो
अणाचार सोलमूं, तिणमे धर्म नहीं छै लिगार रे ॥५५॥
शरीरादिक ने श्रावक पूंजे मातरादिक ने परठै पूंजे।

इत्यादिक कारज री नहीं जिन आज्ञा, धर्म कहे त्यांने संवलो न सूजें रे ॥ ५६ ॥ शरीर पूंजे मातरादिक परठे, ते तो शरीरादिक रो छै काज । जो धर्म तणो ए कार्य हुवे तो, आगन्यां देता जिनराज रे ॥ ५६ ॥ जो पूंजणो परठणो न करे जावक, तो काया थिर राखणी एक ठाम । पिण हस्तादिक ने बिन चलायां रहणी नावे ताम रे ॥ ५८ ॥ लघु बड़ी नीत तणी अबाधा, खमणी ठमणी न आवे ताम । पूंजे परठे तोइ सावद्य कर्तव्य छै, जिन आज्ञा रो नवि काम रे ॥ ५९ ॥ कदा थोड़ी बुद्धि त्यांने समझ न पड़े तो, राखणी जिण प्रतीत । आगन्यां मांहे पाप आज्ञा बारे धर्म, इसड़ी न करणी अनीत रे ॥ ६० ॥ जिन आगन्यां मांहे पाप कहे छे, ज्यांरी मत घणी छे माठी । जिन आगन्यां बारे धर्म कहे छै, त्यांरी आई अकल आड़ी पाटी रे ॥६१॥ जिन आगन्यां मांहे पाप कहतां, मूरख मूल न लाजे । वले धर्म कहे जिन आगन्यां बारे ते पण्डित पाखंडियां मे बाजे रे ॥६२॥ जिन आगन्यां मांहे पाप कहे छे, ते बुड़े छे कर कर ताणो । वले धर्म कहे जिन आगन्यां बारे, ते तो पूरा छे मूढ अजाणो रे ॥६३॥ समत अठारा ने वर्ष इकताले, जेठ सुद तीज ने शुक्रवार । जिन आगन्यां उलखावण काजे, जोड़ कीधी छे पर उपगार रे ॥६४॥

॥ दोहा ॥

जिण शासण मे आज्ञा वड़ी, ओलखे ते बुद्धिवान। ज्यां जिण आज्ञा नवि ओलखी, ते जीव छे विकल समान ॥ १ ॥ दोय करणी संसार मे, सावद्य निर्वद्य जाण। निर्वद्य मे जिण आगन्यां, तिण सूं पामै पद निर्वाण ॥ २ ॥ सावद्य करणी संसार नी, तिण मे जिण आगन्यां नही होय। कर्म बधे छे तेह थी, धर्म म जाणो कोय ॥३॥ किहां २ छे जिण आगन्यां, किहां २ आगन्यां नांह। बुद्धिवन्त करो विचारणां, निरणो करो घट मांह ॥ ४ ॥

॥ ढाल दूजी ॥

(हूं वलिहारी हो श्री पूज्यजी रे नाम री—पदेशी)

कोई करै पच्चखाण नौकारसी. तिण री आगन्यां दो जिन आप हो ॥ स्वामीजी ॥ कोई दान दे लाखां संसार मे, पूछ्यां आप रहो चुपचाप हो। स्वामीजी हूं वलिहारी हो, हूं वलिहारी हो श्री जिनजी री आगन्यां ॥ १ ॥ जिन आज्ञा सहित नौकारसी, कीधां कटे सात आठ कर्म हो ॥ स्वा० ॥ कोई दान दे लाखां ससार मे, ते तो आप रो भाख्यो नही धर्म हो ॥ स्वा० ॥ हूं ॥ २ ॥ अन्तर मुहूर्त त्यागे एक भूंगड़ो. तिण री आगन्यां दो

जिनराज हो ॥ स्वा० ॥ कोई जीव छुड़ावे लाखां दाम दे। तठे आप रहो मौन साझ हो ॥ स्वा० ॥ हूं ॥ ३ ॥ अन्तर मुहूर्त त्यागे एक भूंगड़ो, ते तो आप रो सिखायो छे धर्म हो ॥ स्वा० ॥ तिण स्यूं कर्म कटे तिण जीव रा, उत्कृष्टो पामें सुख परम हो ॥ स्वा० ॥ हूं ॥ ४ ॥ कोई जीव छुड़ावे लाखां दाम दे ते तो आप रो सिखायो नही धर्म हो ॥ स्वा० ॥ ओ तो उपकार संसार नो, तिण स्यूं कटता न जाण्यां आप कर्म हो ॥ स्वा० ॥ हूं ॥ ५ ॥ कोई साधां ने बहिरावे, एक तिणकलो, तिण री आज्ञा दो आप साख्यात हो ॥ स्वा० ॥ कोई श्रावक जिमावे कोडांगमे, तिण री आज्ञा न दो अंशमात हो ॥ स्वा० ॥ हूं ॥ ६ ॥ साधां ने बहिरावै एक तिणकलो, तिण रे बारमूं व्रत कह्यो आप हो ॥ स्वा० ॥ तिण स्यूं आज्ञा दीधी आप तेहने, वले कटता जाण्या तिण रा पाप हो ॥ स्वा० ॥ हूं ॥७॥ कोई श्रावक जीमावे कोड़ां न्यूंत ने, ते तो सावद्य कामो जाण्यो आप हो ॥ स्वा० ॥ उण छव काय शस्त्र पोषियो. तिण ने लागो छे एकान्त पाप हो ॥ स्वा० ॥ हूं ॥ ८ ॥ कोई करै व्यावच श्रावकां तणी, तठे पिण आप रे छे मौन हो ॥ स्वा० ॥ उण तीखो कीधो के शस्त्र छः काय नो, ते कर्तव्य जाण्यो आप जबून हो ॥ स्वा० ॥ हूं ॥ ९ ॥ कोई उघाड़े मुख

भणे छै सिद्धन्त ने, कोडांगमे गुणै छै नवकार हो ॥ स्वा० ॥ तिण में आप तणी आगन्यां नही, तिण मे धर्म न सरधूं लिगार हो ॥ स्वा० ॥ छूं ॥ १० ॥ उघाडे मुख गुणे छै नवकार ने तिण वाउकाय मार्या असख्य हो ॥ स्वा० ॥ तिण मे धर्म श्रद्धे ते भोला थका, त्यांरे लागा कुगुरां रा डंक हो ॥ स्वा० ॥ छूं ॥ ११ ॥ जैणां स्यूं गुणे एक नवकार ने तिण स्यूं कोड़ भवांरा कटै कर्म हो ॥ स्वा० ॥ तिण मे आप तणी छै आगन्यां, तिण रे निश्चे ही निर्जरा धर्म हो ॥ स्वा० ॥ छूं ॥॥१२॥ कोई साधु नाम धराय ने, प्रशंसे छै सावद्य दान हो ॥ स्वा० ॥ त्यां भेष भांड्यो भगवान रो, त्यांरे घट मांहे घोर अज्ञान हो ॥ स्वा० ॥ छूं ॥ १३ ॥ मौन कही छै साधु ने सावद्य दान मे, ते तो अन्तराय पड़ती जाण हो ॥ स्वा० ॥ तिण रो फल तो सूत्र मे बतावियो। तिण री बुद्धिवन्त करसी पिछाण हो ॥ स्वा० ॥ छूं ॥१४॥ प्रदेशी राजा कहै केशी स्वाम ने, म्हारे तो चढ़तो वैराग हो ॥ स्वा० ॥ म्हारे सात सहंस गांव खालसे, तिण रा करूं च्यार भाग हो ॥स्वा०॥ छूं ॥ १५ ॥ एक भाग राण्यां निमते करूं. दूजो भाग करूं खजान हो ॥ स्वा० ॥ तीजो भाग घोड़ा हाथी निमत करूं, चौथो भाग करूं देवा दान हो ॥ स्वा० ॥ छूं ॥ १६ ॥ च्यारूं

भाग सावद्य कामों जाणनें, मौन साझी रह्या केशी स्वाम हो ॥ स्वा० ॥ जो उवे किणहिक में धर्म जाणता, तो तिण री करता प्रशंसा ताम हो ॥स्वा०॥ छू ॥१७॥ सावद्य कर्तव्य च्यारू भाग राज रा, त्यांमे जीवां री हिंसा अत्यन्त हो ॥ स्वा० ॥ तिण स्यूं च्यारू बराबर जाण ने, मौन साझी रह्या मतिवन्त हो ॥ स्वा० ॥ छू ॥ १८ ॥ दान देवा मंडाई दानशाल मे, प्रदेशी नामे राजान हो ॥ स्वा० ॥ सात सहंस हुन्ता गांव खालसे, तिणरी चौथो पांती रो देवा दान हो ॥ स्वा० ॥ छू ॥ १९ ॥ च्यार भाग कर आप न्यारो हुवो, तिण जाण्यो संसार नो भाग हो ॥ स्वा० ॥ तिण तिथ न कीधी तिण राज री, रह्यो मुक्त स्यूं सन्मुख लाग हो ॥ स्वा० ॥ छू ॥ २० ॥ यो तो दान औरां ने भोलाय ने, तिण पूछी न दिसे बात हो ॥ स्वा० ॥ चवदे प्रकार रो दान साध ने, ते तो राख्यो निज पोता रे हाथ हो ॥ स्वा० ॥ छू ॥ २१ ॥ चौथो भाग दान तालके करी, नहीं राख्यो पोता रे हाथ हो ॥ स्वा० ॥ तीनूं भाग ज्यूं इणने पिण थापियो, छव काय जीवां री जाणी घात हो ॥ स्वा० ॥ छू ॥ २२ ॥ साढा सतरे सो गांव दान तालके, दिन २ प्रते मठेरा पांच गांव हो ॥ स्वा० ॥ त्यांरे हांसल रो धान रंधाय ने, दानशाला मंडाई ठाम

ठाम हो ॥ स्वा० ॥ हूं ॥२३॥ टालवा गांव जाणीज्यो खालसी, ते तो चौथे आरै रा का गांव हो ॥ स्वा० ॥ हांसल पिण आवतो जाणज्यो घणो, नेपै पण हुन्ती घणी अमाम हो ॥ स्वा० ॥ हूं० ॥ २४ ॥ हांसल आयो हुवै एक एक गांव रो, दश सहंस मण रे उन्मान हो ॥ स्वा० ॥ दिन २ प्रते मठेरा पांच गांव रो, ऊणो पचास हजार मण धान हो ॥ स्वा० ॥ हूं ॥ २५ ॥ इण लेखे एक वरस तणो. पूंणा दोय क्रोड़ मण धान हो ॥ स्वा० ॥ अधिको ओछो तो आप जाणो रह्या, अटकल स्यूं कह्यो उन्मान हो ॥ स्वा० ॥ हूं ॥ २६ ॥ पाणी पांच क्रोड़ मण रे आसरे, पूणा दोय क्रोड़ मण रांध्यां धान हो ॥स्वा०॥ अगन एक क्रोड़ मण जाणज्यो लूण छै लाखां मण रे उन्मान हो ॥ स्वा० ॥ हूं॥२७॥ नित्य धान हजारां मण रांधतां. अगन पाणी हजारां मण जाण हो ॥ स्वा० ॥ मणा वंध लूण पिण लागतो, वाउकाय रो वहोत घमसाण हो ॥ स्वा० ॥ हूं ॥ २८ ॥ फलारादिक अनेक पाणी मझै, वले वनस्पति पाणी मांय हो ॥ स्वा० धान हजारां मण रांधता, तिहां अनेक मुआ तसकाय हो ॥ स्वा० ॥ हूं ॥ २६ ॥ दिन २ प्रते मारे छव काय ने. वले अनन्त जीवां री करै घात हो ॥ स्वा० ॥ त्यांरी हिंसा रो पाप गीणो

नही, त्यांरे हिन्सा धर्म री मिथ्यात हो ॥ स्वा० ॥ छं ॥ ३० ॥ एहवा दुष्ट हिन्सा धर्मी जीवड़ा, केई जाणै अज्ञानी साध हो ॥ स्वा० ॥ तिण रे घट मांहि घोर अन्धार छै, ते तो नियमा निश्चे छै असाध हो ॥ स्वा० ॥ छं ॥ ३१ ॥ केई जीव खुवायां मे पुन्य कहै, केई मिश्र कहै छै मूढ हो ॥ स्वा० ॥ ए दोनूं बूड़ा छै बापड़ा, कर २ मिथ्यात री रूढ़ हो ॥ स्वा० ॥ छं ॥ ३२ ॥ जीव खाधां खुवायां भलो जाणियां, तीनूं ही करणा छै पाप हो ॥ स्वा० ॥ आ श्रद्धा प्ररूपी छै आप री, ते पिण देवे छै अज्ञानी उत्थाप हो ॥ स्वा० ॥ छं ॥३३॥ केइ जीव खुवावे छै तेहनां, चोखा कहै अज्ञानी परिणाम हो ॥ स्वा० ॥ कहै धर्म मिश्र हुवे नही, जीव खुवायां बिना ताम हो ॥ स्वा० ॥ छं ॥३४॥ जीव खावण रा परिणाम छै अति बुरा, खुवावण रा पिण खोटा परिणाम हो ॥ स्वा० ॥ यूंही भोला ने न्हाखे भ्रम में. ले ले परिणामा रो नाम हो ॥ स्वा० ॥ छं ॥ ३५ ॥ केई कहै जीवां ने मार्यां बिना, धर्म न हुवे ताम हो ॥ स्वा० ॥ जीव मार्यां रो पाप लागे नही, चोखा चाहिजे निज परिणाम हो ॥ स्वा० ॥ छं ॥३६॥ केई कहै जीवां ने मार्यां बिना, मिश्र न हुवे तास हो ॥ स्वा० ॥ ते जीव मारण री सांनी करे, ले ले परि-

थामां रो नाम हो ॥ स्वा० ॥ ह्रूं ॥ ३७ ॥ केई धर्म ने मिश्र करवा भणी, छव काय रो करै घमसाण हो ॥ स्वा० ॥ तिण रा परिणाम चोखा कह्यां थकां, पर जीवां रा छूटै प्राण हो ॥ स्वा० ॥ ह्रूं ॥ ३८ ॥ जिण ओलख लीधी आप री आगन्यां, ओलख लीधी आप री मौन हो ॥ स्वा० ॥ तिण आपने पिण ओलख लिया, तिण रे टलसी माठी २ जून हो ॥ स्वा० ॥ हूं ॥ ३९ ॥ तिण आज्ञा नवि ओलखी आप री ओलखी नवि आप री मौन हो ॥ स्वा० ॥ तिण आपने पिण ओलख्या नवि, तिण रे बन्धसी माठी माठी जून हो ॥ स्वा० ॥ ह्रूं ॥ ४० ॥ केई जिण आज्ञा बारै धर्म कहै, जिण आज्ञा मांहे कहै पाप हो ॥ स्वा० ॥ ते दोनूं विध बूड़ा छै बापड़ा, कूड़ो कर कर अज्ञानी विलाप हो ॥ स्वा० ॥ ह्रूं ॥ ४१ ॥ आप रो धर्म आप री आगन्यां मझे, नहीं आप री आज्ञा बार हो ॥ स्वा० ॥ जिण धर्म जिण आगन्यां बारै कहै, ते तो पूरा छै मूढ़ गिंवार हो ॥ स्वा० ॥ हूं ॥ ४२ ॥ आप अवसर देखने बोलिया आप अवसर देखो साझी मौन हो ॥ स्वा० ॥ जिहां आप तणी आगन्यां नवि, ते करणी छै जावक जबून हो ॥ स्वा० ॥ ह्रूं ॥ ४३ ॥ भेष धार्यां सावद्य दान थांपियो, तिण दान स्यूं दया उत्थप जाय हो ॥ स्वा० ॥

वले दया कहै छव काय बचावियां. तिण स्यूं दान उत्पन गयो ताय हो ॥ स्वा० ॥ छ ॥ ४४ ॥ छव काय जीवां ने जीवा मारने, कोई दान देवे ससार रे मांय हो ॥ स्वा० ॥ तिण रे घट मे छव काय जीवां तणी, दया रही नही ताय हो ॥ स्वा० ॥ छ ॥ ४५ ॥ कोई दान देवे तिण ने बरज ने जीव बचावे छव काय हो ॥ स्वा० ॥ ते जीव बचायां दया उत्पपे, तिण स्यूं न्यारा रह्यां सुख थाय हो ॥ स्वा० ॥ छ ॥ ४६ ॥ छव काय जीवां ने मारी दान दे, तिण दान स्यूं मुक्त न जाय हो ॥ स्वा० ॥ वले फिर बचावे छव काय ने तिण स्यूं कर्म कटे नही ताय हो ॥ स्वा० ॥ छ ॥ ४७॥ सावद्य दान दियां स्यूं दया उत्पपे, सावद्य दया स्यूं उत्पपे अभय दान हो ॥ स्वा० ॥ सावद्य दान दया छै ससार ना, यांने ओलखे ते बुद्धिवान हो ॥ स्वा० ॥ छ ॥ ४८ ॥ त्रिविधे २ छव काय हणवो नही आ दया कही जिन-राय हो ॥ स्वा० ॥ दान देणो सुपात्र ने कह्यो, तिण स्यूं मुक्त सुखे सुखे जाय हो ॥ स्वा० ॥ छ ॥ ४६ ॥ दान दया दोनूं मारग मोक्ष रा, ते तो आप री आज्ञा सहित हो ॥ स्वा० ॥ याने रूड़ी रीत आराधिया, ते गया जमारो जीत हो ॥ स्वा० ॥ छ ॥५०॥ आप तणी आज्ञा ओलखायवा, जोड़ कीधी नवां शहर मझार-हो

॥ स्वा० ॥ समत अठारे ने वर्ष चमालीसे महा शुद सातम ब्रहस्पतिवार हो ॥ स्वामी जी हूं वलिहारी हो, हूं वलिहारी हो श्री जिनजी री आगन्यां ॥ ५१ ॥

॥ दोहा ॥

श्री जिन धर्म जिन आज्ञा मझे, आज्ञा वारै नही जिन धर्म। तिण स्यूं पाप कर्म लागे नही, वले कटै आगला कर्म ॥ १ ॥ केइ मूढ़ मिथ्याती इम कहै, जिन आज्ञा वारै जिन धर्म। जिन आज्ञा मांहि कहै पाप छै, ते भूला अज्ञानी भ्रम ॥ २ ॥ जिन आज्ञा वारै धर्म कहै, जिन आज्ञा मांहि कहै पाप। ते किण ही सूत्र मे छै नही युंही करै मूढ़ विलाप ॥ ३ ॥ कहै धर्म तिहां देवां अगन्यां, पाप छै तिहां करां निषेध। मिश्र ठिकाणे मौन छै, एह धर्म नो भेद ॥ ४ ॥ इसड़ी करे छै परूपणा, ते करे मिश्र री थाप। ते बुड़ा खोटो मत वांधने. श्री जिन वचन उथाप ॥ ५ ॥ केइ मिश्र तो माने नवि, माने हिंसा मे एकान्त धर्म। ते पण वुड़े छे वापड़ा, भारी करै छे कर्म ॥ ६ ॥ जिन धर्म तो जिण आज्ञा मझे, आज्ञा वारै धर्म नही लिगार। तिण मे साख सूत्र री दे कहूं. ते सुणज्यो विस्तार ॥ ७ ॥

॥ ढाल तीजी ॥

[जीव मारे ते धर्म आछो नवि पदेशी]

आज्ञा में धर्म छे जिनराज रो, आज्ञा बारे कहैं ते मूढ रे। विवेक विकल शुद्ध बिना, ते बुडे छे कर कर रूढ़ रे॥ श्रीजिन धर्म जिन आगन्यां तिहां ॥१॥ ज्ञान दर्शन चारित्र ने तप ए तो मोक्ष रा मारग च्यार रे। यां च्यारां मे जिनजी री आगान्या, यां बिना नही धर्म लिगार रे॥ श्री॥ २॥ यां च्यारां मांहला एक एक री, आज्ञा मांगे जिनेश्वर पास रे। तिण ने देवे जिनेश्वर आगन्यां. जब उ पामै मन मे हुलास रे ॥ श्री ॥ ३ ॥ यां च्यारां बिना मांगे कोई आगन्यां, तो जिनेश्वर साझे मौन रे। तो जिन आगन्यां बिना करणी करे, ते करणी छे जावक जबुन रे ॥ श्री ॥४॥ बीसां भेदा रुके कर्म आवतां, बारे भेदे कटै बन्धिया कर्म रे। त्याने देवे जिनेश्वर आगन्यां, ओहिज जिण भाष्यो धर्म रे ॥ श्री ॥ ५ ॥ कर्म रुके तिण करणी में आगन्यां, कर्म कटै तिण करणी मे जाण रे। यां दोयां करणी बिना नवि आगन्यां, ते सगली सावद्य पिछाण रे ॥ श्री ॥ ६ ॥ देव अरिहन्त ने गुरु साध छे, केवली भाष्यो ते धर्म रे। और धर्म मे नही जिन आगन्यां,

तिण सूं लागे छै पाप कर्म रे ॥ श्री ॥ ७ ॥ जिन भाष्या मे जिनजी री आगन्यां ओरां री भाष्या मे ओर जाण रे, तिण स्यूं जीव शुद्ध गत जावे नहीं वले पाप लागे छै आण रे ॥ श्री ॥ ८ ॥ केवली भाष्यो धर्म मंगलीक छै, ओहिज उत्तम जाण रे । शरणो पिण ल्यो इण धर्म रो. तिण में श्री जिन आज्ञा प्रमाण रे ॥ श्री ॥ ९ ॥ ठाम २ सूत्र मांहे देखल्यो. केवली भाष्यो ते धर्म रे । मीन साझे तिहां धर्म को नहीं, मीन साझे तिहां पाप कर्म रे ॥ श्री ॥ १० ॥ मीन साझणियो धर्म माठो घणो भेष धार्यां पहृप्यो जाण रे । खांच २ बुड़े छै वापड़ा, ते सूत्र रा मूढ अजाण रे ॥ श्री ॥ ११ ॥ धर्म ने शुक्ल दोनूं ध्यान मे, जिण आज्ञा दीधी वारूं वार रे । आर्त रौद्र ध्यानं माठा विहुं, याने ध्यावे ते आज्ञा वाररे ॥ श्री ॥ १२ ॥ तेजु पद्म शुक्ल लेश्या भली, त्यांमे जिन आगन्यां ने निर्जरा धर्म रे । तीन माठी लेश्या मे आज्ञा नहीं, तिण स्यूं बन्धे छै पाप कर्म रे ॥ श्री ॥१३॥ च्यार मङ्गल च्यार उत्तम कह्या. च्यार शरणा कह्या जिनराय रे । ए सगला छै जिन आगन्यां मझे. आज्ञा विन आच्छी वस्तु न काय रे ॥ श्री ॥ १४ ॥ भला परिणाम मे जिन आगन्यां, माठा परिणाम आज्ञा वार रे । भला परिणामां निर्जरा निपजै, माठा परि-

णामां पाप द्वार रे ॥ श्री ॥ १५ ॥ भला अध्यवसाय में जिन आगन्यां. आज्ञा बारै माठा अध्यवसाय रे। भला अध्यवसायां सूं निर्जरा हुवै, माठा अध्यवसायां सूं पाप बन्धाय रे ॥ श्री ॥ १६ ॥ ध्यान लेश्या परिणाम अध्यवसाय छै, च्यारूं भला में आज्ञा जाण रे। च्यारूं माठा में जिन आज्ञा नही, यांरा गुणां री करज्यो पिछाण रे ॥ श्री ॥ १७ ॥ सर्व मूल गुण ने उत्तर गुणे, देश मूल उत्तर गुण दोय रे। दोयां गुण में जिनजी री आगन्यां, आगन्यां बारै गुण नवि कोय रे ॥ श्री ॥ १८ ॥ अर्थ परम अर्थ जिन धर्म छै, उववाई सूयगडांग मांय रे। तिण मे तो जिनजी री आगन्यां, शेष अनर्थ मे आज्ञा नवि ताय रे ॥ श्री ॥ १९ ॥ सर्व व्रत धर्म साधां तणो, देश व्रत श्रावक रो धर्म रे। यां दोयां धर्म मे जिनजी री आगन्यां, आज्ञा बारै तो बन्धसी कर्म रे ॥ श्री ॥ २० ॥ उजलो धर्म छै जिनराज रो, ते तो श्री जिन आज्ञा सहित रे। मुगत जावा अजोग अशुद्ध कह्यो, ते तो जिन आज्ञा स्यूं विपरीत रे ॥ श्री ॥२१॥ आज्ञा लोप छांदे चालै आप रे, ते ज्ञानादिक धन सूं खाली थाय रे। आचारांग अध्ययन दूसरे, जोवो छट्ठा उद्देशा मांय रे ॥ श्री ॥ २२ ॥ आज्ञा सूं रुकी ते धर्म मांहरो, एहवो चिन्तवे साधु मन मांय रे। आज्ञा

विन करवो जिहांहिं रह्यो, रूडो बोलवो पिण नवि थाय रे ॥ श्री ॥ २३ ॥ आज्ञा मांहलो ते धर्म मांहरो, और सर्व पारको थाय रे, आचारांग छठा अध्ययन में, पहले उद्देशे जोय पिछाण रे ।।श्री॥२४॥ आगन्यां मांहे संजम ने तप, आगन्यां मे दोनूं परिणाम रे । आज्ञा रहित धर्म आछो नवि, जिण कह्यो पराल समान रे ॥ श्री ॥ २५ ॥ आस्रव निर्जरा रो ग्रहण जूदो कह्यो, ते जाणसी जिन आज्ञा रो जाण रे. आचारांग चौथा अध्ययन मे, पहले उद्देशे जोय पिछाण रे ॥ श्री ॥२६॥ निर्वद्य धर्म चतुर विध संघ के. ते आज्ञा सहित बछे अनुसन्तान रे । आचारांग चौथा अध्ययन मे. तीजे उद्देशे कह्यो भगवान रे ॥ श्री ॥ २७ ॥ तीर्थंकर धर्म कीधो तिको, मोक्ष रो मारग शुद्ध वेस रे । और मोक्ष रो मारग को नही पांच में आचारांग तीजे उद्देशे रे ॥ श्री ॥२८॥ जिण आज्ञा बारली करणी तणी. उद्यम करे अज्ञानी कोय रे । आज्ञा मांहली करणी रो आलस करे गुरु कहे शिष्य तोने दोय म होय रे ॥ श्री ॥२९॥ कुमारग तणी करणी करे, सुमारग रो आलस होय रे । ए दोनूंही करणी दुरगत तणी. आचारांग पांचमें अध्ययन जोय रे ॥श्री॥३०॥ जिण मारग रा अजाणने. जिण उपदेश नो लाभ न होय रे । आचारांग रा चौथा अध्ययन में,

तीजा उद्देशे मे जोय रे ॥श्री॥३१॥ ज्यां दान सुपात्र ने दियो, तिणमें श्री जिन आज्ञा जाण रे। कुपात्र दान मे आगन्यां नहीं, तिण री बुद्धवंत करज्यो पिछाण रे ॥ श्री ॥ ३२ ॥ साध बिना अनेरा सर्व ने. दान नहीं दे माठो जाण रे। दीधां भ्रमण करे ससार मे. तिण स्यूं साध किया पच्चखाण रे ॥ श्री ॥ ३३ ॥ सूयगडांग नवमा अध्ययन में, बीसमी गाथा जोय रे॥ वले दीधां भागे व्रत साध रो, जिन आगन्यां पिण नवि कोय रे ॥ श्री ॥ ३४ ॥ पात्र कुपात्र दोनूं ने दियां. विकल कहै दीया मे धर्म रे। धर्म हुसी सुपात्र दान मे, कुपात्र ने दियां पाप कर्म रे ॥ श्री ॥ ३५ ॥ खेत्र कुखेत्र श्री जिन वर कह्यो. चौथे ठाणे ठाणाअंग मांय रे। सुखेत्र में दियां जिन आगन्यां, कुखेत्र मे आज्ञा नवि काय रे ॥ श्री ॥ ३६ ॥ आहार पाणी ने वले उपधादिक, साधु देवे गृहस्थ ने कोय रे। तिण ने चौमासी दण्ड निशीथ मे, पनरमे उद्देशे जोय रे ॥ श्री ॥ ३७ ॥ गृहस्थ ने दान दे तिण साधु ने, प्रायश्चित आवे कीधो अधर्म रे। तो तेहिज दान गृहस्थ देवे. त्यांने किण विध होसी धर्म रे ॥ श्री ॥ ३८ ॥ असंजम छोड़ संजम आदर्यो। कुशील छोड़ हुवो ब्रह्मचार रे। अणाकल्पणीक अकार्य परहरे, कल्प आचार कियो अङ्गीकार रे ॥ श्री ॥३९॥

अज्ञान छोड़ने ज्ञान आदस्यो, माठी क्रिया छोड़ी माठी जान रे। भली क्रिया ने साधु आदरी, जिण आज्ञा स्यूं चतुर सुजान रे॥ श्री ॥ ४० ॥ मिथ्यात छोड़ सम्यक्त आदस्यो, अबोध छोड़ आदस्यो बोध रे। उन्मार्ग छोड़ सुन्मार्ग लियो, तिण स्यूं होसी आतमा शुद्ध रे ॥ श्री ॥ ४१ ॥ आठ छोड़े ते जिन उपदेश स्यूं. पाप कर्म तणो बंध जाण रे। जिण आज्ञा स्यूं आठ आदस्यां तिण स्यूं पामै पद निर्वाण रे ॥ श्री ॥ ४२ ॥ ठाम २ सूत्र मे देखल्यो, जिण धर्म जिण आज्ञा मे जाण रे। ते मूढ़ मिथ्याती जाणे नहीं, युंही बुड़े छै कर कर ताण रे ॥ ४३ ॥ छूं कहि कहि ने कितरो कहूं, आगन्यां बारै नहीं धर्म लूल रे। आगन्यां बारै धर्म कहै तेहना. श्रद्धा कण विना जाणो धूल रे ॥श्री॥४४॥

॥ दोहा ॥

भेषधारी बिगरायल जैन रा, ते कूड़ कपट री खान। ते आगन्यां बारै धर्म कहै, त्यांरे घट मे घोर अज्ञान ॥ १ ॥ त्यांने ठीक नहीं जिन धर्म री, जिण आज्ञा री पिण नवि ठीक। त्यांने परिवार विवेक विकल मिल्या. त्यांमे बाजे पूज मेंढीक ॥ २ ॥ ते बड़ा ऊंट जुं आगे चले. लारै चले जेम कतार

मोहला बूड़े छै बापड़ा, बड़ा बूढ़ां री लार ॥ ३ ॥ हिवे वली विशेष जिन आगन्यां, ओलखजो बुद्धिवान । तिणरा भाव भेद प्रकट करूं, ते सुणज्यो सुरत दे कान ॥ ४ ॥

॥ ढाल चौथी ॥

(जंबु कुंवर कहै परभव सुणो—एदेशी)

साधु सामायक व्रत उच्चरै, तिण मे सावद्य रा पच्चखाण ॥ भविक जन हो ॥ तेहिज सावद्य गृहस्थ करै, तिण मे श्री जिन धर्म म जाण ॥ भविक जन हो ॥ श्री जिन धर्म जिन आगन्यां तिहां ॥ १ ॥ श्रावक सामायक पोसो करै तिण में पिण सावद्य रा पच्चखाण ॥ भ० ॥ तेहिज सावद्य कामो कुटो करै, तिण में पिण जिन धर्म म जाण ॥ भ० ॥ २ ॥ श्री ॥ धर्म कहै साधु जिन आगन्यां मझे, आज्ञा बारै धर्म कहै ते मूढ़ ॥ भ० ॥ तिण श्री जिन धर्म न ओलख्यो, तिण झाली मिथ्यात री रूढ़ ॥ भ० ॥ ३ ॥ श्री ॥ जिन धर्म री जिन आगन्यां देवे, जिण धर्म सीखावे जिनराय ॥ भ० ॥ आज्ञा बारै धर्म किण सीखावियो, तिण री आज्ञा देवै कुण ताय ॥ भ० ॥ ४ ॥ श्री ॥ केई आगन्यां बारै मिश्र कहै, केई धर्म पिण कहै आज्ञा बार ॥ भ० ॥ तिण ने पूछीजे ओ धर्म किण कह्यो, तिण रो नाम तूं चौड़े बताय ॥ भ० ॥ ५ ॥ श्री ॥ इण मिश्र ने धर्म रो कुण धणी, तिण

रो आज्ञा कुण दे जोड्यां हाथ ॥ भ० ॥ देवगुरु मीन साझ न्यारा हुवे, इण री उत्पत रो कुण नाथ ॥ भ० ॥ ६ ॥ श्री ॥ कोई वेश्या रा पुत्र ने पूछा करै, थारी मा कुण ने कुण तात ॥ भ० ॥ जब उ नांव बतावै किण बापरो, ज्यूं आ मिश्र वालां री छै बात ॥ भ० ॥ ७ ॥ श्री ॥ वेश्या रा अङ्ग जात नो उपनो, तिण रो कुण हुवे उदेरि ने बाप ॥ भ० ॥ ज्यूं आज्ञा बारै धर्म ने मिश्र री, जिण धर्मी करसी कुण थाप ॥ भ० ॥ ८ ॥ श्री ॥ वेश्या रे अङ्ग जात नो उपनो, उण लखणो हुवे उदेरि ने बाप ॥ भ० ॥ ज्यूं जिन आगन्यां बारै धर्म ने मिश्र री, कोई करै छै पाषण्डी थाप ॥ भ० ॥९॥ श्री ॥ कोई कहै म्हरी माता छै वांझड़ी, तिण रो हूं छूं आतम जात ॥ भ० ॥ ज्यूं मुरख कहै जिन आगन्यां विना, करणी कीधां धर्म साख्यात ॥ भ० ॥१०॥ श्री ॥ बाप विण बेटो निश्चे हुवे नहीं, ज्यूं जिन आज्ञा विना धर्म न होय ॥ भ० ॥ जिन आज्ञा होसी तो जिन धर्म छै, आज्ञा विना धर्म न होय ॥ भ० ॥ ११ ॥ श्री ॥ मा विन वेटा रो जन्म हुवे नहीं, जन्मे ते वांझ न होय ॥ भ० ॥ ज्यूं जिन आज्ञा विना धर्म हुवे नहीं, जिन आज्ञा तिहां पाप न कोय ॥ भ० ॥ १२ ॥ श्री ॥ गधु पंखी ने चोर दोनूं भणी, गमती लागे अन्धारी

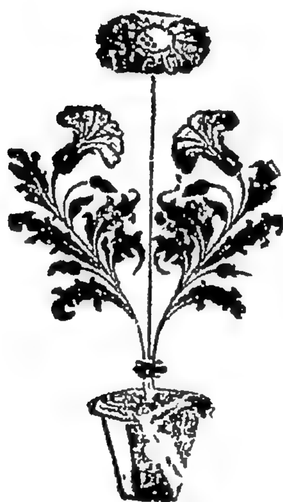
रात ॥ भ० ॥ ज्यूं भारी कर्मा जीव तेह ने, जिन आज्ञा बाहरलो धर्म सुहात ॥ भ० ॥ १३ ॥ श्री ॥ काग निमोली मे रति करै, भण्डसूरा ने भीष्टो भावे दाय ॥ भ० ॥ ज्यूं काग भण्डसूरा जेहवा मानवी, रिझे आज्ञा बाहरली करणी मांय ॥ भ० ॥ १४ ॥ श्री ॥ चोर परदारा सेवण कुशीलिया, ते तो सेरी जोवे दिन रात ॥ भ० ॥ ज्यूं आज्ञा बाहर धर्म श्रद्धायवा, ऊन्धी कर कर अज्ञानी बात ॥ भ० ॥ १५ ॥ श्री ॥ गुरुवादिक री आज्ञा मांगे नहीं, ते तो अपछन्दा अव-नीत ॥ भ० ॥ ज्यूं कोई जिन आगन्यां बिन करणी करै, ते पिण करणी छे विपरीत ॥ भ० ॥ १६ ॥ श्री ॥ दुष्ट जीव मंजारी ने चितरा, छल सूं करे पर जीवां री घात ॥ भ० ॥ एहवा दुष्ट मिश्र श्रद्धा रा धणी, छल स्यूं घाले विकलां रे मिथ्यात ॥ भ० ॥ १७ ॥ श्री ॥ बिगरायल हुवां न्यात बारै करै, ते बिगरायल फिरै न्यात बाहर ॥ भ० ॥ तेहवो धर्म जिन आगन्यां बारलो, तिण में करे मत जाणो भलो वार ॥ भ० ॥ १८ ॥ श्री ॥ न्यात बारै ते न्यात मांहें नहीं, तिण ने नवि वैसाणे एक पांत ॥ भ० ॥ ज्यूं जिन आज्ञा बिना धर्म अजोग छे, कीधां पूरीजे नही मन खांत ॥ भ० ॥ १९ ॥ श्री ॥ जो आज्ञा बिन करणी में धर्म छे, तो

जिन आज्ञा रो काम न कोय ॥ भ० ॥ तो मन मानी करणी करसी तेहने, सगली करणी कियां धर्म होय ॥ भ० ॥२०॥ श्री ॥ जिण आज्ञा बाहरली करणी कियां, पाप नहीं लागे ने धर्म थाय ॥ भ० ॥ तो किण करणी सूं पाप निपजे, जिण करणी रो तूं नांव बताय ॥ भ० ॥ २१ ॥ श्री ॥ ज्ञान दर्शन चारित्र तप, ए च्यारूं ही छे आज्ञा मांय ॥ भ० ॥ यां च्यारां माहि तो धर्म जिण कह्यो, यां विना और नांव बताय ॥ भ० ॥ २२ ॥ श्री ॥ इम पूछ्यां रो जाब न उपजे, झूठ बोलै बणाय बणाय ॥ भ० ॥ विकलां ने विगोवण पापिया, जिन आज्ञा बारे धर्म श्रद्धाय ॥ भ० ॥ २३ ॥ श्री ॥ आगन्यां बारे धर्म कहे, ते पिण छे आगन्यां बार ॥ भ० ॥ ऊंधी सरधा सूं बूडे छे बापड़ा, ते भव २ में होसी खवार ॥ भ० ॥ २४ ॥ श्री ॥ जिन आगन्यां बारे धर्म कहे, ते विगरायल जैन रा जाण ॥ भ० ॥ त्यांरी अभिन्तर फूटी छे मांहली, ते पत्थारे उगो कहे भाण ॥ भ० ॥ २५ ॥ श्री ॥ श्री जिन आगन्यां विन करणी करे. ते तो दुरगत रा आगीवाण ॥ भ० ॥ जिन आज्ञा सहित करणी करे, तिण स्यूं पामे पद निरवाण ॥ भ० ॥ २६ ॥ श्री ॥ आज्ञा बारे धर्म कहे तेहनी, जोड कोधी छे खेरवा मझार ॥ भ० ॥ समत अठारे चालो-

समें, आसोज विद पांचम थावर वार ॥ भ० ॥ २७ ॥

॥ श्री जिन धर्म जिन आगन्यां तिहां ॥

॥ इति जिन आज्ञा को चौढालियो समाप्त ॥



॥ ढाल ॥

गोरी रे आँगण ढोला बाग लगावियोजी राज फुल्डा रे मिस आवो हो कवर थाई रा हो ढोला फूलां केरो गजरो गुंथाय (परदेशी)

वसु पाटोधर साहश जिनवर जिम इण भरत में हो स्वाम। कालू गणीश्वर सोहै हो मन मोहत स्वामी सुर नर भविजन सहु तणा ॥ गणपति गुणसागर अहो २ नाथ जमा वणो। गणिवर तोरी सांवली सौम्य सूरत हद छाजति हो स्वाम। जेम चकोरा चन्दा हो तिम भवि तुझ जोवै हर्षित होवै अति वणा ॥ ग० ॥ १ ॥ तय तिंशे हो स्वामी छोगां कुखे अवतर्या हो स्वाम। माता भगिनी साथे हो बीदासर मांही चमालीसे व्रत धर्या ॥ ग० ॥ छांसट्ठे हो पाट विराज्या लाडनूं नयर मे हो स्वाम। महियल जश बहु छायो हो जगताधिप स्वामी। गुण मणि रयणे अति भर्या ॥ ग० ॥ २ ॥ वच बरसे हो स्वामी, सघन झड़ी जलधार ज्यूं हो स्वाम। सुण २ भवी मन हर्षे हो चित्त तर्पे पाखण्डी तस्कर थी गिया मग तणा ॥ ग० ॥ अष्टापद पेखी कठीरव जिम विहतो हो स्वाम। पेचक जिम रवि देखी हो तिम गणि तुझ निरखी पाखंडी लाजे घणा ॥ ग० ॥ ३ ॥ शब्द बोध

कला गुण चातुरता अति अपारी हो स्वाम। काव्य कोष निर्युक्ति हो, वर युक्ति जमाओ जिनवर वचन दीपावता ॥ ग० ॥ लोलुप नर नो मन धन मांहि जिम वस रह्यो हो स्वाम। कुञ्जर जिम वन समरे हो, तिम गणिवर तुझ ने भविजन अहो निशि ध्यावता ॥ ग० ॥४॥ चिन्ता चूरण वर चिन्तामणि सुर तरु समो हो स्वाम। मन वांछित वर आपे हो, काई काम कुम्भ सम काज समारण गुण नीलो ॥ ग० ॥ चातुरगढ़ मांहि रङ्ग रेला चिहूं तीर्थ ना हो स्वाम। गौ मुनि रस गौ अब्दे हो प्रौष्ट शुक्ल पूर्णिमा दिन गणि पट उत्सव भलो ॥ ग० ॥५॥

॥ ढाल ॥

(एक दिवस लङ्कापति क्रीड़ा नी ऊपनी रती०—एदेशी)

पचम अर्के मनहरु प्रगटे भिक्षु दिनकरु। अघहरु, साद्दश ज्यूं जिनराजिया ए ॥१॥ दान दयादिक शोधने, भविजन तन मन बोधने। बोधने, साठे अणसण साधिया ए ॥ २ ॥ तास परस्पर सोहता, काल् जन मन मोहता। मोहता, छोगांनन्दन गत्त ने ए ॥ ३ ॥ दीन दयालु तूं खरा, पितु सम प्रगव्या इण धरा। हितकरा, वछित पूरण भक्त ने ए ॥ ४ ॥ वाक्य सुधा बरसावन्ता, भवी हृदय हरषावन्ता। हरषावन्ता, गन तन क्यारी स्वामनी ए ॥ ५ ॥ कोड़ दिवाली राज ए, करिये गणि

महाराज ए। आज हे, बलिहारी तव नामनी ए ॥६॥ उगणीसे पच्चासी वर्षे ए, गणि गुण गाया हर्षे ए। सरस ए, चम्पालाल हुलसायने ए ॥ ७ ॥

॥ ढाल ॥

(गोयमजी शिष्य सयाना लाल गोयमा—एदेशी)

भिक्षु गणि भर्त मझारो लाल, स्वामजी। भवी भाग्य उदय अवतारोजी। गण नायक दीन दयालु लाल, स्वामजी। ए तो शरणागत प्रतिपालुजी ॥ गण नायक० ॥ १ ॥ जिन वच धारी सुखदायो लाल, स्वाम जी। बहु भविजन बोध समायोजी ॥ गण० ॥ २ ॥ वर सीमा बहु विध बांधी लाल, स्वा०। शिव वधु सूं प्रीती सांधीजो ॥३॥ तसु सिद्ध पाट सुखदायो लाल, स्वा०। कालू गणि जन मन भायोजी ॥ ४ ॥ मृगराज तणी पर गाजै लाल, स्वा०। फेरू पाखण्डी मन लाजैजी ॥ ५ ॥ बच्चो जिम सभा मझारो लाल, स्वा०। कर चांति शव लियो धारोजो ॥ ६ ॥ घन रव सुण सारंग नाचै लाल, स्वा०। तव गिरा तेम भवि राचैजो ॥७॥ गणि पद पंकज सुखदायो लाल, स्वा०। मुझ मन मधुकर लोभायोजी ॥ ८ ॥ गो हय निधि चन्द सुहायो लाल, स्वा०। तप सित सप्तमी गुण गायोजी ॥ गण नायक दीन दयालु लाल, स्वामजी ॥ ९ ॥

श्री जयाचार्य कृत—

भ्रम विध्वंसन की हुण्डी।

मिथ्यात्वि क्रियाऽधिकारः।

१ बाल तपस्वी ने सुपात्र दान, दया, शीलादि करी मोक्षमार्ग नों देश थकी आराधक कह्यो।

(साख सूत्र भगवती श० ८ उ० १०)

२ प्रथम गुणठाणा नो धणी सुमुख नामे गाथापति, सुदत्त नामा अणगार ने सुपात्र दान देई परित संसार करी मनुष्य नो आउखो बांध्यो।

(साख सूत्र सुखविपाक अ० १)

३ मेघकुमार को जीव मिथ्याती थको हाथी के भव मे सुसला री दया पाली परित ससार कीधो।

(साख सूत्र ज्ञाता अ० १)

४ गोशाला नो श्रावक सकडालपुत्र, भगवान ने तिण प्रदक्षिणा देई वंदना कीधी।

(उपाशक दशांग अ० ७)

५ मिथ्यात्ती ने भली करणी लेखे सुव्रती कह्यो छे।

(साख सूत्र उत्तराध्ययन अ० ७ गा० २०)

६ क्रियावादी सम्यग्दृष्टि (मनुष्य तिर्यंच) एक वैमानिक टाल और आउखो न बांधे ।

(साख सूत्र भगवती ३० उ० १)

७ मिथ्याती मास २ खमण तप करै तथा सुई नी अग्र पै आवै तेतलाज अन्न नो पारणो करै, पिण सम्यग्दृष्टि ना चारित्र धर्म नी सोलमी कला पिण नावै तेहनो न्याय ।

(उत्तराध्ययन अ० ६ गा० ४४)

८ मिथ्याती मास २ खमण तप करै, पिण माया थी अनन्त संसार रुलै ।

(सूयगडांग श्रुतस्कन्ध १ अ० २ उ० १ गा० ६)

६ जोव अजीव जाणै नहीं तेहना पञ्चखाण दुपञ्चखाण कह्या तेहनो न्याय ।

(भगवती श० ७ उ० २)

१० भगवत दीक्षा लियां पहली. २ वर्ष झाझा (अधिका) घर में विरक्त पणे रह्या तथा काचो पाणी न भोगव्यो ।

(प्रथम आचारांग अ० ६ उ० १ गा० ११)

११ जे तत्त्व ना अजाण मिथ्याती, त्यांरो अशुद्ध प्राक्रम छै ते संसार नो कारण छै । पिण निर्जरा नो कारण नथी (पिण शुद्ध प्राक्रम तो निर्जरा

नोहिज कारण छै, संसार नो कारण नथी ।

(सूयगडाङ्ग श्रु० १ अ० ८ गा० २३)

(क) सम्यग्दृष्टि नो शुद्ध प्राक्रम छै, ते सर्वं निर्जरा नो कारण पिण संसार नो कारण नथी (पिण अशुद्ध प्राक्रम तो ससार नोहिज कारण, निर्जरा नो कारण नथी ।

(सूयगडाग श्रु० १ अ० ८ गा० २४)

१२ भगवत दीख्या लेतां इम कह्यो—आज थी सर्वथा प्रकारे मोने (मुझ ने) पाप करवो कल्पे नहीं । इम कही सामायक चारित्र आदर्यो ।

(आचाराग श्रु० २ अ० १५)

१३ एक बेला रा कर्म बाकी रह्यां अनुत्तर विमाण में जाई उपजे ।

(भगवती श० १४ उ० ७)

१४ प्रथम गुणस्थान नी शुद्ध करणी छै, ते आज्ञा मांय छै । तेहनो न्याय ।

१५ प्रथम गुणस्थान ते मिथ्यात्व कर्म नो क्षयोपशम कह्यो ।

(समवायांग समवाय १४)

१६ अप्रमादी साधु ने अणारम्भी कह्या ।

(भगवती श० १ उ० १)

१७ असोच्चाकेवली अधिकारे इम कह्यो—तपस्यादिक थी समदृष्टि पामे ।

(भगवती श० ६ उ० ३१)

१८ सूरियाभ ना अभियोगिया देवता भगवान ने वांद्या तिवारे भगवान कह्यो—ए वन्दना रूप तुम्हारो पुराणो आचार छै १ ए तुम्हारो जीत आचार छै २ ए तुम्हारो कार्य छै ३ ए वन्दना करवा योग्य छै ४ ए तुम्हारो आचरण छै ५ ए वन्दना नी म्हारी आज्ञा छै ६ ।

(रायप्रसेणी देवताधिकार)

१९ खन्धक सन्यासी. गोतम ने पूछ्यो, हे गोतम ! तुम्हारा धर्माचार्य महावीर ने वांदां यावत् सेवा करां । तिवारे गोतम कह्यो, हे देवानुप्रिय ! जिम सुख होवे तिम करो पिण विलम्ब मत करो ।

(भगवती श० २ उ० १)

(क) दीक्षा नी आज्ञा पर भगवत पार्श्वनाथ 'अहं सुहं' पाठ कह्यो ।

पुप्फ चूलिया)

२० भगवत श्री महावीर, खन्धक ने पड़िमा वहवानी आज्ञा दीधी ।

(भगवती श० २ उ० १)

२१ तामली तापसनी अनित्य चिन्तवना।

(भगवती श० ३ उ० १)

२२ सोमल ऋषिनी शुद्ध चिन्तवना।

(पुष्फयोपाग अ० ३)

२३ छद्मस्थ भगवान श्रीमहावीर नी अनित्य चिन्तवना।

(भगवती श० १५)

२४ अनित्य चिन्तवना नै धर्म ध्यान को भेद कह्यो।

(उववाई)

२५ च्यार प्रकारे देवायु बांधे—सराग संजम पालौ १ श्रावक पणो पालौ २ बाल तप करी ३ अकाम निर्जरा करी ४ तथा च्यार प्रकारे मनुष्यायु बांधे—प्रकृति भद्रिक १ प्रकृति विनीत २ दया परिणाम ३ अमत्सर भाव।

(भगवती श० ८ उ० ६)

२६ गोशाले के शिष्यां के च्यार प्रकार नो तप कह्यो—उग्र तप १ घोर तप २ रस परित्याग ३ जीभ्या इन्द्री वश कीधी।

(ठाणांगठाणे ४ उ० २)

२७ अन्यदर्शणी पिण सत्य बचन ने आदर्यो।

(प्रश्न व्याकरण संवरद्वार २)

२८ वाण व्यन्तर नां देवता देवी बनखराड ने विषे बैसे, सुवै जाव क्रीड़ा करै। पूर्व भवे भला प्राक्रम

फाडव्या तेहना फल भोगवे ।

(जम्बूद्वीप प्रज्ञप्ति)

२६ मिथ्याती प्रकृति भद्रादि गुण थी वाणव्यन्तर देवता थाय ।

(उववाई प्रश्न ७)

दानाऽधिकारः ।

---

१ असंयती ने दीधां पुन्य पाप को न्याय ।

२ आनन्द श्रावक इह विधि अभिग्रह लीधो—जे हूं आज थकी अन्य तीर्थी ने अन्य तीर्थी ना देव ने तथा अन्य तीर्थी ना ग्रह्या अरिहन्त ना चैत्य साधु भ्रष्ट थया । ए तीनां प्रति वांदूं नहीं, नमस्कार करूं नहीं, अशनादिक देऊं नहीं. देवाऊं नहीं, विना बतलायां एक वार तथा घणी वार बोलाऊं नहीं, तथा अशना दिक च्यार आहार देऊं नहीं । अनेरा पास थी दिराऊं नहीं । पिण एतलो आगार—राजा ने आदेशे आगार १ घणा कुटुम्ब ने समुदाय ना आदेशे आगार २ कोई एक बल-वन्त ने परवश पणे आगार ३ देवता ने परवश पणे आगार ४ कुटुम्ब में वडेरो ते गुरु, कहिने

तेहने आदेशे आगार ५ अटवी कान्तार ने विषे आगार ६ ए छव छगडी आगार राख्या तो पोता री कचाई जाणी ने राख्या।

(उपाशक दशाँग अ० १)

३ तथा रूप जे असयती ने फासू अफासू सुझतो असूझतो अशनादिक दीधां एकान्त पाप निर्जरा, नथी।

(भगवती श० ८ उ० ६)

४ जे साधु कष्ट उपना एम विचारै। जे अरिहन्त भगवन्त निरोगी काया ना धणी, पोता ना कर्म खपावा ने उदेरी ने तप करै। तो हूं लोच ब्रह्मचर्यादिक अनेक रोगादिक नी वेदना, किम न सहूं। एतले मुझ ने वेदना सम भावे न सहतां, एकान्त पाप कर्म हुवे तो वेदना समभावे सहतां, एकान्त निर्जरा हुवे।

(ठाणाँगठाणे ४ उ० ३)

५ साधु नी हेला निन्दा करतो अशनादि देवै तिहां "पड़िलाभित्ता" पाठ कह्यो।

(भगवती श० ५ उ० ६)

(क) तथा साधु ने वंदना नमस्कार करतो थको

अशनादिक देवै तिहां पिण "पड़िलाभित्ता" पाठ कह्यो।

(भगवती श० ५ उ० ६)

६ पोट्टिला आर्या महासती ने अशनादिक दीधा तिहां "पडिलाभे" पाठ कह्यो। ते माटे "पडि-लाभेइ" नाम देवा नों छै पिण साधु असाधु जाणवा रो नहीं।

(ज्ञाता अध्ययन १४)

७ साधु ने अशनादिक वहिरावै तिहां "दलएज्जा" पाठ कह्यो छै। ते माटे "दलएज्जा" कहो भावे "पडिलाभेज्जा" कहो दोनों एक अर्थ छै।

(आचारांग श्रु० २ अ० उ० ७)

८ सुदर्शन सेठ सुकदेव सन्यासी ने अशनादिक आप्यो तिहा "पडिलाभमाणे" पाठ कह्यो।

(ज्ञाता अ० ५)

९ 'पडिलाभ' नाम देवा नोहिज छै।

(सूयगडांग श्रु० २ अ० ५ गा० ३३)

१० आर्द्र मुनि ने विप्रां कह्यो—जो वे हजार कहतां दो हजार ब्राह्मण जिमावे ते महा पुन्य स्कन्ध उपार्जी देवता हुइ। एहवो हमारे वेद मे कह्यो छै। तिवारे आर्द्र मुनि बोल्या. हे विप्रों! जे

मांस ना गृद्धो घर २ ने विषे मार्जार नी परे भ्रमण करणहार एहवा बे हजार कुपात्र ब्राह्मणां ने नित्य जिमाड़े ते जिमाड़नहार पुरुष ते ब्राह्मणां सहित बहु वेदना छै जेहने विषे एहवी महा असह्य वेदना युक्त नरक ने विषे जाइं। अने दया रूप प्रधान धर्म नी निन्दाना करणहार हिंसादिक पञ्च आस्रव नी प्रशंसाना करणहार एहवो जो एक पिण दुःशील-वन्त निर्व्रती ब्राह्मण जिमाड़े ते महा अन्धकारयुक्त नरक में जाइं। तो जे एहवा घणा कुपात्र ब्राह्मणा ने जिमाड़े तेहनो स्यूं कहिवो। अने तमे कहो छो जे जिमाड़णहार देवता हुइ तो हमें कहां छां जे एहवा दातार ने असुरादिक अधम देवता नी पिण प्राप्ति नही, तो जे उत्तम वैमाणिक देवता नी गति नी आशा एकान्त निराशा छै।

(सूयगडांग श्रु० २ अ० ६ गा० ४३, ४४, ४५)

११ भृगु ने पुत्रां कह्यो, वेद भण्यां त्राण शरण न हुवे तथा ब्राह्मण जिमायां तमतमा जाय। (तमतमा ते अंधारा सें अंधारो) एहवी नर्क।

(उत्तराध्ययन अ० १४ गा० १२)

१२ श्रावक पिण विप्र जिमाड़े तेहनो न्याय च्यार प्रकारे नर्कायु बांधे तिणकरी ओलखायो।

(भगवती श० ८ उ० ६)

(क) वलि श्रावक पिण विप्र जिमाड़ै तिण ऊपर वालमरण थी अनंता नर्क ना भाव। तेहनो न्याय।

(भवगती श० २ उ० १)

१३ जे सावद्य दान प्रशंसै तेहने छःकाय नो वध नो वंछणहार कह्यो। अने वर्त्तमान काले निषेधे त्यांने अन्तराय नो पाड़णहार कह्यो। ते माटे साधु ने वर्त्तमान मे मौन राखिवै कह्यो।

(सुयगडाग श्रु० १ अ० ११ गा० २०, २१)

१४ दान देवै लेवै, इसो वर्त्तमान देखी गुण दूषण कहणो नहीं।

(सूयगडांग श्रु० २ अ० ५ गा० ३३)

१५ नन्दण मणिहारो दानशालादिक नो घणो आरम्भ करी मरीने पोतारी वावड़ी मेज डेडको थयो।

(ज्ञाता अ० १३)

१६ भगवान दश प्रकार ना दान प्ररूप्या। (सावद्य निर्वद्य ओलखणा)।

(ठाणाङ्ग ठाणे १०)

१७ दश प्रकार नो धर्म कह्यो (सावद्य निर्वद्य ओलखणा) अने दश प्रकार ना स्थविर कह्या लौकिक लोकोत्तर बिहुं जाणवा।

(ठाणाङ्ग ठाणे १०)

१८ नव विधि पुण्य कह्यो (सावद्य निर्वद्य ओलखणा)।

(ठाणाङ्ग ठाणे ६)

१९ च्यार प्रकार ना मेह तिमहिज च्यार प्रकार ना पुरुष, कुपात्र मे कुखेत्र जिसा कह्या ।

(ठाणाङ्ग ठाणे ४ उ० ४)

२० शकडालपुत्र गोशाला प्रते कह्यो—हे गोशाला ! तूं मांहरा धर्माचार्य श्री महावीर ना गुणकीर्तन कह्या । ते माटे देऊं छूं तुमने पीढ, फलग, सेज्यादि । पिण धर्म तप ने अर्थे नहीं ।

(उपाशकदशा अ० ७)

२१ मृगालोढा प्रति देखने गौतम, भगवान ने पूछ्यो— हे भगवन्त ! इण पूर्व भवे कांई कुपात्र दान दीधा ? कांई कुशीलादि सेव्या ? अने कांई मांसादि भोगव्या ? तेहना फल ए नर्क समान दुःख भोगवे छै । तो जीवोनो कुपात्र दान ने चौड़े भारी कुकर्म कह्यो ।

(दुःखविपाक अ० १)

२२ ब्राह्मणां ने पापकारी खेत्र कह्या ।

(उत्तराध्ययन अ० १२ गा० १४)

२३ पन्द्रह कर्मादान ने व्यापार कह्या ।

(उपाशकदशा अ० १)

२४ भात पाणी घी पोष्यां धर्माधर्म नो न्याय ।

(उपासकदशा अ० १)

२५ तुंगिया नगरी ना श्रावकां नो उघाड़ा बारणा रो न्याय ।

(भगवती श० २ उ० ५ टीका में)

२६ श्रावक ना त्याग ते व्रत अने आगार ते अव्रत ।

(उववाई प्रश्न २० तथा सूयगडांग श्रु० २ अ० २)

२७ दश प्रकार ना शस्त्र कह्या तिण में अव्रत ने भाव शस्त्र कह्यो ।

(ठाणांग ठाणे १०)

२८ जे श्रावक देशथकी निवर्त्यो अने देशथकी पच्चखाण कीधा तिणे करी देवता थाय । पिण अव्रत थी देवता न हुवै ।

(भगवती श० १ उ० ८)

२९ साधु ने सामायक में बहिरायां सामायक न भांगे तेहनो न्याय ।

(भगवती श० ८ उ० ५)

३० श्रावक जिमावै तिण ऊपर महावीर पार्श्वनाथ ना साधु नो न्याय मिले नहीं ।

(उत्तराध्ययन अ० २३ गा० १७

३१ असोच्चा केवली, अन्यलिंगी थकां पोते तो दीक्ष्या

न देवै। पिण अनेरा पासे दीख्या लेवा नो उपदेश करै।

(भगवती श० ६ उ० ३१)

३२ अभिग्रहधारी अने परिहार विशुद्ध चारित्रियों कारण पड्यां अनेरा साधु ने अशनादि देवै।

(बृहत्कल्प उ० ४ बोल २७)

३३ गृहस्थादिक ने देवो साधु संसार भ्रमण नो हेतु जाणी छोड्यो।

(सूयगडांग श्रु० १ अ० ६ गा० २३)

३४ गृहस्थी ने दान दियां अने देतां ने अनुमोद्यां चौमासी प्रायश्चित कह्यो।

(निशीथ उ० १५ बोल ७४-७५)

३५ आणन्द ने संथारा में पिण गृहस्थ कह्यो।

(उपाशकदशा अ० १)

३६ गृहस्थ नी व्यावच कियां, करायां, वलि अनुमोद्यां २८ मो अणाचार कह्यो।

(दशवैकालिक अ० ३ गा० ६)

३७ इग्यारमी पड़िमा में पिण प्रेम-बंधण तूट्यो नथी।

(दशाश्रुत स्कन्ध अ० ६)

३८ पड़िमाधारी रे कल्प ऊपर अम्बड़ सन्यासी ना कल्प नो न्याय।

(उववाई प्रश्न १४)

३९ अनेरा सन्यासी नो कल्प ।

(उववाई प्रश्न १२)

४० वर्ण नाग नतुओ संग्राम में गयो तिहां एहवो अभिग्रह धार्यो—कल्पे मुझने जे पूर्वे हणे तेहने हणवो । जे न हणे तेहने न हणवो ।

(भगवती श० ७ उ० ९)

४१ जे एकेक अन्यतीर्थी थकी गृहस्थ श्रावक देश व्रते करी प्रधान अने सर्व श्रावक थकी साधु सर्व व्रते करी प्रधान ।

(उत्तराध्ययन अ० ५ गा० २०)

४२ श्रावक नी आत्मा अधिकरण कही छै। अधिकरण ते छवकाय नो शस्त्र जाणवो ।

(भगवती श० ७ उ० १)

(क) भरतजी के घोड़े ने ऋषि की उपमा दीधी तिमहिज श्रावक ने समण भुया' कह्यो पिण ते देशथकी उपमा जाणवी ।

(जम्बू द्वीप प्रज्ञप्ति)

४३ च्यार व्यापार कह्या—मन, वचन, काया और उप-करण । ए च्यारूं व्यापार सन्नी पंचेन्द्रियरे कह्या। ए च्यारूं भूंडा व्यापार पिण १६ दण्डक सन्नी पंचेन्द्रियरे कह्या । अने ए च्यारूं भला व्यापार तो संयती मनुष्यांरेइज कह्या ।

(ठाणांग ठाणे ४ उ० १)

अनुकम्पाऽधिकारः ।

१ असंयती जीवां रो जीवणो बांछणो घणे ठामे वर्ज्यो ते साख रूप बोल ।

२ पोताना कर्म खपावा तथा अनेरा (आर्य क्षेत्र ना मनुष्य) ने तारिवा निमित भगवान धर्म कहै । पिण असंयती जीवां ने बचावा अर्थे नहीं ।

(सूयगडांगश्रु० २ अ० ६ गा० १७ १८)

३ पोताना पाप टालवा भणी नेमनाथ भगवान पाछा फिरया ।

(उत्तराध्यन अ० २२ गा० १८ १९)

४ मेघकुमार नो जीव हाथी ने भवे सुसलानो अनुकम्पा कीधी, सुसला ने च्यार नामे करी बोलायो ।

(ज्ञाता अ० १)

(क) तथा अढाई निग्रन्थ ने छः नामे करी बोलायो ।

(भगवती श० २ उ० १)

५ पड़िमाधारी नो कल्प 'बहाय गहाय' पाठ नो अर्थ ।

(दशाश्रुतस्कन्ध अ० ७)

६ रागद्वेष आणी 'मार तथा मत मार' इम कहिवो वर्ज्यो ।

(सूयगडांग श्रु० २ अ० ५ गा० ३०)

७ गृहस्थां ने मांहो मांहो लड़ता देखी—एहने हण

तथा एहने मत हणा एहवो मन मे पिण विचार न करै ।

(आचारांग श्रु० २ अ० २ उ० १)

८ गृहस्थो ने, साधु 'अगिन प्रज्वाल तथा वुझाव' इम न कहै ।

(आचारांग श्रु० २ अ० २ उ० १)

९ दश प्रकार नी वांछा कही ।

(ठाणांग ठाणे १०)

१० असंयम जीवितव्य वांछणो वर्ज्यो ।

(सूयगडांग श्रु० १ अ० १० गा० २४)

११ असयम जीवणो मरणो वांछणो वर्ज्यो ।

(सूयगडाङ्ग श्रु० १ अ० १३ गा० २३)

१२ साधु असंयम जीवितव्य ने पूठ देई विचरै ।

(सूयगडांग श्रुतस्कन्ध १ अ० १५ गा० १०)

१३ असयम जीवणो वांछणो वर्ज्यो ।

(सूयगडांग श्रु० १ अ० ३ उ० ४ गा० १५)

१४ असंयम जीवणो वांछै तिणने बाल अज्ञानी कह्यो ।

(सूयगडांग श्रु० १ अ० ५ उ० १ गा० ३)

१५ साधु आपणो आत्मा ने असयम जीवितव्य को अर्थी न करै ।

(सूयगडांग श्रु० १ अ० १० गा० ३)

१६ असंयम जीवणो वांछणो वर्ज्यो ।

(सूयगडांग श्रु० १ अ० २ उ० २ गा० १६)

१७ संयम जीवितव्य वधारवो कह्यो ।

(उत्तराध्ययन अ० ४ उ० ७)

१८ संयम जीवितव्य दुर्लभ कह्यो ।

(सूयगडांग श्रु० १ अ० २ उ० २ गा० १)

१९ मिथिला नगरी बलती देखी, नमीराजर्षि सांहमो न जोयो । वलि कह्यो म्हारै राग द्वेष करवा माटै वाह्लो दुवाह्लो एक पिण नहीं । ए मिथिलापुरी बलतां थकां मांहरो किञ्चित मात पिण बलै नथी । मैं तो (संयम मे सुख से जीवूं अने सुख से वसूं छूं ।

(उत्तराध्ययन अ० ९ गा० १२ १३ १४-१५)

२० देवता मनुष्य, तिर्यञ्च ए तीनां नूं मांहों मांही बिग्रह देखी अमुक नी जय होवो अने अमुक नी अजय होवो एहवो वचन साधु ने बोलणो नहीं ।

(दशवैकालिक अ० ७ गा० ५०)

२१ वायरो, वर्षा, सीत, तावड़ो, राज विरोध रहित, सुभिक्ष पणो, उपद्रव रहित पणो, ए सात बोल हुवो इम साधु ने कहिवो नहीं ।

(दशवैकालिक अ० ७ गा० ५१)

२२ समुद्रपालो चोर ने मरतो देखी वैराग्य पामी चारित्र लीधो पिण चोरनी अनुकम्पा करि छोडायो नथी ।

(उत्तराध्ययन अ० २१ गा० ९)

२३ जे साधु पोतानी अनुकम्पा करै पिण अनेरा नी अनुकम्पा न करै।

(ठाणांग ठाणे ४ उ० ४)

२४ अन्यतीर्थी तथा गृहस्थ मार्ग भूलाने साधु मार्ग बतावे तो चौमासो प्रायश्चित आवे।

(निशीथ उ० १३ बोल २५)

२५ हिन्सादिक अकार्य करता देखी, धर्मउपदेश देई समभावणो तथा मणबोल्यो रहे तथा उठी एकान्त जावणो कह्यो।

ठाणांग ठा० ३ उ० ३)

२६ साधु अनेरा जीवां ने भय उपजावे, तो प्रायश्चित कह्यो।

(निशीथ उ० ११ बोल ६४)

२७ गृहस्थ नी रक्षा निमित्ते मन्त्रादिक कियां वलि-अनुमोद्यां चौमासी प्रायश्चित कह्यो।

(निशीथ उ० १३ बोल १४)

२८ चूलणीपिया, पोषा मे माता ने बचाविवा उठ्यो तो व्रत नियम भांग्या कह्या।

(उपाशकदशा अ० ३)

२९ नावा मे पाणी आवतो देखी साधु ने गृहस्थ प्रते बतावणो नहीं।

(आचारांग श्रु० २ अ० ३ उ० १)

३० साधु अनुकम्पा आणी त्रस जीव ने बांधे बंधावै तथा बांधते प्रते भलो जाणे तथा बंधिया जीवां ने अनुकम्पा आणी छोड़े, छुड़ावे छोड़ते ने भलो जाणै तो प्रायश्चित कह्यो।

(निशीथ उ० १२ बोल १-२)

३१ साधु कुतूहल निमित्त त्रस जीव ने बांधे बंधावै अने छोड़े छुड़ावे तो प्रायश्चित कह्यो।

(निशीथ उ० १७ बोल १-२)

३२ जे साधु पच्चखाण भांगे अने भांगता ने अनुमोदे तो दण्ड कह्यो।

(निशीथ उ० १२ बोल ३ ४)

३३ गृहस्थ साधु नी अनुकम्पा आणी तेलादि मर्दन करै तिहां 'कोलुण वडियाए' पाठ कह्यो।

(आचारांग श्रु० २ अ० २ उ० १)

३४ हरिणगवेषी सुलसां नी अनुकम्पा कीधी।

(अन्तगढ़ वर्ग ३ अ० ८)

३५ कृष्णजी डोकरानी अनुकम्पा करी ईंट उपाड़ी।

(अन्तगढ़ वर्ग ३ अ० ८)

३६ हरिकेशी नी अनुकम्पा आणी यत्ते विप्रां ने ऊंधा पाड्या।

(उत्तराध्ययन अ० १२ गा० ८ से २५ ताँई)

३७ धारणी राणी गर्भनी अनुकम्पा आणी मन गमता अशनादिक खाया ।

(ज्ञाता अ० १)

३८ अभयकुमार नी अनुकम्पा आणी देवता मेह वरसायो ।

(ज्ञाता अ० १)

३९ जिन ऋषि करुणा आणी रयणा देवी रे साहमो जोयो ।

(ज्ञाता अ० ९)

४० प्रथम आस्रव द्वार ने करुणा रहित कह्यो ।

(प्रश्न व्याकरण अ० १)

४१ करुणा सहित जिन ऋषि ने रयणा देवी दया रहित परिणामे करि हण्यो ।

(ज्ञाता अ० ९)

४२ सूर्याभ देवता री नाटक रूप भक्ति कही ।

(राय प्रसेणी)

४३ यक्षे छात्रां ने ऊन्धा पाड्या ते हरिकेशीनी व्यावच कही ।

(उत्तराध्ययन अ० १२ गा० ३२)

४४ भगवान शीतल तेजू लब्धि करी गोशाले ने बचायो तिहां 'अणुकम्पणट्ठाए' पाठ कह्यो ।

(भगवती श० १५)

लब्धि अधिकारः

---

१ वैक्रिय तथा तेजस लब्धि फोड्यां जघन्य ३ उत्कृष्टी ५ क्रिया कही ।

(पन्नवणापद ३६)

२ आहारिक लब्धि फोड्यां जघन्य ३ उत्कृष्टी ५ क्रिया कही ।

(पन्नवणा पद ३६)

३ आहारिक लब्धि फोड़े तिणने प्रमाद आश्री अधि-करण कह्यो ।

(भगवती श० १६ उ० १)

४ जंघाचारण अथवा विद्याचारण लब्धि फोड़ी बिना आलोयां मरे, तो विराधक कह्यो ।

(भगवती श० २० उ० ६)

५ वैक्रिय लब्धि फोड़े तिणने मायी कह्यो अने आलोयां बिना मरे, तो विराधक कह्यो ।

(भगवती श० ३ उ० ४)

६ सात प्रकारे छद्मस्थ तथा सात प्रकारे केवली जाणीजे ।

(ठाणांग ठाणे ७)

७ अम्बड़ सन्यासी वैक्रिय लब्धि फोड़ी, सौ घरां

पारणो कीधो ते लोकां ने विस्मय उपजायवा भणी ।

(उववाई प्रश्न १४)

८ साधु अनेरा ने विस्मय उपजावै तो चौमासी प्रायश्चित कह्यो ।

(निशीथ उ० ११)

प्रायश्चित्ताऽधिकारः ।

१ सीहो अणगार मोटे २ शब्दे रोयो ।

(भगवती श० १५)

२ अइमुत्ते साधुपाणी मे पावी तराई ।

(भगवती श० ५ उ० ४)

३ रहनेमी, राजमती ने विषय रूप वचन बोल्यो ।

(उत्तराध्ययन अ० २२ गा० ३८)

४ धर्मघोषना साधां नागश्री ब्राह्मणी ने बाजार में हेली निन्दी ।

(ज्ञाता अ० १६)

५ सेलक ऋषि ने उसन्नो पासत्थो कह्यो ।

(ज्ञाता अ० ५)

६ गोशाला नो जीव विमलवाहन राजा ने सुमंगल नामे अणगार, तेनू लब्धिइं करी हणस्ये ।

(भगवती श० १५)

७ खन्धक नामे अणगार संथारो कीधो तिहां 'आलोइय पडिक्कन्ते' पाठ कह्यो ।

(भगवती श० २ उ० १)

८ तिसक मुनि ने छेहड़े तिहां 'आलोइय पडिक्कन्ते' पाठ कह्यो ।

(भगवती श० ३ उ० १)

९ कार्तिक सेठ ने छेहड़े तिहां 'आलोइय पडिक्कन्ते' पाठ कह्यो ।

(भगवती श० १८ उ० २)

१० कषाय कुशील नियण्ठा नो वर्णन ।

(भगवती श० २५ उ० ६)

११ दृष्टिवाद नो भणी पिण वचन खलावे ।

(दशवैकालिक अ० ८ गा० ५०)

१२ अनुत्तर विमाण ना देवता उदीर्ण मोह नथी, अने क्षीण मोह नथी, उपशान्त मोह छे ।

(भगवती श० ५ उ० ४)

१३ हाथी अने कुंथुआ के अपच्चखाण की क्रिया समान कही ।

(भगवती श० ७ उ० ८)

१४ सर्व भवी जीव मोक्ष जास्ये ।

(भगवती श० १२ उ० २)

१५ पुद्गलास्तिकाय मे ८ स्पर्श कह्या ।

(भगवती श० १२ उ० ५)

गोशालाऽधिकारः ।

---

१ भगवन्त गौतम ने कह्यो—हे गौतम ! गोशाले मोने कह्यो तुम्हें मांहरा धर्माचार्य अने हूं आपरो धर्मान्तेवासी शिष्य । तिवारे मे अङ्गीकार कीधुं ।

(भगवती श० १५)

२ सर्वानुभूति, सुनक्षत्र मुनि गोशाला ने कह्यो—हे गोशाला ! तोने भगवान मूंड्यो । तोने भगवान प्रवर्या दीधी । तोने शिष्य कियो । तोने सिखायो अने तोने बहुश्रुति कियो । तूं भगवान सूंइज मिथ्यात्व पडिवज्जै छै ?

(भगवती श० १५)

३ भगवान पिण कह्यो—हे गोशाला ! मैं तोने प्रवर्या दीधी ।

(भगवती श० १५)

४ गोशाला ने शिष्य कह्यो ।

(भगवती श० १५)

गुणवर्णनाऽधिकारः ।

१ गणधरा भगवान ना गुण किया ।

(आचारांग श्रु० १ अ० ६ उ० ४ गाथा ८)

२ भगवान, साधां ना अनेक गुण किया ।

(उववाई प्रश्न २१)

३ कोणक ने माता पिता नो विनीत कह्यो ।

(उववाई)

४ श्रावकां ने धर्म ना करणहार कह्या ।

(उववाई प्रश्न २०)

५ गौतम ना गुण कह्या ।

(भगवती श० १ उ० १)

लेश्याऽधिकारः ।

१ छद्मस्थ तीर्थङ्कर में कषाय कुशील नियण्ठो कह्यो ।

(भगवती श० २५ उ० ६)

२ कषाय कुशील नियण्ठा में छः लेश्या कही ।

(भगवती श० २५ उ० ६)

३ सामायक चारित्र छेदोस्थापनीय चारित्र में छः, लेश्या पावै ।

(भगवती श० २५ उ० ७)

४ छः लेश्या ना लक्षण ।

(आवश्यक अ० ४)

५ च्यार ज्ञानवाला साधु मे पिण कृष्ण लेश्या कही छै ।

(पन्नवणा पद १७ उ० ३)

६ कृष्ण. नील अने कापोत लेश्या में च्यार ज्ञान नी भजना कही ।

(भगवती श० ८ उ० २)

७ कृष्णादिक तीन लेश्या प्रमादी साधु मे हुवै ।

(भवगती श० १ उ० १)

८ तेजू पद्म लेश्या सरागी में हुवै ।

(भगवती श० १ उ० २)

९ संयती मे पिण कृष्ण लेश्या हुवै ।

(पन्नवणा पद १७ उ० १)

वैयावृत्ति अधिकारः ।

---

१ यक्षे छात्रां ने ऊंधा पाड्या ते हरकेशी नो व्यावच कही ।

(उत्तराध्ययन अ० १२ गा० ३२)

२ सूर्याभ देव नो नाटक रूप भक्ति कही ।

(राय प्रसेणी)

३ भगवान ना अङ्गोपाङ्ग ना हाड भक्तिइं करी देवता ग्रहण करै।

(जम्बू द्वीप प्रज्ञप्ति)

४ बीस बोल करी तीर्थङ्कर गौत्र बंधे।

(ज्ञाता अ० ८)

५ साता दियां साता हुवे इम कहै ते आर्य मार्ग थी अलगो। समाधि मार्ग थी न्यारो। जिन धर्म री हेलणा रो करणहार। अल्प सुखां रे अर्थे घणा सुखां रो हारणहार। ए असत्य पक्ष अण छांडवे करी मोक्ष नहीं। लोह वाणिया नी परै घणो झूरसी।

(सूयगडांग श्रु० १ अ० ३ उ० ४ गा० ६-७)

६ पांच स्थानके करी श्रमण निग्रन्थ ने महा निर्जरा हुवे। तिहां कुल गण संघ साधर्मी साधु ने कह्या।

(ठाणांग ठाणे ५ उ० १)

७ दश प्रकार नी व्यावच साधुरैइज कही।

(ठाणाङ्ग ठाणे १०)

८ पुनः दश प्रकार नी व्यावच साधुरैइज कही।

(उववाई)

९ साधु ना समुदाय ने गण संघ कह्यो।

(भगवती श० ८ उ० ९)

१० सावद्य व्यावच पर भिक्षुगणिराज कृत वार्तिका कहे छै ।

११ साधु नी अर्श छेदे तिण वैद्य ने क्रिया कही ।

(भगवती श० १६ उ० ३)

१२ साधु अन्यतीर्थी तथा गृहस्थ पासे अर्श छेदावै तथा कोई अनेरा साधुनी अर्श छेदतां अनुमोदै तो मासिक प्रायश्चित आवे ।

(निशीथ उ० १५ बोल ३१)

१३ साधु रो गूमड़ो गृहस्थ छेदै तो साधु ने मने करी अनुमोदनो नहीं तथा वचन अने काया करी करावै नहीं ।

(आचारांग श्रु० २ अ० १३)

विनयाऽधिकारः ।

---

१ दोय प्रकार नो विनय मूल धर्म कह्यो साधु ना पञ्च महाव्रत ते साधु नो विनय मूल धर्म अने श्रावक ना १२ व्रत तथा ११ पड़िमा ते श्रावक नो विनयमूल धर्म ।

(ज्ञाता अ० ५)

२ पांडुराजा अने पांच पाण्डव माता कुन्तां सहित नारद से तिप्रदक्षिणा देई वन्दना नमस्कार कियो घणो विनय कियो ।

(ज्ञाता अ० १६)

३ जिम पांडु नारद नो विनय कियो तिमहिज कृष्णा पिण नारद नो विनय कियो ।

(ज्ञाता अ० १६)

४ साधु गृहस्थादिक ने वांदतो थको अशनादिक जाचै नहीं ।

(दशवैकालिक अ० ५.उ० २ गा० २६)

५ अम्बड़ ने चेला धर्माचार्य कही नमोत्थुणं गुण्यो ।

(उववाई अ० १३)

६ धर्माचार्य ने साधु कह्या ।

(रायप्रसेणी)

७ भरत चक्रवर्ती चक्र रत्न ने नमस्कार कियो ।

(जम्बूद्वीप प्रज्ञप्ति)

८ तीर्थङ्कर जन्म्या ते द्रव्य तीर्थङ्कर नें इन्द्र नमोत्थुणं गुण नमस्कार करे ।

(जम्बूद्वीप प्रज्ञप्ति)

६ इन्द्र एहवूं कह्यो जे तीर्थङ्कर नो जन्म महिमा करूं ते म्हारो जीत आचार छै पिण ये महिमा धर्म हेतु करूं इम नथी कह्यो ।

(जम्बूद्वीप प्रज्ञप्ति)

१० तीर्थङ्कर नी माता ने इन्द्र प्रदक्षिणा देई नमस्कार करै ।

(जम्बूद्वीप प्रज्ञप्ति)

११ अरिहन्तादिक पांच पदांनेंज नमस्कार करवो कह्यो ।

(चन्द्र प्रज्ञप्ति गा० २)

१२ सर्वानुभूति अणगार गोशाले ने श्रमण माहण नो हिज विनय करवा कह्यो ।

(भगवती श० १५)

१३ अठारह पाप सूं निवर्त्तै तेहने माहण कह्यो ।

(सूयगडाँग श्रु० १ अ० १६)

१४ माहण नाम साधुरोहिज कह्यो ।

(सूयगडाग श्रु० २ अ० १)

१५ त्रस स्थावर त्रिविधे २ न हणे तेहने माहण कह्यो तथा और भी अनेक लक्षण माहणना बताया ।

(उत्तराध्ययन अ० २५ गा० १६ से २६ ताँई)

१६ समण माहण सर्व अतिथि नो नाम कह्यो ।

(अनुयोग द्वार)

१७ श्रावक ने एतला नामे करी बोलाणो कह्यो— हे श्रावक ! हे उपाशक ! हे धार्मिक ! हे धर्म प्रिय ! एहवा नामा करी बोलावणो कह्यो ।

(आचाराग श्रु० २ अ० ४ उ० १)

पुण्याऽधिकारः ।

१ परलोक ने अर्थे तप नही करवो ।

(दशवैकालिक अ० ६ गा० ४)

२ गाढ़ा पुन्य न करै तो मरणान्ते पश्चाताप करै ।

(उत्तराध्ययन अ० १३ गा० २१

३ पुण्यपद सांभली भरत चक्रवर्ती दीक्षा लीधी ।

(उत्तराध्ययन अ० १८ गा० ३४)

४ अकृतपुण्य ना धणी धर्म सांभली प्रमाद करै ते संसार में भ्रमण करै ।

(प्रश्न व्याकरण अ० ५)

५ यश नो हेतु तप संयम कह्यो ।

(उत्तराध्ययन अ० ३ गा० १३)

६ आत्मा ने अयश अर्थात् असयम करी जीव नरक मे ऊपजै ।

(भगवती श० ४१ उ० १)

७ नरक ना हेतु ने नरक कही ।

(उत्तराध्ययन अ० ६ गा० ८)

८ मृग सरिसा अज्ञानी ने मृग कह्यो ।

(उत्तराध्ययन अ० १ गा० ५)

आस्रवाऽधिकारः ।

१ पञ्च आस्रव द्वार कह्या ।

(ठाणांग ठाणे ५ तथा समवायाङ्ग स० ५)

(क) मिथ्यादृष्टि ने अरूपी कही ।

(भगवती श० १२ उ० ५)

२ पञ्च आस्रव ने कृष्ण लेश्या ना लक्षण कह्या ।

(उत्तराध्ययन अ० ३४ गा० २-१२७)

३ सम्यक् अने मिथ्यात्व ने जीव क्रिया कही ।

(ठाणाङ्ग ठा० २ उ० १)

४ दश प्रकार नो मिथ्यात्व कह्यो ।

(ठाणांग ठाणे १०)

५ अठारह पाप में वर्ते तेहिज जीव अनें तेहिज जीवात्मा कही ।

(भगवती श० १७ उ० २)

६ जीव अजीव परिणामी रा दश २ भेद कह्या ।

(ठाणांग ठा० १०)

७ कषाय, जोग, दर्शन ए आत्मा कही ।

(भगवती श० १२ उ० १०)

८ उदय निष्पन्न रा तेतीस बोलां ने जीव कह्या ।

(अनुयोग द्वार)

. उत्थानादिक नें अरूपी कह्या ।

(भगवती श० १२ उ० ५)

१० क्रोधादिक ने भाव संयोगी कह्या ।

(अनुयोग द्वार)

११ क्रोधादिक ने भाव लाभ कह्यो ।

(अनुयोग द्वार)

१२ अकुशल मनने रूधवो कह्यो ।

(उववाई)

१३ माठा भाव थी ज्ञानादिक खपे ।

(अनुयोग द्वार)

१४ आस्रव ने, मिथ्या दर्शनादिक ने जीवरा परिणाम कह्या ।

(ठाणाङ्ग ठाणे ६)

सम्वराऽधिकारः ।

---

१ पंच सम्वर द्वार प्ररूप्या ।

(ठाणांग ठाणे ५ उ० २ तथा समवायाङ्ग स० ५)

२ जीव रा ज्ञानादिक छव लक्षण कह्या ।

(उत्तराध्ययन अ० २८ गा० ११-१२)

३ चारित्र ने जीव गुण परिणाम कह्या ।

(अनुयोग द्वार

४ सम्वर ने आत्मा कही ।

(भगवती श० १ उ० ६

५ अठारह पाप ना विरमण ने अरूपी कह्यो ।

(भगवती श० १२ उ० ५)

६ अठारह पाप ना विरमण ने जीव द्रव्य कह्यो ।

(भगवती श० १८ उ० ४)

जीव भेदाऽधिकारः ।

१ विशिष्ट अवधि रहित ने असंज्ञीभूत कह्या ।

(पन्नवणा पद १५ उ० १)

२ नन्हा बालक तथा बालिका ने असन्नीभूत कह्या ।

(पन्नवणा पद ११)

३ आठ सूक्ष्म कह्या ।

(दशवैकालिक अ० ८ गा० १५)

४ तेउ वाउ ने त्रस कह्या ।

(जीवाभिगम प्रश्न १)

५ सम्मूर्च्छिममनुष्य ने पर्याप्ता अपर्याप्ता बिहुं नामे करी बोलाव्यो ।

(अनुयोग द्वार)

६ असुर कुमार ने उपजती बेलां वे वेद कह्या ।

(भगवती श० १३ उ० २)

आज्ञाऽधिकारः ।

१ वीतराग ना पग थकी जीव मुवां, इर्यावहि क्रिया कही ।

(भगवती श० १८ उ० ८)

२ सम्यक् मानता ने असम्यक् पिण सम्यक् हुई ।

(आचारांग श्रु० १ अ० ५ उ० ५)

(क) तीन उदक ना लेप लगावे तिणने सबलो दोष कह्यो ।

(दशाश्रुतस्कन्ध अ० २)

३ पांच मोटी नदी एक मास मे बे वार अथवा तीन वार उतरवो कल्पे नही ।

(वृहत्कल्प उ० ४)

४ साधु ने नदी उतरवो कह्यो ।

(आचाराग श्रु० २ अ० ३ उ० २)

५ पाणी में डूबती थकी साध्वी ने साधु बाहिर काढे तो आज्ञा उलंघे नही ।

(वृहत्कल्प उ० ६)

६ रात्रि मे सिझायादिक ने अर्थे बाहिर जावणो कल्पे ।

(वृहत्कल्प उ० १)

—:—

शितल आहाराऽधिकारः ।

१ ठण्डो आहार भोगवणो कह्यो ।

(उत्तराध्ययन अ० ८ गा० १२)

२ भगवन्त ठण्डो आहार लीधो कह्यो ।

(आचाराग श्रु० १ अ० ६ उ० ४)

३ धन्ने अणगार न्हाखितो आहार लियो ।

(अनुत्तर उववाई)

४ अरस निरस तथा शीतलादिक आहार भोगवो । साधु ने द्वेष न करिवो ।

(प्रश्न व्याकरण अ० १०)

सूत्र पठनाऽधिकारः ।

१ साधुनेदूज सूत्र भणवा री आज्ञा दीधी ।

(प्रश्न व्याकरण अ० ७)

२ साधु सूत्र भणे तिण री मर्यादा कही ।

(व्यवहार उ० १०)

३ अन्य तीर्थी ने तथा गृहस्थी ने साधु सूत्र रूप बाचणो देवै तथा देता ने अनुमोदै तो प्रायश्चित कह्यो ।

(निशीथ उ० १६)

४ आचार्य उपाध्याय नी अणदीधी बांचणी श्रहै, तो प्रायश्चित कह्यो।

(निशीथ उ० १६)

५ तीन जणा बांचणी देवा अयोग्य कह्या।

(ठाणाङ्ग ठाणे ३ उ० ४)

६ श्रावकां ने अर्थ रा जाण कह्या।

(उववाई प्रश्न २०)

७ निग्रन्थ ना प्रवचन ने सिद्धान्त कह्या।

(सूयगडाग श्रु० २ अ० २)

८ साधुनेइज शुद्ध धर्म ना प्ररूपणाहार कह्या।

(सूयगडाङ्ग श्रु० १ अ० ११ गा० २४)

९ अभाजन ने सूत्र सिखावै त्यांने अरिहन्त नी आज्ञा ना उलङ्घनहार कह्या।

(सूर्य प्रज्ञप्ति पाहु० २०)

१० अर्थ ने पिण 'सूय धम्मे' कह्यो।

(ठाणाङ्ग ठा० २ उ० १)

११ सूत्र आश्री तीन प्रत्यनीक कह्या।

(भगवती श० ८ उ० ८)

१२ पचेन्द्रिय ना उपयोग ने श्रुत कह्यो।

(पन्नवणा पद २३ उ० २)

१३ भावश्रुत ना १० नाम पर्यायवाची कह्या।

(अनुयोग द्वार)

———

निरवद्य क्रियाऽधिकारः ।

१ अठारह पाप सूं निवर्त्यां कल्याणकारी कर्म बंधे।

(भगवती श० ७ उ० १०)

२ वन्दना करता नीच गोत्र खपावे ।

(उत्तराध्ययन अ० २६ बोल १०)

३ धर्मकथा सूं शुभ कर्म बन्धे ।

(उत्तराध्ययन अ० २६ बोल २३)

४ व्यावच्च कियां तीर्थंङ्कर गोत्र बंधे ।

(उत्तराध्ययन अ० २६ बोल ४३)

५ तीन प्रकार शुभ दीर्घायु बंधे ।

(भगवती श० ५ उ० ६)

६ दश प्रकार कल्याणकारी कर्म बंधे ।

(ठाणांग ठाणे १०)

७ अठारह पाप सेयां कर्कश वेदनीय कर्म बंधे अने १८ पाप सूं निवर्त्यां अकर्कश वेदनीय कर्म बधे ।

(भगवती श० ७ उ० ६)

८ वीस बोलां करी तीर्थङ्कर गोत्र बन्धे ।

(ज्ञाता अ० ८)

९ प्राण, भूत, जीव, सत्व ने दुःख न दियां साता वेदनी कर्म बंधे ।

(भगवती श० ७ उ० ६)

१० आठ कर्म निपजावा नी करणी जुदी २ कही ।

(भगवती श० ८ उ० ६)

११ धर्म रुचि अणगार ने तुम्बो परठवा नी आज्ञा दीधी ।

(ज्ञाता अ० १६)

१२ भगवान साधां ने गोशाले सूँ चर्चा करने की आज्ञा दीधी तथा सर्वानुभूति ने विनीत कह्यो ।

(भगवती श० १५)

१३ गुरु नी आज्ञा आराधे तिण ने विनीत कह्यो ।

(उत्तराध्ययन-अ० १ गा० २)

निर्ग्रन्थाहाराऽधिकारः ।

१ साधु प्राशुक आहार भोगवे तो ७ कर्म ढीला पाड़े ।

(भवगती श० १ उ० ६)

२ ज्ञान दर्शन चारित्र वह्वा ने अर्थे साधु आहार करे ।

(ज्ञाता अ० २)

३ साधु मोक्ष ने अर्थे आहार करे ।

(ज्ञाता अ० १८)

४ साधु जयणा सूं आहार करै तो पाप कर्म बंधै नही ।

(दशवैकालिक अ० ४ गा० ८)

५ साधु ना आहार नी वृत्ति असावद्य कही ।

(दशवैकालिक अ० ५ उ० १ गा० ६२)

६ निर्दोष आहार ना लेवणहार तथा देवणहार दोनों शुद्ध गति मे जावे ।

(दशवैकालिक अ० ५ उ० १ गा० १००)

७ छव स्थानके करी साधु आहार करै तो आज्ञा उलंघे नहीं ।

(ठाणांग ठा० ६)

निर्ग्रन्थ निद्राऽधिकारः ।

१ साधु रै यत्नाइं करी सोवतां पाप बंधै नही ।

(दशवैकालिक अ० ४ गा० ८)

२ 'सुत्ते' नाम निद्रावन्त नो छै ।

(दशवैकालिफ अ० ४)

३ कांइक सुतो कांइक जागतो स्वप्न देखै ।

(भगवती श० १६ उ० ६)

४ अभिग्रह धारी साधु तीजी पोरसी मे निद्रा मूकै ।

(उत्तराध्ययन अ० २६ गा० १८)

५ पाणी ने किनारे निद्रादिक कार्य करना कल्पै नहीं।

(बृहत्कल्प उ० १ बोल १६)

६ अन्तर घर में निद्रा लेणी कल्पै नहीं।

(बृहत्कल्प उ० ३ बोल २१)

७ साधु ने भाव निद्राइं करी जागतो कह्यो।

(आचारांग श्रु० १ अ० ३ उ० १)

—:—

एकाकि साधु-अधिकारः।

१ ग्रामादिक का घणा निकाल पैसार हुवे तिहां घणा आगमना जाण बहुस्रुति ने पिण एकाकि पणे न कल्पै।

(व्यवहार उ० ६)

२ ग्रामादिक तथा सरायादिक ने विषे घणा निकाल पैसार हुवे तिहां अगडसुया ते निशीथ ना अजाण त्यांने एकाकि पणे न कल्पै।

(व्यवहार उ० ६)

३ ग्रामादिक ना जुदा २ निकाल हुवे तिहां साधु साध्वी ने भेलो रहिवो कल्पै।

(बृहत्कल्प उ० १ बोल १९)

४ एकलो रहै तिण में आठ दोष कह्या ।

(आचारांग श्रु० १ अ० ५ उ० १)

५ सूत्र अने वय करी अव्यक्त तेह ने एकाकि पणो कल्पै नहीं । तथा सूत्र अने वय करी व्यक्त छै तिण ने पिण गुरु नी आज्ञा सूं एकाकि पणो कल्पै पिण आज्ञा बिना कल्पै नहीं ।

(आचारांग श्रु० १ अ० ५ उ० ४)

६ आठ गुण सहित ने एकल पडिमा योग्य कह्यो श्रद्धा में सैंठो १ देव डिगायो डिगै नहीं २ सत्यवादी ३ मेधावी (मर्यादावान) ४ बहुस्सुये (नवमा पूर्व नी तीन वस्तु नो जाण) ५ शक्तिवान ६ कलहकारी नहीं ७ धैर्यवन्त ८ उत्साह वीर्यवन्त ।

(ठाणांग ठाणे० ८)

७ साधु अने श्रावक बिहुं ने धर्म ना करणहार कह्या वलि साधु अने श्रावक ने 'सुव्रता' कह्या ।

(उववाई प्रश्न २० २१)

८ घणा साधां में पिण विकाले तथा रात्रि में एकला ने दिशा न जाणो ।

(बृहत्कल्प उ० १ बोल ४७)

९ जे ज्ञानादिक ने अर्थे गुरुवादिक नी सेवा करै ते गच्छ मध्यवर्ती साधु निपुण सखाइयो वांछे ।

(उत्तराध्ययन अ० ३२)

१० राग द्वेष ने अभावे एकलो ऊभो रहै पिण मिथ्यात्वां मे उलझो न जाय।

(उत्तराध्ययन अ० १ गा० ३३)

११ राग द्वेष ने अभावे एकलो कह्यो।

(उत्तराध्ययन अ० १ गा० १०)

१२ जे हूं राग द्वेष ने अभावे ज्ञानादि सहित एकलो विचरस्यूं इम विचारी दीक्षा लेवे।

(सूयगडांग श्रु० १ अ० ४ उ० १ गा० १)

१३ घर छांडी राग द्वेष ने अभावे एकलो विचरै।

(उत्तराध्ययन अ० १५ गा० १६)

१४ तीन मनोरथ मे चिन्तवै जे किवारे हूं एकलो थई दशविधि यति धर्म धारी विचरस्यूँ तेह नो न्याय।

१५ गुरु कह्यो—हे शिष्य! तोने एकलपणो म होज्यो।

(आचारांग श्रु० १ अ० ५ उ० ४)

उच्चार पासवणाऽधिकारः।

---

१ बड़ी नीति या लघु नीति परठी ने वस्त्र कारी पूंछे नहीं तथा पूंछता ने अनुमोदे नही, तो प्राय श्चित कह्यो।

(निशीथ उ० ४ बोल ३७)

२ उच्चार पासवण परठी काष्टादिके करी पूछ्यां प्रायश्चित ।

(निशीथ उ० ४ बोल १३८)

३ उच्चार पासवण परठी ने शुचि न लेवे अथवा तठेई उच्चार ऊपर शुचि लेवे अथवा अति दूर जाई शुचि लेवे तो प्रायश्चित आवे ।

(निशीथ उ० ४ बोल १३६ से १४१)

४ दिवसे तथा रात्रि तथा विकाले पोता ना पात्रे तथा अनेरा साधु ने पात्रे उच्चार पासवण परठवी सूर्य रो ताप न पहुंचे तिहां न्हाखे तो दण्ड आवे ।

(निशीथ उ० ३ बोल ८२)

५ धन्नो सार्थवाह विजय चोर साथे एकान्ते जाई उच्चार पासवण परठ्यो कह्यो ।

(ज्ञाता अ० २)

कल्पिताऽधिकारः ।

---

१ तीर्थङ्कर ना जेतला साधु हुइं ते ४ बुद्धिइं करी तेतला पइन्ना करे ।

(नन्दी पइन्नान, वर्णन)

२ मतिज्ञान ना दोय भेद १ श्रुत निश्रित २ अश्रुत निश्रित । तिहां जे सूत्र विना ही ४ बुद्धिइं करी सूत्र सूं मिलतो अर्थ ग्रहण करै, सूत्र विना ही बुद्धि फैलावे ते अश्रुत निश्रित मतिज्ञान नो भेद कह्यो छै । वली कह्यो पूर्वे दीठो नहीं सुण्यो नहीं ते अर्थ तत्काल ग्रहण करै ते उत्पात नी बुद्धि अश्रुत निश्रित मतिज्ञान नो भेद कह्यो ।

(साख सूत्र नन्दी)

३ जे भारत रामायणादिक मिथ्या दृष्टिना कीधा ते मिथ्या दृष्टि रे मिथ्यात्व पणे ग्रह्या अने सम्यग्दृष्टि रे सम्यक्त पणे ग्रह्या ।

(साख सूत्र नन्दी)

४ च्यार प्रकार ना काव्य कह्या १ गद्यबन्ध २ पद्य-बन्ध ३ कथाकरी ४ गायवेकरी ।

(ठाणाङ्ग ठा० ४ उ० ४)

५ गाथाइं करी वाणी करी, वाणी कथी एहवुं कह्यो ।

(उत्तराध्ययन अ० १३ गा० १२)

६ बाजा रै लारै ताल मेली गायां दण्ड कह्यो ।

(निशीथ उ० १७ बोल १४०")

अल्पपाप बहु निर्जराऽधिकारः ।

१ जो श्रावक साधु ने सचित अने असूझतो देवै तो अल्प पाप बहु निर्जरा हुवै तेह नो न्याय ।

(भगवती श० ८ उ० ६)

२ साधु ने अप्राशुक अणेषणीक आहार दीधां अल्पायुष बान्धै ।

(भगवती श० ५ उ० ६)

३ साधु रे अशुद्ध आहार अभच कह्यो ।

(भगवती श० १८ उ० १०)

४ श्रावक ने प्राशुक एषणीक ना देवणहार कह्या ।

(उववाई प्रश्न २०)

५ आनन्द श्रावक कह्यो कल्पै मुझ ने श्रमण निग्रन्थ ने प्राशुक एषणीक अशनादिक देवो ।

(उपासक दशा अ० १)

(क) आधा कर्मी अने असूझतो आहार ए निर्वद्य छै एहवो मन मे धारै तथा प्ररूपै ते बिना आलोयां मरै तो विराधक कह्यो ।

(भगवती श० ५ उ० ६)

(ख) जे श्रावक प्राशुक एषणीक अशनादिक साधु ने देई समाधि उपजावे, तो पाछो समाधि पावे ।

(भगवती श० ७ उ० १)

६ शुद्ध व्यवहार करी ने आधाकर्मी लियो निर्दोश जाणो ने तो पाप न लागै।

(सूयगडाङ्ग श्रु० २ उ० ५ गा० ८-९)

(क) वीतराग जोयर चालै तेहथी कुक्कुटादिक ना अण्डादिक जीव हणीजे तेह ने पिण पाप न लागै। पुण्य नी क्रिया लागै शुद्ध उपयोग माटै।

(भगवती श० १८ उ० ८)

(ख) साधु इर्यांई करी चालतां जीव हणीजे तो तेहने पिण पाप न लागै। हणवारो कामी नहो ते माटै।

(सूयगडाग श्रु० १ अ० ४ उ० ५)

७ अल्प (नहीं) वर्षा मे भगवान विहार कीधो।

(भगवती श० १५)

८ अल्प प्राणी बीज छै जिहां ते स्थानकै साधु ने आहार करवो।

(उत्तराध्ययन अ० १ गा० ३५)

९ अल्प प्राण बीजादिक होवे तिण स्थान कै शुद्ध करी आहार करवो।

(आचारांग श्रु २ अ० १ उ० १)

१० साधु रे अर्थे कियो उपाश्रयो भोगवे तो महा-सावद्य क्रिया लागै। दोय पक्ष रो सेवणहार कह्यो·

अने गृहस्थ पोता रे अर्थे कीधो उपाश्रयो साधु भोगवै तो एक शुद्ध पक्ष रो सेवणहार कह्यो अने अल्प सावद्य क्रिया कही ।

(आचारांग श्रु० २ अ० २ उ० २)

कपाटाऽधिकारः ।

१ किमाड़ सहित स्थानक मन करी ने पिण वांछणो नहीं ।

(उत्तराध्ययन अ० ३५)

२ थोड़ो उघाड्यो पिण किमाड़ घणो उघाड्यो हुवै तेह नें पिण "मिच्छामि दुक्कड" देवै ।

(आवश्यकअ० ४)

३ जागां न मिलै तो सूनाघरने विषे रह्यो साधु किमाड़ जड़े उघाड़े नहीं ।

(सूयगडांग श्रु० १ अ० २ उ० २ गा० १३)

४ कण्टक बोंदिया ते कांटा नी साखा करी बारणो ढक्यो हुवै तो धणी नी आज्ञा मांगी ने पूंजकर द्वार उघाड़णो ।

(आचारांग श्रु० २ अ० १ उ० ५)

५ एहवो स्थानक साधु ने रहिवो नहीं जे उपाश्रय माहीं लघु नीति तथा वडी नीति परठण री

जागा न हुवै अने गृहस्थ बारला किमाड़ जड़ता हुवे तिवारे रात्रि ने विषे बाधा पीड़तां किमाड़ खोलना पड़े ते खुला देखि मांहे तस्कर आवे बतायां न बतायां अवगुण उपजता कह्या सर्व दोष में प्रथम दोष किमाड़ खोलने को काह्यो तिण कारण साधु ने किमाड़ खोलनो पड़े एहवे स्थान में रहिवो नहीं ।

(आचारांग श्रु० २ अ० २ उ० २)

६ साध्वी ने उघाड़े बारने रहिवो नहीं किमाड़ न हुवे तो पोता नी पछेवड़ी बांधी ने रहिवो, पिण उघाड़े बारने रहिवो नहीं कल्पै शीलादि निमते किमाड़ जड़वो अने साधु ने उघाड़े बारने रहिवो कल्पै ।

(बृहत्कल्प उ० १)

॥ इति सम्पूर्णम् ॥



तपस्वी हुलासमलजी स्वामी को

चौढालियो ।

॥ दोहा ॥

शासन नायक वीर जिन, श्री गोयम गणधार ।
नमस्कार तसु करि कहूँ, तपसी गुण अधिकार ॥१॥
श्री भिक्षु पट अष्टमे, कालू गणि सिरताज ।
तास प्रसादे प्रारंभ्यां, सिद्ध होत सब काज ॥२॥
इण दुषम कलिकालमें, उत्तम जीव उदार ।
अल्प अवतरे भाग्यवश, सफल करण संसार ॥३॥
रटत स्वाम जो मन थकी, कटत तास अघरास ।
घटत दुःख भवभव तणा, पटत सुख अविनाश ॥४॥
जोड़ कला नहीं दक्ष पिण, लक्ष भक्ति वर जान ।
रक्ष करण उत्साह दिल, करत मुनि गुणगान ॥५॥

॥ ढाल पहली ॥

(गोयम गुण गेहोजी—एदेशी)

प्रात उठी नित समरिये, कांई मुनि हुलास गुण-खान । स्थिर मन निश्चे थी जप्यां, कांई पामे अविचल

स्थान। जबर तप धारीजी, जिम्या गुण भारीजो। श्रीजी ए तो पेखत स्मरण होत घनो अणगारीजी, सादृश इह यारीजी ॥१॥ उगणीसे सैंतालीस मे, सुद कार्तिक दशमी धन। सिद्ध योग सिंह लगन में, कांई परसव्यो पुत्र रत्न ॥ स्वाम० ॥ २ ॥ बैंगाणी कुल तिलक सम, कांई तात हजारीमल। मात तीजां उर उपना कांई लाडनूं पुण्य प्रबल ॥३॥ रतनचन्दजी गोलछा धी साल्‍लू संग शुभ लग्न। इकसठ माह सुद पंचमी, दम्पति सम देख मगन ॥ ४ ॥ लघु वय विरक्त पणे रह्या, कांई बाल सम्बन्ध जिम धाय। कर्म बंध भय अति घणो कांई गृहस्थ पणारे मांय ॥ ५ ॥ बैठ दुकान विक्री करै, कांई कलकत्ता बड़ा बाजार। दोस होस करी टालता, कांई जेहथी न हो अघभार ॥ ६ ॥ समयसार जाणी करी, कांई करता आंतिक बैराग। घड़ी बे घड़ी ना बहु दफा कांई आहार पाणी ना त्याग ॥७॥ लही अवसर जिन धर्म नो, कांई मर्म कहे समभाय। कर्मचारी धंगदेशना, तसु बैसाणे दिल मांय ॥८॥ चन्दणमल हुलास मल, कांई फार्म नाम पिछाण। स्वार्थमय संसारथी, रह विरक्त भाव उर आण ॥ ६ ॥ एकदा देशथी आवतां, कांई रेल दुर्घटना देख। दृढ चितधारी शीलनी, कांई आयो बैराग विशेष ॥ १० ॥ यौवन वय विहुं हर्षथी,

कांई शील कर्यो अङ्गीकार । गुप्त वर्ष पंच इक शय्या, कांई विजय सेठ ज्यूं धार ॥ ११ ॥ नारी निज प्रति बोधवा, खप कीधी वर्ष अनुमान । आप तिरै पर तारता, एह रीति पुरुष महान ॥ १२ ॥ फाग सितर एकादशी सित, निजपुर बनिता साथ । अधिक हर्ष मन आणने, कांई संयम लियो गणि हाथ ॥ १३ ॥ धर्म खोज करवा भणी, कांई जेकोबी हार्मन जाण । आयो जर्मन देशथी, दीक्षा देखी हर्षाण ॥ १४ ॥ बहोत्तर साल वैशाख मे, कांई बीदासर सुखदाय । सन्थारो घड़ी एक नो, सती मालू स्वर्ग सिधाय ॥ १५ ॥ चरण रयण भल पालता, कांई पंच सुमति धर खन्त । मन वच काया गोपता, कांई धरी उपशम चित्त शान्त ॥ १६ ॥ प्रथम ढाल दीक्षा लगे, कांई कही हर्ष मन ल्याय । आगे तप नी वारता, कांई सुनियां चित्त हुलसाय ॥ १७ ॥

॥ दोहा ॥

चारित्र सोलाह साल लग, पाल्यो अधिक वैराग ।
शूरवीर सिंह पर तसु, सेवे जे महाभाग्य ॥१॥
चातुर मास अरु तप तणो, दूजी ढाल विषेह ।
संक्षेपे ते बरणवूं, तप कठिन कर्यो गुणगेह ॥२॥

॥ ढाल दूजी ॥

(देशी जाडा के गीतनी)

प्रथम चौमासो इकोतरे, कांई गणपति साथ सुजाण। द्वितीयो चौमासो बहोतरे, कांई डूंगरगढ़ पहिचाण ॥ जो तपधारी मुनि नित्य वंदिये, जिम पामै शिव सुखसार ॥ १ ॥ बीकानेर तीजो कियो, उदैपुर चहोत्तर साल। पञ्चम पिच्चोत्तर साल में, कांई रीणी भाग्य विशाल ॥ २ ॥ शहर सिरदार छिहोत्तरे, तप सेंतीस दिन शिव अंश। वेदन सही समभाव सूं कांई नाश करण अघ-वंश ॥३॥ साल सतंतर जोधपुर, कांई तप दिन पैंतालीस। सौम्य सूरत मनमोहनी, जाणे जीत्या राग ने रीस ॥ ४ ॥ बीकानेर पुनः अठन्तरै, कांई लीहो उणयासी साल। चतुरमास किया चूंप सूं सुवनीत महा गुण माल ॥५॥ असी आमेट बिराजिया, कांई वर्षा ऋतु सुखकार। इकसठ दिन तप आदस्यो, भवी पाम्या तन मन प्यार ॥ ६ ॥ इकासी वर्षा ऋतु, कांई बगड़ी पावन कीध। तप दिन इकतीस ठाय के, कांई जगमांही जश लीध ॥ ७ ॥ साल बयासी मुनि तणो, कांई चातुरगढ़ चौमास। सिंघाड़ो गणिवर कियो, कांई तप जप अधिक विमास ॥ ८ ॥ भाग्यवली सुजाण सन, पुनि चातुरमास उदार। धर्मोद्यम हुवो अति

घणो, निर्लेप कमल जिम धार ॥ ६ ॥ साल-चौरासी खेरवे, कांई पुरजन अधिक सौभाग्य । रामनवमी दिन दूसरे, शुरू लघुसिंह अधिक वैराग्य ॥१०॥ सात दिवस षट मास लग, कांई पारणा तेतीस जाण । चढत एक थी नव लगे, फिर पाछो एक पिछाण ॥ ११ ॥ साल पीचासी घाणेराव में, कांई अंतरंग तपस्या ध्यान । तीजो पाटो हुई दूसरो, कांई पारणो लेप विहान ॥ १२ ॥ धर्म चौमासो छियासिये, कांई बगड़ी पुण्य अधिकाय। चौथो पाटो लघु सिंह तणो, कांई पारणो आम्बील थाय ॥१३॥ फागुन शुक्ला छट्ठने, कांई मुसाले प्रारम्भ । जिन शासन दीपावता, सहु पेखत पामै अचम्भ ॥१४॥ प्रथम चौमासो गयि सगे, कांई नव नथमलजी साथ । सिरेमलजी संग उण्यासीये, मन्त्र आप तणा विख्यात ॥१५॥ उपवास छः सौ आसरे, कांई बेला अड़सठ जाण। तेला पेंतीस बीस च्यार दिन पंचोला सतरह पहिचाण ॥१६॥ षट दिन पन्द्रह मन थकी, किया सात चतुरदश वार। आठ किया द्वादश लगे, नव सात तजी तन सार ॥१७॥ दोय बार दश थोकड़ा, मुनि इग्यारह बारह तेर। चवदह पन्द्रह सोलह किया, मुनि प्रत्येक एक एक वेर॥१८॥ इकतीस सैंतीस तप तप्यो, बलि पेंतालीस उदार। इकसठ किया उचरङ्ग सूं, तेह समय ऊपर अधिकार ॥१६॥

सोलहसो अठावीस दिन, तप कीधो सरस विमास। इद वैरागी पेख जन, कहै धन धन स्वाम हुलास ॥ २० ॥
इकासो थी सो काल मे, कांई एक पखेवड़ी जाण। कीता दिन आतापना, लही करवा अघदल हाण ॥२१॥
दूजी ढाल विषे कह्यो, तप कठिन कियो धर प्रेम। इढ़ व्रती धरती जिस्या, तसु जबर अखण्डित नेम ॥२२॥

॥ दोहा ॥

वेदन समभावे सही, वले चढ़ता परिणाम।
स्वर्ग सिधाया स्वामजी, आखूं तेह तमाम ॥

॥ ढाल तीजी ॥

(देशी—करवे के गीतनी)

बगड़ी जन पूरब पुण्य जी, कांई सुरतरु सम ऋषि-राय। सेवत लेवत धन भलोजी, जे परभव में सुखदाय ॥ जी हो तपधारी मुनि नित वंदियांजी, कांई उभय भवे सुखयाय ॥ १ ॥ वागत वयण अमी समाजी, कांई सूत्र भणे मन कोड। सुणे इलुकर्मी जीवड़ाजी, कांई तेहने जग कुण होड ॥२॥ चौथी पाटी लघुसिंह तणीजी, कांई तप अति कठिन पिछाण। प्रेमधरी पहिला करीजी, कांई जिन कल्पी सम जाण ॥ ३ ॥ पांच मास दिन

पांचमे जी, कांई पारणा तेवीस आय। मिलिया द्रव दश सूजताजी, लहै एक द्रव मुनिराय ॥ ४ ॥ चिणा सेक्योड़ा होला गहूंजी, कांई भीजी चिणा की दाल। घाट मकी खिच बाजरीजी, फुन चावल मूंग मिसाल ॥ ५ ॥ फलका जौ अरु गेहूं तणाजी, कांई ढोकला थूली निहाल। एह दश द्रव मिल्या तकाजी, लिया दोषण जुग कर टाल ॥ ६ ॥ सावन शुक्ला चौथ ने जी, कांई पारणो पांच नो आय। राते गर्भ प्रयोग थी जी, कांई वेदन उत्पती थाय ॥७॥ बहुल पणे अचेतनाजी, कांई दोय दिनां रे मांय। लहै चेतना स्वाम भणेजी, मम औषधि नाहिं देवाय ॥ ८ ॥ पूरव पुण्य उदय थकी जी, मुझ छठ दिन दर्शन थाय। अभिलाषा बहु दिन तणीजी, थई पूरण चित्त विकसाय ॥९॥ स्वाम सुपार्श्व कह्यां थकांजी, स्वामी मुझ वन्दणा स्वीकार। पूछै गण-पति गण तणाजी, कांई प्रेम धरी समाचार ॥ १० ॥ कहै सिह तप दृढ माननी जी, कांई कारण चाह आन्तरिक। पिण ते नही दिसै होवतो जी, कांई मुझ मन एह अधिक ॥ ११ ॥ भावे बहु विध भावनाजी, कांई एकान्त परभव दिष्ट। औषधि ना लहै दृढ मनेजी, कांई जपत जाप निज इष्ट ॥ १२ ॥ कछु साता पिण दूसरीजी, कांई कारण अधिको थाय। पिण साहसिक

पणो घणोजी, कांई देखत जन मन भाय ॥ १३ ॥ सावन सुद एकादशी जी, कांई पारणो षट दिन जाण। आहार लेत तन वेदनाजी, देखी कीध च्यार पच्चखाण ॥ १४ ॥ बारस दिन उग्यां पहलेजी, कह्यो पांचीरामजी ने सोय। भाया प्रते पूछो तुमेजी, एह उगसी तिथी कुण होय ॥ १५ ॥ दिन उदय सहु जन प्रतेजी, स्वामी दर्श दिये हितकाज। नरनारी सहु हर्ष थी जी, कांई भेंव्या मुनि गुण जिहाज ॥ १६ ॥ सावन सुक्ला द्वादशी जी, बजे प्रातः सात अनुमान। जन्म सिंह लग्न आयां थकांजी, स्वामी पहुंता स्वर्ग विमान ॥ १७ ॥ नागरिक जैन स्व परमतीजी, कांई सहु मुख जय जयकार। एहवो तपसी दुर्लभेजी, कांई उपजणो पंचम आर ॥ १८॥ माण्डो खण्ड इकसठ बणीजी कांई जाणो देव विमान। राज लवाज सहु सज थयाजी, जन पच्चीसो अनुमान ॥ १९ ॥ च्यार बजे शव जुलसनेजी, कांई देखत बहु-जन वृन्द। दाग चन्दण घृत खोपराजी, कांई संसा-रिक एह द्वन्द ॥२०॥ तुम गुण प्रतिबिम्ब सहु तणोजी, कांई अंकित दिल उरमान। पण्डित मरण थयो भलो जी, एह तीजी ढाल मे जान ॥ २१ ॥

॥ दोहा ॥

सुरगुरु रस ना सहस्र ते, मुनि गुण पार न पाय ।
सुभ भक्ति सारु कहूं, मन अभिलाष पुराय ॥१॥

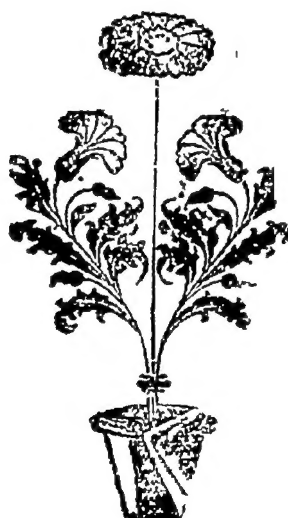
॥ ढाल चौथी ॥

(देशी – म्हारी सासुजी रे पांच पुत्र कांई दोय देवर दोय जेठ)

विघ्न हरण मंगल करण, कांई स्वाम शरण हितकार । भवदधि तारण पोत सम, कांई वंछित फल दातारजी । तपधारी मुनिवर वारता सुणियां चित्त आनन्द थाय॥ १॥ तपस्या घोर पूरव भवे कियां, एहवी प्रकृति थाय । समय समय अघ निर्जरै, वहु कर्म द्वार रुंधायजी ॥ २ ॥ अध्यवसाय उज्वल घणा, रह्या ए तप कठिन निरन्त । परिमल गन्ध तणी परेजी शुद्ध भाव भला महकन्त ॥ ३ ॥ उच्च अध्यात्मिक भाव जे, तुम देखे निजर सहाय । भविजन स्मरण प्रात ही, उर नमण करण दिल थाय ॥ ४ ॥ वैरागी जम्बु जिस्या, कहणी न होवे अयुक्त । मेरो दृढ यह धारणा, होसी शीघ्र कर्म थी मुक्त ॥ ५ ॥ तप तन अस्त्र धारके, कांई छिम्यां खड्ग कर आन । कर्म कंस निकन्दवा, कांई केशव जेम प्रधान ॥ ६ ॥ इन्द्रिय दमन जोगे करी

भावे जग विरला शूर। व्रत रत्न दिव्य राखवा, रह्या कर्म रंज थी दूर॥ ७॥ वैराग्य मय उद्यान मे, कांई विचरया मुनि शुभ ध्यान। सज्झाय ध्यान सरोवरे, कांई झुल्या महामतिवान॥ ८॥ विनय विवेक विचारना, कांई आप तणो सिरोकार। पाल्यो अधिक वैराग सूं जी, कांई व्रतराज ब्रह्मचार॥ ९॥ आगम अर्थ नी धारणा, बहु वांचण मन आन्तरिक। जाण्या सार सुख मुक्तना जी, कांई अनित्य जाण्या पुद्गलीक॥१०॥ वचन रचन ईर्या विषे, कांई वर तीखो उपयोग। विगय बहुल पणे छोड़ताजी, कांई काटण भवभव रोग॥ ११॥ ध्यावे जे तुम अहो निशाजी, कांई तेह परबल पुण्य जोग। चूरण चिन्तामणि समोजी कांई पूरण आश मनोग्य॥ १२॥ श्रीजिन वीर बखाणियो, कांई धन धन्नो अणगार। गणि गुण तुम अनुमोदना, कांई करी मन अधिक उदार॥ १३॥ आनन्द करण शरण भलो, तुम जीवन पर उपगार। मन्त्राक्षर जिम नाम तुम, कांई भगत जने सुखकार॥ १४॥ बालक मन जिम मात में, कांई लोलुप धन अभिलाष। पतिव्रता पिउ मन बसे, जिम स्वाम नाम उरवास॥ १५॥ चातक स्वाती बून्द नो, इच्छुक इठ और न मन। 'स्मरण पल पल ध्यावता, जिम कुंजर कदली बन॥ १६॥ देशी

च्यार कहि भलीजी. कांई चाहत आत एक चाल। शहर कलकत्ता मांयनेजी, कांई ए कही चौथी ढाल ॥ १७ ॥ पोह सुद दूज छियासिये, धुर तीस अंग्रेजी आज। सरस हर्ष गुण गाविया तुम मामाङ्ग नगराज ॥ २१ ॥



॥ धन्ना ऋषि की सज्झाय । ॥

श्रीजिनवाणी रे धन्ना, अमिय समाणी मोरा नन्दन । मनड़े तो मानी रे नन्दन तांहरे ॥ १ ॥ तूं अतहि वैरागी रे धन्ना, धरमनो रागी मोरा नन्दन । म्हांरो तो मनड़ो रे किम परचावसूं ॥ २ ॥ दश दिशि दीसे रे धन्ना, तो बिन सूनी मोरा नन्दन । अनुमति देतां रे जीभ वहे नहीं ॥ ३ ॥ बत्तीस नारी हो धन्ना, अतहि पियारी मो० । वाणी तो बोले रे मधुर सुहामणी ॥४॥ बालक तो रमणी रे धन्ना, वय पिण तरुणी मो० । गजगति चाले रे चाल सुहामणी ॥ ५ ॥ ए घर मन्दिर हो धन्ना, ए सुख सज्या, मो० । कोड़ बत्तीस धननो तूं धणी ॥ ६ ॥ ए धन माणो रे धन्ना, वय पिण जाणो, मो० । भोगवी लेज्यो रे भोग सुहामणा ॥ ७ ॥ व्रत अति दोहिलो रे धन्ना, नहिं छे सोहिलो, मो० । सुगम नहीं छे रे साध कहावणो ॥ ८ ॥ घर २ नी भिक्षा हो धन्ना, गुरु तणी शिक्षा, मो० । कहणी रे रहणी नहीं छे सारखी ॥ ९ ॥ इक वार सुणिये हो धन्ना, आगम भणिये मो० । जिनवर जाणो हो दुक्कर जोग छे ॥१०॥

वनवासे रहणा हो धन्ना, परीषह सहणा, मो० । कोमल केशां रे लोच करावणो ॥ ११ ॥ साच तें भाख्यो हे अम्मा, झूठ न दाख्यो मोरी अम्मा । दुक्कर मारग जननी दाखियो ॥ १२ ॥ सुख अभिलाषी हे अम्मा, झूठ न आखो मोरी अम्मा । कायर मारग जननी दाखियो ॥ १३ ॥ ए जग स्वारथी हे अम्मा, नहीं परमारथि मोरी अम्मा, वीर वखाण्यो परिषदा सहु सुण्यो ॥ १४ ॥ मैं इम जाण्यो हे अम्मा, वीर वखाण्यो मोरी अम्मा, ए धन जोवन आयु थिर नहीं ॥ १५ ॥ अनुमति दीजै हे अम्मा, ढील न कीजै मोरी अम्मा, जो खिण जावै सो फिर आवै नहीं ॥ १६ ॥ अनुमति आपी हो अम्मा, जीव सुख पायो मोरी अम्मा, संजम लीधो रे मनमां गहगही ॥ १७ ॥ छट्ठ २ पारण हे अम्मा, विगय निवारण मोरी अम्मा, वीर वखाण्यो सुर नर आगलै ॥ १८ ॥ सुख संयम पालै हे अम्मा, दूषण टालै मोरी अम्मा, अंग इग्यारै अरथ रूड़ा भणै ॥ १६ ॥ सयम पाल्यो हे अम्मा, नव पखवाड़े मोरी अम्मा, मास सथारै सरवारथ सिद्ध लह्यो ॥ २० ॥

॥ समाप्त ॥
